मराठों के अधीन गढ़ा-मण्डला क्षेत्र
(1780 – 1818 ई०)

डा० हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर की

पीएच्० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबंध

प्रस्तुतकर्ता

अनिल कुमार सिंह

शोध निर्देशक

डा० सुरेश मिश्र

प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, इतिहास विभाग,
श्री नीलकण्ठेश्वर शास. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
खण्डवा (म. प्र.)

इतिहास विभाग

शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म. प्र.)

1991

: आमुख :

नर्मदा की ऊपरी घाटी में मध्य काल में एक लम्बे समय तक गढ़ा-मण्डला के गौंड़ राजवंश की सत्ता रही है । जब सन् 1780 ई. में मराठों के हाथों इनका पतन हुआ तो इनका राज्य पर्याप्त क्षेत्र में शेष था । वर्तमान मण्डला, जबलपुर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद एवं बालाघाट जिलों में इनकी सत्ता तब भी विद्यमान थी । परन्तु सन् 1780 ई. में सागर स्थित पेशवा की सेनाओं ने गढ़ा-मण्डला राज्य को विजित किया तो यही क्षेत्र उनके अधिकार में आ गया । सन् 1780 ई. से सन् 1799 ई. तक इस क्षेत्र पर पेशवा की सत्ता रही । इसी बीच नागपुर का भौंसला शासक अपने पुराने सन्दर्भों को लेकर इस क्षेत्र पर अपना अधिकार जताता रहा और पूना दरबार से यह क्षेत्र मांगता रहा । अन्त में सन् 1797 ई. में पूना दरबार ने नागपुर के भौंसला शासक को इस प्रदेश का अधिकार-पत्र दे दिया, किन्तु फिर भी सागर के मराठों द्वारा यह प्रदेश भौंसला को हस्तान्तरित नहीं किया गया । अन्तत: भौंसला ने शक्तिपूर्वक सैन्यबल द्वारा इस प्रदेश पर सन् 1799 ई. में पूर्णत: अधिकार कर लिया । सन् 1799 ई. से सन् 1818 ई. तक यह प्रदेश भौंसला शासकों के अधीन रहा । सन् 1818 ई. में इस क्षेत्र पर अंग्रेजों ने अधिकार करके इसे ` सागर नर्मदा प्रदेश ` में शामिल कर लिया ।

इस क्षेत्र पर 38 वर्षों के मराठा आधिपत्य के सम्बन्ध में अभी तक कोई शोध कार्य नहीं हुआ था । इसके पहिले एवं बाद के काल पर

शोध कार्य अवश्य हुए हैं । इसलिए इस क्षेत्र के समग्र इतिहास के लिए 38 वर्षों के इस अन्तराल को भरना आवश्यक था । इसी उद्देश्य से यह शोध प्रबन्ध पूर्ण किया गया है ।

इस क्षेत्र में पेशवा एवं भोंसला के जो प्रतिनिधि विद्यमान थे, वे अपने मुख्यालयों क्रमश: पूना एवं नागपुर को अपने प्रतिवेदन भेजा करते थे, उन्हीं के आधार पर तथा कुछ अप्रकाशित अखबारात जिनमें भोंसला शासन की कार्य प्रणाली झलकती है एवं समकालीन एलफिंस्टन, जैंकिन्स एवं अन्य मराठा सरदारों के विवरणों एवं इतिहासविदों की कृतियों तथा नवीन सामग्री संस्कृत, मराठी, हिन्दी, अंग्रेजी और फारसी स्रोतों के प्रयोग से इस क्षेत्र के मराठा कालीन इतिहास पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है, तथापि इस क्षेत्र की तत्कालीन समाज एवं संस्कृति पर अधिक प्रमाणिक जानकारी नहीं उपलब्ध हो सकी है जिसमें प्रमाणों का अभाव सर्वथा खला है ।

मैं इस शोध प्रबन्ध की पूर्णता का दावा तो नहीं करता, क्योंकि त्रुटियां मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति हैं तथापि यदि यह गढ़ा-मण्डला राज्य के मराठा कालीन इतिहास के जिज्ञासुओं को अंश मात्र भी उपयोगी लगती है, तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा ।

इस प्रबन्ध को पूर्ण करने में श्री बाबूलाल झा एवं श्री रामलाल जी, टी.सी.एम. - । मध्य रेल्वे, इटारसी ने मराठी सामग्री का अनुवाद कर मुझे उपकृत किया है मैं इसके लिए उनका हार्दिक आभारी हूं ।

दिनांक : 21-3-1991.

(अनिल कुमार सिंह)

: आभार :

आभार श्रृंखला का प्रथम पुष्प मैं अपने निर्देशक गुरूवर, डा. सुरेश मिश्र को समर्पित करता हूं, जिनके मार्ग-दर्शन, सहयोग एवं वात्सल्य से यह शोध प्रबन्ध पूर्ण कर सका हूं।

श्रद्धा सुमन का अगला पुष्प महान इतिहासविद् स्व. महाराज कुमार डा. रघुबीर सिंह, सीतामऊ को समर्पित है जिन्होंने अपनी अत्यधिक व्यस्तताओं के बाद भी लगभग 18 माह तक मुझे अपना अमूल्य सहयोग एवं आशीर्वाद प्रदान किया था।

अपने गुरू प्रो. कैलाशचन्द्र सचान का मैं सदैव ऋणी हूं जिनकी प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से मैंने इतिहास पढ़ना सीखा था।

इसी श्रृंखला में डा. मा.रा. अन्धारे, नागपुर का हार्दिक आभारी हूं जिन्होंने नागपुर प्रवास में मुझे शोध सामग्री संकलन के साथ ही सभी प्रकार से अपना सहयोग प्रदान किया, साथ ही पुणे में अमूल्य सहयोग प्रदान करने के लिए डा. म.रा. कंटक एवं डा. विजय कुमार सिंह, डेकन कालेज, पुणे का आभारी हूं।

इनके अतिरिक्त मैं अपने मित्र डा. प्रभाकर गद्रे, व्याख्याता, इतिहास, आमगांव, प्रो. जगदीश सुचिक, खिड़किया, श्री परबिन्दर सिंह छाबड़ा, श्री विनय कुमार चौधरी, श्री प्रवीण कुमार वर्मा, डा. एल.एल. चौधरी, श्रीमती झा,

तथा श्रीमती एवं श्री राम कुमार दीवान का हार्दिक आभारी हूं, जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने में किसी भी रूप में मुझे अपना सहयोग प्रदान किया है। इसके साथ ही इस ग्रन्थ में सन्दर्भित कृतियों के इतिहासकार विद्वान, लेखक एवं समीक्षकों का कृतज्ञ हूं तथा शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद, डाक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ (मालवा), एलाइनेशन आफिस, पुणे, डेकन कालेज, पोस्ट ग्रेजुएट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पुणे भारत इतिहास संशोधक मण्डल, पुणे नागपुर महाविद्यालय ग्रन्थालय, नागपुर, नागपुर विश्वविद्यालय ग्रन्थालय, नागपुर, विदर्भ इतिहास संशोधन मण्डल, नागपुर, सेन्ट्रल रिकार्ड्स रूम, नागपुर, नेशनल आर्काइव्स, नई दिल्ली, भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली, नेशनल आर्काइव्स ब्रान्च, भोपाल, स्टेट आर्काइव्स एवं गजेटियर विभाग, भोपाल, परिवार के सभी सदस्यों का आभारी हूं, जिन्होंने मुझे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपना सहयोग प्रदान किया।

मैं अपनी जननी श्रीमती कौशिल्या देवी, जनक श्री कमला प्रसाद सिंह, ताऊ श्री मंगला प्रसाद सिंह, अग्रज श्री चन्द्रभान सिंह एवं श्री अरविन्द कुमार सिंह का ऋणी हूं, जिनके वात्सल्य एवं आशीर्वाद से ही यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने का साहस कर सका हूं।

और अब आखिर में, किन्तु अन्त में नहीं, मैं अपनी प्रेरणादायी जीवन संगिनी श्रीमती गीता सिंह का जीवन पर्यन्त ऋणी हूं, जिन्होंने मुझे अपनी पारिवारिक समस्याओं एवं परेशानियों से मुक्त रखते हुए अपने अमूल्य सहयोग सहित उत्साह एवं आत्मबल प्रदान किया है।

अनिल कुमार सिंह

(अनिल कुमार सिंह)

अनुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

परिशिष्ट :

=:: o : o : o ::=

संक्षिप्त नाम

इंस्क्रीपशन्स सी•पी•एण्ड बरार	= दि डिस्क्रीप्टीव लिस्ट आफ दि इंस्क्रीपशन्स इन दि सी•पी•एण्ड बरार — हीरालाल
इ•हि•क्वा•	= इंडियन हिस्टारिकल क्वार्टर्ली
ए•ई•	= एपिग्राफिका इंडिका
का•इ•ई•	= कार्पस इंस्क्रीपशन्स इंडिकेरम
कनिंघम	= आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इंडिया
गढ़ा के गोंड राज्य	= गढ़ा के गोंड राज्य का उत्थान और पतन
गो•बु•के•	: गोविन्द बुन्देलांची कैफियत
ज•ए•सो•बं•	= जर्नल आफ दि एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल
जेन्किन्स रिपोर्ट	= रिपोर्ट आन दि टेरिटरीज आफ दि राजा आफ दि नागपुर
जि•गजे•	= जिला गजेटियर
दि लास्ट फेज	= भोंसला आफ नागपुर : दि लास्ट फेज
ना•भो•इ•	= नागपूरकर भोंसल्यांचा इतिहास
ना•अ•	= नागपुर अफेयर्स
ना•रे•रि•	= सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स
ना•भो•ब•	= नागपूरकर भोंसल्यांची बखर
पी•आर•सी•	= पूना रेसीडेन्सी कारेस्पान्डेंस

ब्रिटिश रिलेशान्स	= ब्रिटिश रिलेशान्स विद् दि नागपुर स्टेट्स इन दि 18 सेन्चुरी
वि•सं•मं•	= विदर्भ संशोधन मंडल वार्षिकी
भ•पं•ब•	= भवानी पंडिताची बखर
मध्य प्रदेश का इतिहास	= मध्य प्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले
म•इ•सा•	= मराठांच्या इतिहासांची साधने पत्रे यादी वगैरह
म•न•इ•	= मराठों का नवीन इतिहास भाग - 1 और 2 तथा 3
रघुजी भोंसले	= रघुजी भोंसले दूसरे यांची पत्रें
एस•पी•डी•	= सेलेक्शान्स फ्राम दि पेशवा दफ्तर
सी•पी•सी•	= कैलेन्डर आफ पर्शियन कारेस्पान्डेंस
श्री शुक्ल, इ•खं•	= श्री रविशंकर शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ, इतिहास खण्ड

अध्याय 1

अध्याय - 1 गढ़ा मण्डला क्षेत्र

1. परिचय :-

गढ़ा मण्डला, जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है कि गढ़ा और मण्डला दो अलग-अलग स्थानों के परिचायक हैं और दोनों ही स्थान एक सदी में महत्वपूर्ण गढ़ रहे हैं। निसन्देह गढ़ा मण्डला नाम इतिहास के पन्नों पर क्रमिक परिवर्तन एवं विकास के फलस्वरूप अंकित हुआ है। गढ़ा से मण्डला लगभग 100 कि॰मी॰ दूर दक्षिण में नर्मदा के तट पर स्थित है, जबकि गढ़ा वर्तमान जबलपुर शहर से लगा हुआ एक उपशहर है।

मध्यकाल में गढ़ा गोंड शासनकाल में लम्बे समय तक गोंड शासकों की राजधानी रहा है। सोलहवीं सदी में यह एक विशाल शहर था[1] और इसी नाम पर गोंड राजाओं के राज्य का नाम "गढ़ा राज्य" हुआ। कालान्तर में सर्वाधिक प्रचलन "गढ़ा" संज्ञा का हुआ। समकालीन ऐतिहासिक ग्रन्थ अकबरनामा, जहाँगीरनामा एवं मासिर - ई॰ आलमगीरी में इसका उल्लेख मिलता है[2], साथ ही वीर वाजपेयी की प्रेम प्रदीपका, गजेन्द्र मोक्ष, गढेशनृप वर्णनम् एवं गढेशनृप वर्णनम् श्लोका:[3] में भी

---

1. अकबरनामा (अनु॰बेवरिज) जिल्द 2, पृ॰ 323, 24 और 328
   दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता, पृ॰ 484-86

2. अकबरनामा (अनु॰ बेवरिज) जिल्द, पृ॰ 323-24
   जहाँगीरनामा (हिन्दी अनु॰ ब्रजरत्नदास) पृ॰ 442, 451
   जहाँगीरनामा (हिन्दी अनु॰मुं॰देवी प्रसाद) पृ॰ 266, 272
   मासिर-ई-आलमगिरी पृ॰ 216, 239 एवं 250

3. गजेन्द्र मोक्ष ; करमबेलकर, जर्नल आफ एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल, जिल्द 2, 1153, पृ॰ 137-44
   गढेशनृप वर्णनम्: भावे, नागपुर यूनिवर्सिटी जर्नल, 6, 1940 पृ॰ 181-201
   गढेशनृप वर्णनम श्लोका: भावे, एनल्स आफ दि भंडारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट 28, पृ॰ 247, 280

इसी नाम का प्रयोग किया गया है। सोलहवीं सदी में इसे संयुक्त नाम प्राप्त हुआ और तब इसे "गढ़ा कटंगा"[1] की संज्ञा प्रदान की गयी। "गढ़ा कटंगा" राज्य का नाम, एक प्रमुख नगर "गढ़ा" और एक ग्राम "कटंगा" के नाम पर पड़ा, जो अब भी जबलपुर नगर से लगभग चार मील की दूरी पर विद्यमान है।[2] इसे स्पष्ट करते हुए अबुलफजल ने लिखा है कि गढ़ा एक बड़ा शहर है, कटंगा एक ग्राम है और इस दोहरे नाम से ही इस प्रदेश को जाना जाता है।[3] वास्तव में कटंगा गढ़ा के निकट एक ग्राम था जो अब उजड़ चुका है।[4] इसे गढ़ा कटंगा किस अभिप्राय से कहा गया इसका स्पष्टीकरण हमें प्राप्त नहीं होता है। एक अनुमान अवश्य ही लगाया जाता है कि "गढ़ा" जो कि तत्कालीन राजधानी था, अपनी आबादी बढ़ने के फलस्वरूप निकटस्थ ग्राम "कटंगा" तक विकसित हुआ हो और इसे संयुक्त नाम "गढ़ा कटंगा" से सम्बोधित किया गया होगा। इस प्रकार इसे "गढ़ा कटंगा" कहा जाने लगा गया होगा।

मध्यकाल में ही नाम परिवर्तन की एक कड़ी प्राप्त होती है। "गढ़ा कटंगा" के साथ ही इसे कहीं-कहीं "गढ़ा-मण्डला" भी कहा जाता था। सम्भवतः सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यह "गढ़ा मण्डला" के

---

1. अकबरनामा (अनु. बेवरिज) जिल्द 2, पृ. 323-24
2. जबलपुर जि.ग. 1969, पृ. 74 फु.नो.8
3. अकबरनामा (अनु. बेवरिज) जिल्द - 2, पृ. 323-24
4. नेम्बार्ड इसे गढ़ा से तीन मील दूर एक ग्राम मानता है। यही उचित भी प्रतीत होता है। जबलपुर डिस्ट्रिक्ट सेटलमेन्ट रिपोर्ट, 1869, कंडिका-14, हीरालाल, जबलपुर ज्योति, पृ. 28-29

   कुछ इतिहासकार कटंगा, जबलपुर से 23 मी. उत्तर में स्थित कटंगी को मानते है। यह उचित प्रतीत नहीं होता है, जैसे हेग, कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इंडिया.

नाम से प्रसिद्ध हुआ ।[1] जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि मण्डला गढ़ा से लगभग 100 कि॰मी॰ दक्षिण मे नर्मदा नदी के तट पर स्थित है । यह प्रमुख गोंड़ शासक संग्रामशाह के 52 गढ़ों में से एक प्रमुख गढ़ था, जो सिंगौरगढ़, गढ़ा और चौरागढ़ की तरह एक प्रमुख सैनिक केन्द्र था।[2] कालान्तर में गोंड शासक हृदयशाह ने मण्डला के निकट स्थित रामनगर को अपनी राजधानी बनायी ।[3] उसके पश्चात् नरेन्द्रशाह ने अपनी राजधानी रामनगर से स्थानान्तरित कर मण्डला में स्थापित कर लिया।[4] जिसके फलस्वरूप मण्डला का महत्व बढ़ने लगा, बाद में इस क्षेत्र पर जब मराठों का अधिकार हुआ तो उन्होंने भी अपने शासनकाल में इस प्रदेश के नाम में कोई परिवर्तन नहीं किया तथा अंग्रेजों द्वारा "नर्मदा सागर प्रदेश" बनाये जाने तक यह प्रदेश "गढ़ा मण्डला" के नाम से ही विख्यात था । निःसन्देह मराठी एवं अंग्रेजी ग्रन्थो में इसी "गढ़ा मण्डला" संज्ञा का प्रयोग होता रहा ।[5]

1· जबलपुर जि॰ग॰, 1969, पृ॰ 74, फु॰नो॰ 8
2· श्रीरवि शंकर शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ, इतिहास खण्ड, पृ॰ 41
3· गजेन्द्रमोक्ष, करमवेलकर, ज॰ए॰सो॰ब॰, 19 जिल्द 2, 1953 पृ॰ 142
4· श्री शुक्ल, इ॰ख॰, पृ॰ 52
5· श्री शेजवलकर : नागपुर अफेयर्स, जिल्द 1 और 2
गुप्ते का॰वि॰ : नागपूरकर भोंसल्यांची बखर
काले या॰मा॰ : नागपूरकर भोंसल्यांची इतिहास
रविशंकर शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ
सिन्हा एच॰एम॰ : सेलेक्शन फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स
जिल्द 1,2,3, और 4
विल्स सी॰यू॰ : ब्रिटिश रिलेशन विद् दि नागपुर स्टेटस इन दि 18 वीं सेन्चुरी
फारेस्ट (सं॰) : सेलेक्शन फ्राम दि स्टेट पेपर्स आफ दि गवर्नर जनरल आफ जनरल आफ इंडिया

इनके अतिरिक्त इंडिया आफिस, लन्दन में सुरक्षित रघुजी भोंसले द्वितीय के पत्रों तथा ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रतिवेदनों एवं दस्तावेजों में भी गढ़ा मण्डला संज्ञा ही प्रयुक्त की जाती थी ।

इस प्रकार "गढ़ा मण्डला" त्रिपुरी से डाहल मण्डल तथा गढ़ा से "गढ़ा कटंगा" तक के क्रमिक विकास एवं परिवर्तन के परिणाम स्वरूप निर्मित हुआ, जिस क्षेत्र पर अनेक वंश के राजाओं के साथ ही लगभग चार दशक तक मराठे भी शासन करने में सफल रहे । यह क्षेत्र किन-किन शासकों के अधीन रहा, इसका विस्तार पूर्वक विर्णन आगामी अध्यायों में किया जायेगा ।

2. विस्तार :-

गढ़ा मण्डला क्षेत्र के प्रादेशिक विस्तार को लेकर भी इतिहास-विदों में विभिन्न मत हैं । तथापित यह निश्चित है कि भिन्न-भिन्न गोंड शासकों के शासन काल में इसका प्रादेशिक विस्तार भी भिन्न - भिन्न रहा है । यदि हम इसके प्राचीन विस्तान की ओर न जायें तो ऐसा प्रतीत होता है कि प्रमुख गोंड शासक संग्राम शाह के समय में जबकि यह प्रदेश मात्र "गढ़ा" [1] नाम से विख्यात था, सर्वाधिक विस्तृत था, किन्तु संग्रामशाह के राज्य का विस्तार कहाँ तक था इसका कोई निश्चित समकालीन प्रमाण उपलब्ध नहीं है[2], केवल "रामनगर शिलालेख" एवं "गढेशनृप वर्णनम्" से यह ज्ञात होता है कि संग्रामशाह के अधीन 52 गढ़ थे ।[3] दूसरी तरफ अपनी कृति "गढ़ा मण्डला के राजाओं का इतिहास" में स्लीमेन ने 52 गढ़ो की सूची दी है[4], जिसकी प्रमाणिकता

---

1. डा. सुरेश मिश्र, गढ़ा के गोंड राज्य का उत्थान और पतन 1985 पृ. 11
2. वही पृ. 28
3. रामनगर शिलालेख, श्लोक 15, गढेशनृप वर्णनम्, श्लोक 28, पृ. 195
4. ज.ए.सो.बं. 68, 1837, पृ. 645-46

को विल्स[1] ने सत्यापित करने का प्रयत्न किया है, किन्तु इन गढ़ो के गहन छानबीन से यह उचित प्रतीत नहीं होते हैं। इनके पूर्ण विस्तार का ऐसा ही वर्णन अबुलफज़ल, बदायूँनी, एवं मलिक मुहम्मद जायसी ने भी किया है। डा॰ सुरेश मिश्र का मत है कि अबुलफजल ने रानी दुर्गावती के समय में गढ़ा कटंगा के जिस विस्तार का वर्णन किया है वही संग्रामशाह के समय में भी रहा होगा।[2] निःसन्देह उनका मत अधिक उचित प्रतीत होता है, क्योंकि अबुलफजल अपने ग्रन्थ में स्पष्टरूप से यह लिखता है कि "पूर्वी हिस्सा रतनपुर से और पश्चिमी हिस्सा रायसेन से मिला हुआ है। इसके उत्तर में पन्ना तथा दक्षिण में दक्खिन[3] है इसकी पूर्व पश्चिम की लम्बाई 150 कोस (480 कि॰मी॰) और उत्तर दक्षिण चौडाई 80 कोस (256 कि॰मी॰) है।[4] यहाँ उक्त

---

1. विल्स सी॰यू॰ : दि राज गोंड महाराजाज आफ दि सतपुड़ा हिल्स पृ॰ 111-16
2. सुरेश मिश्र : गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 32
3. यहाँ दक्षिण से तात्पर्य दक्षिणापथ से है, जिसे आधुनिक परिभाषा के अनुसार नर्मदा नदी के दक्षिण से आरम्भ हुआ माना जाता है। (एन्साइक्लोपीडिया आफ ब्रिटेनिका, जिल्द-7, पृ॰ 155-) किन्तु यहाँ अबुलफज़ल के दक्खिन से तात्पर्य नर्मदा नदी के दक्षिण से नहीं, बल्कि सतपुडा के दक्षिण से था - देखिये गढा के गोंड राज्य, पृ॰ 32)
4. अकबरनामा (अनु॰ बेवरिज), जिल्द 2, पृ॰ 323-24

मत भी पूर्णत: सत्य है ऐसा नहीं कहा जा सकता है । दूसरी तरफ मलिक मुहम्मद जायसी के विवरण से यह विदित होता है कि संग्रामशाह के समय में गढ़ा राज्य का विस्तार पूर्व पश्चिम लगभग 475 किलोमीटर और उत्तर दक्षिण लगभग 390 किलोमीटर था[1]। बदायूँनी भी इस प्रदेश को उत्तर में पन्ना और दक्षिणापथ के मध्य मानता है ।[2]

रानी दुर्गावती के पश्चात् गढ़ा मण्डला प्रदेश क्षेत्रफल में कोई विस्तार नहीं हुआ और उत्तरोत्तर ह्रास ही होता रहा । कालान्तर में नरहरिशाह के समय {1780 ई॰} में सागर के सूबेदार बिसाजी चान्दोरकर ने गढा मण्डला पर आक्रमण[3] कर नरहरिशाह को कैद कर लिया । यद्यपि उसके पश्चात सुमेरशाह को गढा मण्डला की गद्दी प्रदान की गई, परन्तु वह नाम मात्र का ही शासक था और बिसाजी चान्दोरकर के प्रभाव से मुक्त नहीं था । 1782 ई॰ में उसे भी जयशंकर के किले में कैद कर दिया गया । तदुपरान्त नरहरिशाह को पुन: गढ़ा मण्डला की गद्दी प्राप्त हुई और मण्डला में मोरा जी नामक मराठा प्रतिनिधि नियुक्त किया गया । नवम्बर 1782 ई॰ में नरहरिशाह और विसाजी चान्दोरकर में पुन: युद्ध हुआ[4], जिसमें विसाजी चान्दोरकर अपने भाई

1· सोलहवी शती के पूर्वार्द्ध के एक महाकाव्य "पद्मावत" में कार्य मलिक मुहम्मद जायसी गढ़ा कटंगा की स्थिति स्पष्ट करते हुए लिखता है कि गढ़ा कटंगा के उत्तर में अँधियार खटोला {सागर-दमोह} और दक्षिण पश्चिम में तिलंगाना और दक्षिण में रतनपुर था ।
पद्मावत, सं॰ वासुदेव शरण अग्रवाल, द्वितीय संस्करण, पृ॰ 156

2· बदायूँनी, मुन्तखब-उत्त-तवारिख, अनु॰ रैकिंग, जिल्द-1, पृ॰ 433

3· सिन्हा, एच॰एन॰, सेलेक्शन फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स जिल्द 4, पृ॰ 134-35

4· विदर्भ संशोधन मंडल, वार्षिकी, 1964, पृ॰ 24

सहित मारा गया । नरहरिशाह अपने शुभ चिन्तकों सहित चौरागढ़ के किले में चला गया ।[1] 1784 ई॰ में मोरोपंत ने नरहरिशाह से बदला लेने के लिये चौरागढ़ पर आक्रमण कर जून 1784 ई॰ में उस पर अधिकार कर लिया [2] और नरहरिशाह को कैद कर खुरई [3] {जिला सागर में} के किले में रखा, जहाँ 1789 ई॰ में उसकी मृत्यु हो गयी ।[4]

तथापित अंतिम गोंड शासक नरहरिशाह के समय 1780 ई॰ में "गढ़ा मण्डला" राज्य मे निम्नलिखित क्षेत्र सम्मिलित थे :- वर्तमान जबलपुर, मण्डला एवं नरसिंहपुर जिले का सम्पूर्ण भाग, पन्ना जिले का दक्षिणी भाग अर्थात व्यारमा नदी के दक्षिण पूर्व का सम्पूर्ण भाग, सागर जिले का व्यारमा नदी के दक्षिण पूर्व का सम्पूर्ण क्षेत्र, सिवनी जिले का उत्तर पूर्वी क्षेत्र तथा बालाघाट जिले का अध्दांश उत्तरी भाग । इस प्रकार 1780 ई॰ में गढा मण्डला की सीमा अनुमानत: पूर्व पश्चिम लम्बाई लगभग 350 कि॰मी॰ तथा उत्तर दक्षिण चौड़ाई 225 कि॰मी॰ लगभग थी । इस तरह यह सम्पूर्ण क्षेत्र 20°-55' उ॰ से 24°-00' उ॰ तक तथा 78°-26 से 81°-45 पू॰ तक फैला हुआ था ।

1· ज॰ए॰सो॰बं॰, 68, 1837 पृ॰ 642

2· शेजवलकर, नागपुर अफेयर्स, जिल्द 2 पृ॰ 31, प॰क्र॰ 62

3· खुरई सागर से 53 कि॰मी॰ उत्तर पश्चिम में है । यह किला गोविन्द पन्त बुन्देले के पुत्र बालाजी गोविन्द ने बनवाया था ।
सागर जि॰ग॰ 1967, पृ॰ 525

3· स्लीमेन, रेम्बल एन्ड रिकलेक्शन्स आफ एन इंडियन आफिशियल, पृ॰ 25
74

ज॰ए॰सो॰बं॰, 68, 1837 पृ॰ 644

3. भौगोलिक विवरण :-

"भूगोल के बिना इतिहास शव के समान है, जिसमें न जीवन होता है और न क्रियाशीलता ही ।"[1] निःसन्देह पीटर हेलिन का यह कथन सत्य के निकट कहा जा सकता है क्योंकि भूगोल इतिहास के प्रवाह को प्रवाहित करता है और भूगोल के अध्ययन के बिना इतिहास को सही रूप में समझना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है । किसी भी प्रदेश की भौगोलिक पृष्ठभूमि जानना अत्यावश्यक है ।

भूगोल के महत्त्व की यह बात "गढ़ा मण्डला क्षेत्र के लिए भी चरितार्थ होती है । यहाँ के निवासियों का जीवन सदियों से प्रकृति द्वारा नियंत्रित होता रहा है । यहाँ के पर्वत नदियाँ और सघन वन आदिकाल से इस प्रदेश को पृथक रखे हुए हैं । वर्तमान भारत के मध्य में स्थित यह प्रदेश ऊँचे श्रृंखलाबद्ध पर्वतों, बड़ी नदियों और विस्तृत वनों के क्षेत्र में फैला हुआ है साथ ही यह अनेक जातियों का आश्रय स्थल भी रहा जो अपना निजी अस्तित्व बनाये रखने में समर्थ हो सकी हैं ।

1. स्थलाकृति :-

स्थलाकृति के आधार पर गढ़ा मण्डला प्रदेश को हम निम्नानुसार विभाजित कर सकते हैं ।

अ. विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी एवं उच्च सम भूमि

ब. नर्मदा घाटी

स. सतपुड़ा मेकल का पर्वतीय प्रदेश

द. भीतरीगढ़ श्रेणी और उससे सम्बद्ध पहाड़ी क्षेत्र

य. महानदी और कटनी की उत्तर पूर्वी घाटियाँ

---

1. पीटर हेलन, माइक्रो कास्मास और ए लिटिल डिस्क्रीप्शन्स आफ दि ग्रेट वर्ल्ड, 1921, जिल्द-2 एवं सं. ग्रीफिथ टेलर, ज्याग्रफी इन दि टवन्टियथ सेन्चुरी पृ. 640

अ· विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी एवं उच्च समभूमि :-

लगभग 4200 मीटर मोटाई वाली जलज चट्टानों से निर्मित[1] विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी कगारी पहाड़ियों की लम्बी पर्वत श्रेणी है, जो माण्डवी के निकट से नर्मदा के साथ हिरण नदी के संगम तक फैली हुई है तथा सोन नदी के उत्तर की ओर माण्डेर एवं कैमूर पर्वत श्रेणियों तक जाती है ।[2] बीच के भाग में यह दकन ट्रेप से ढक गयी थी, अपरदन के बाद पुन: विन्ध्य शैल सतह दिखने लगी है । [3] वास्तव में यह पर्वत श्रेणी विन्ध्य पठार का दक्षिणी किनारा कहलाती है । इसके पश्चिमोत्तर द्वार पर कटंगी के आसपास भाण्डेर श्रेणी की अनेक शाखायें पायी जाती है, जिसमें 1500 से 2000 फीट तक की ऊँचाई वाली पहाड़ियों का एक जटिल पुंज सा बन गया है ।[4] इस जटिल पुंज में अनेक छोटी किन्तु तीव्र प्रवाही नदियों ने बीच बीच में कन्दराये बना ली है और यह श्रेणियाँ इतनी सिलसिलेवार है कि केवल कुछ स्थानों ही पर इन्हें पार किया जा सकता है ।[5]

इसी प्रकार कैमूर श्रेणी कटंगी से प्रारम्भ होकर भांडेर कगार के लगभग समानान्तर और कुछ पूर्व से गयी हैं तथा कुछ दूर तक वर्तमान जिला जबलपुर एवं दमोह के मध्य सीमा बनाती है ।[6] अधिकांशत: बलुआ पत्थरों तथा उनके तल में स्फटिक शैल समूहों से युक्त यह कगार मूलत: या तो नर्मदा घाटी में भ्रंश के कारण बना है या विन्ध्य पठार का सम्पूर्ण

1· डा· प्रमीला कुमार : म·प्र· एक भौगोलिक अध्ययन, पृ·8
2· दमोह जिला गजेटियर , 1972 पृ· 5
3· डा· प्रमिला, म·प्र· एक भौगोलिक अध्ययन, पृ· 8
4· जबलपुर जि·ग· 1969,पृ· 3
5· डा· प्रमिला, म·प्र·एक भौगोलिक अध्ययन पृ· 15
6· जबलपुर जि·ग· 1969, पृ· 4

का सम्पूर्ण स्तर प्रोत्थित होकर प्राय: उध्र्वाधर स्थिति में आ जाने के कारण बना है ।[1] उत्तर में कालीमिट्टी वाली सोनार घाटी को छोड़-कर लगभग सारा क्षेत्र ही ऊँची नीची पहाड़ियों और सामान्य विरल जंगलों सेभरा है, इस क्षेत्र में मुख्यत: गेहूँ और चना की पैदावार होती है । कहीं कहीं ज्वार तथा धान भी पैदा किया जाता है । वर्तमान सागर, दमोह, जबलपुर जिले तथा मण्डला जिला का उत्तरी अध्र्दान्श इस उच्चसम भूमि के अन्तर्गत आते है ।

ब· नर्मदा घाटी :-

यह क्षेत्र गढ़ा मण्डला ४ प्रदेश का सबसे अधिक उपजाऊ एवं घनी आबादी वाला है । लगभग 30 किलोमीटर की औसत चौड़ाई वाला यह मैदानी भाग विन्ध्याचल और सतपुड़ा पर्वत माला के मध्य लगभग 300 किलीमीटर तक फैला हुआ है जो कि वर्तमान जबलपुर जिला में स्थित भेंडाघाट की संगमरमरी चट्टानों से प्रारम्भ होकर जिला होशंगाबाद के ग्राम हंडिया के आसपास तक विस्तारित है ।[2] इसे नर्मदा सोन की घाटी के नाम से भी जाना जाता है ।[3] यद्यपि यह घाटी नर्मदा के दक्षिण में स्थित है, किन्तु इसका ढाल दक्षिण से उत्तर की ओर है क्योंकि उत्तरी भाग अधिकतर संकरा है तथा कहीं कहीं आरक्षित एवं टूटे फूटे विन्ध्य पर्वत के दक्षिणी कगारों से घिरा हुआ है । यह घाटी अधिकांशत: समतल है तथा इसका तल औसत समुद्र से 335 से 365 मीटर ऊँचा है, साथ ही कहीं कहीं इसमें बजरी तथा कंकड़ के टीले भी विद्यमान है ।[4] अधिकतर भाग में इसके दोनों ओर प्रपाती कगार के रूप में खड़े है ।[5]

1· दमोह जि·ग·, 1972, पृ·5

2· नरसिंहपुर जि·ग·, 1970, पृ· 4

3· डा· प्रमिला, म·प्र·एक भौगोलिक अध्ययन पृ· 25

4· नरसिंहपुर जि·ग·, 1970, पृ· 4

सतपुड़ा से ह निकलने वाली छोटी बड़ी अनेक नदियाँ अर्थात शेर, शक्कर, दूधी एवं इनकी सहायक नदियाँ जाकर नर्मदा में मिल जाती है । भू वैज्ञानिक दृष्टि से यह एक ऐसा नदी क्षेत्र है जिसका निर्माण समुद्री झीलों की तलछटीकरण के फलस्वरूप हुआ है । एक दृष्टिकोण यह भी है कि यह भाग पूर्व-पश्चिम के अंश क्षेत्र से न्यूनाधिक रूप से घनिष्ठ तथा सम्बन्धित है और वहीं विकसित हुआ है । ऐसा भी माना जाता है कि प्रागैतिहासिक एवं ऐतिहासिक काल में इस भाग में शान्तिप्रिय मानव निवास करते थे और यह पूर्व में पश्चिम आवागमन का सर्वाधिक प्रचलित प्राकृतिक मार्ग रहा है । इस क्षेत्र में मुख्य रूप से गेहूँ, चना, दाले एवं ज्वार की पैदावार होती है । वाणिज्यिक फसलों में गन्ना, तिल, अलसी एवं कपास इत्यादि पैदा होती हैं । निःसन्देह इस क्षेत्र की संस्कृति और विचारधारा दक्षिणी घाटी की अपेक्षा बुन्देलखण्ड पठार की संस्कृति एवं विचारधारा से अधिक मिलती है ।[1] इस क्षेत्र के अन्तर्गत वर्तमान जिला नरसिंहपुर, होशंगाबाद एवं जबलपुर का कुछ भाग आता है जो कि गढ़ा मंडला प्रदेश का दक्षिणी पश्चिमी भाग कहलाता है, जबकि ऊपरी बेसिन मण्डला जिले में अथवा मैकल पठार में पड़ता है ।

स. <u>सतपुड़ा - मेकल का पर्वतीय प्रदेश</u> :-

नर्मदा नदी के दक्षिण में सतपुड़ा [प्राचीन ऋक्ष] पर्वत श्रेणी पूर्व में अमरकंटक से पश्चिम में सम्भात की खाड़ी तक समानान्तर रूप से फैली हुई है । यह प्रसार एक त्रिकोण स्वरूप दृष्टिगोचर होती है । इसका लगभग 160 किलोमीटर लम्बा आकार अमरकंटक से सालटेकरी [जिला

---

1. नरसिंहपुर जि.ग., 1970, पृ. 4

बालाघाट} तक फैला हुआ है[1] तथा पश्चिम का कुल विस्तार लगभग 600 किलोमीटर तक है जिसका अधिकांश भाग पर्वतों एवं सघन वनों से आच्छादित है तथापित कहीं कहीं संकरी उपजाऊ घाटियाँ छूट गयी है। इनमें विशेष रूप से सतपुड़ा का पूर्वी भाग सबसे अधिक चौड़ा है जिसे मेकल का पठार कहा जाता है।[2] इस पर्वत के दोनों ओर गहरी खाईयों से युक्त ढाल है। समुद्र सतह से इसकी ऊँचाई 600 मीटर से 1200 मी० तक है, जिसमें मेकल समुद्र सतह से लगभग 1050 मीटर ऊँचा है।[3] बचई और श्रीनगर के दक्षिण मे सतपुड़ा पर्वत का पूर्वी भाग सर्वाधिक ऊँचा है। यह अपने उत्तर और दक्षिण क्षेत्र के लिए जल विभाजक का काम करता है। उत्तर की ओर जिन नदियों का बहाव है वे आकर नर्मदा में मिलती है जो कि इसके उत्तर की प्रमुख नदी है। दक्षिण में ताप्ती, बेनगंगा, वर्धा एवं इसकी सहायक नदियाँ है तथा पूर्व में महानदी एवं सोन प्रमुख है। विन्ध्याचल की तरह इस क्षेत्र की मिट्टी भी उत्तम किस्म की नहीं है। सघन वनों से आच्छादित होने के कारण यहाँ हिंसक जीवों की बाहुल्यता पायी जाती है। सम्भवत: इस क्षेत्र में आर्य पूर्व आदिम जातियों के कठोर जीवनयापी लोग बसते थे। कालान्तर में इस पर्वत श्रेणी पर अनेक गढ़ों का निर्माण किया गया जिनमें चौरागढ़ का किला सदियों तक सैनिक केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध रहा जहाँ से गोंडवाला के पश्चिमी भाग पर नियन्त्रण रखा जाता था। यहाँ की मुख्य फसल ज्वार है साथ ही गेहूँ, चना, मक्का एवं धान भी पैदा किया जाता है। इसके अतिरिक्त वाणिज्यिक फसलों में तिल, राई, अलसी एवं गन्ना मुख्य रूप से पैदा किये जाते है। वर्तमान जिले बालाघात, नरसिंहपुर एवं मण्डला का भूभाग

---

1. क्रीजे इसके आसपास के क्षेत्र को "इस्टर्न अपलैंड" की संज्ञा देते हुए लिखता है कि भारत का अन्य कोई भाग इतना अधिक कटा छँटा एवं कृषि के लिए अनुपयुक्त नहीं है। देखिये क्रीजे, <u>एशिया लैंड पीपुल्स</u> पृ० 488
2. डा० प्रमिला, <u>म०प्र० एक भौगोलिक अध्ययन</u>, पृ० 29
3. लायड एल०डब्ल्यू० <u>दि काटिनेन्ट आफ द एशिया</u>, पृ० 456

इसके अन्तर्गत आते हैं ।

द. भीतरी गढ़ श्रेणी और उससे सम्बद्ध पहाड़ी क्षेत्र :-

गढ़ा मण्डला क्षेत्र के उत्तर पश्चिम भाग में भीतरी गढ़ श्रेणियाँ दक्षिण पश्चिम से उत्तर पूर्व की ओर फैली हुई हैं । इसमें अधिकांशतः कार्यान्तरित चट्टाने है तथा यह श्रेणी सतपुड़ा श्रेणी की शाखाओं से लगभग समकोण पर मिलती है ।[1] समुद्र सतह से इसकी सामान्य ऊँचाई 450 मीटर से लेकर 600 मीटर तक है । इस पहाड़ी की उच्चतम चोटी 675 मी. ऊँची है । यह श्रेणी भी उत्तर में कटनी नदी एवं दक्षिण में हिरण नदी के जल संग्रह क्षेत्र के मध्य जल विभाजक का काम करती है । भीतरीगढ़ श्रेणी एवं कैमूर के मध्य असमतल विभिन्न ऊँचाई एवं विस्तार की पहाड़ियाँ फैली हैं । यहाँ यत्र-तत्र प्राकृतिक घाटियों में घनी एवं उत्तम किस्म की मिट्टी पायी जाती है । इस क्षेत्र में मुख्यतः धान गेहूँ एवं चने के साथ ही गन्ना, तिलहन आदि की पैदावार होती है ।

इ. महानदी और कटनी की उत्तर पूर्वी घाटियाँ :-

उपरोक्त स्थलाकृति के अतिरिक्त गढ़ा मण्डला क्षेत्र में एक और श्रृंखला पायी जाती है जिसे महानदी और कटनी की उत्तर पूर्वी घाटी कहा जाता है । इस मैदान के उत्तर पश्चिम सीमा पर कैमूर श्रेणी फैली हुई है । इस क्षेत्र का दक्षिण पूर्वी और पूर्वी भाग वनों से आच्छादित है । यहाँ की मिट्टी अधिकांशतः कछारी एवं सर्वाधिक उर्वरक है । इस क्षेत्र में महानदी और कहिर नदी द्वारा निर्मित उत्तर पूर्वी मैदान में वर्तमान जबलपुर जिले की गुडवारा तहसील का पूर्वी भाग तथा मण्डला जिले का पश्चिमी भाग सम्मिलित है ।

---

1. जबलपुर जि.ग्र., 1961, पृ. 4
2. यह सोन नदी की सहायक नदी है एवं मंडला जिले से निकलती है ।

2. प्रवाह तन्त्र :-

सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला क्षेत्र में छोटी बड़ी कुल मिलाकर लगभग एक दर्जन से अधिक नदियां है, किन्तु मुख्य रूप से दो प्रमुख नदियां है नर्मदा एवं बेनगंगा । यदि विन्ध्याचल पर्वत से निकल कर उत्तर की ओर प्रवाहित होती हुई गंगा यमुना की सहायक नदियों को छोड़ दिया जाए तो शेष नदियां नर्मदा एवं बेनगंगा की सहायक हैं । इस क्षेत्र की नदियों की एक विशेषता यह ह रही है कि अधिकांशत: ऊँचे पहाड़ों सेउतरती हुई जल प्रपात बनाती है । पचमढ़ी का पठार इसका अच्छा उदाहरण है ।[1] इनके ऊपरी सतह पर जल की न्यूनता पायी जाती है किन्तु लगभग 60-70 मीटर नीचे उतरते ही लगभग सभी नदियों में पर्याप्त जल एवं प्रपात मिलते है । इनके साथ ही इस क्षेत्र की नदियों में अनगिनत सोते भी पाये जाते है ।[2] इन नदियों के उद्‌गम एवं जल प्रदायक क्षेत्र अत्यन्त ऊँचाई पर होने के कारण इनका बहाव भी अपेक्षाकृत तीव्र हैं तथा यह गहरी घाटियों से होकर प्रवाहित होती है । इन नदियों पर वर्षा ऋतु का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । इस ऋतु में ये नदियां भयंकर रूप धारण कर लेती है और इनके तटीय क्षेत्रों में अधिकांशत: बाढ का प्रकोप छा जाता है । सूखे के मौसम में इनकी जलधारा अत्यधिक पतली हो जाती हैं । गढ़ा मण्डला क्षेत्र की नर्मदा एवं बेनगंगा के साथ ही कुछ अन्य नदियों का वर्णन यहां किया जा रहा है । यद्यपि यह नर्मदा एवं बेनगंगा की तरह प्रमुख नहीं है । तथापि यह नर्मदा एवं बेनगंगा की तरह अपना अलग अस्तित्व रखती है ।

नर्मदा नदी :-

नर्मदा भारत की सात प्रमुख नदियों में से एक है यह सतपुड़ा की पूर्वी श्रेणी अमरकंटक से निकल कर लगभग 1280 किलोमीटर बहती हुई

---

1. डा. प्रमिला, म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन, पृ. 30
2. डा. प्रमिला, म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन, पृ. 30

अरब सागर की खम्भात की खाड़ी में जाकर गिरती है । यह दक्खन को उत्तर भारत से अलग करती है साथ ही वर्तमान जबलपुर एवं नरसिंहपुर जिलों के लिए कुछ दूरी तक सीमा निर्धारण का भी कार्य करती है । इसका तटवर्ती क्षेत्र सर्वाधिक उपजाऊ माना जाता है ।

बेनगंगा नदी :-

यह सतपुड़ा में ताम्बुदी से निकल निकल कर दक्षिण की ओर बहती हुई गोदावरी में जाकर मिल जाती है । पश्चिम से आकर कन्हान एवं पेंच नदियां इसमें मिलती हैं ।

हिरण नदी :-

यह नर्मदा नदी के दाहिने तट की प्रमुख सहायक नदी है । कुण्डम (जिला जबलपुर) से निकल प्रवाहित होती हुई लगभग 190 किलोमीटर दूरी तय करती हुई नर्मदा में मिल जाती है । इसका प्रवाह अति तीव्र है ।

गौर नदी :-

यह नदी निवास (जिला मण्डला) के पास से निकलती है तथा लगभग 80 कि॰मी॰ प्रवाहित होती हुई जबलपुर से लगभग 12 कि॰मी॰ दक्षिण में जाकर नर्मदा में मिल जाती है ।

महानदी :-

महानदी वर्तमान मण्डला जिले से निकलती हुई पूर्वी सीमा पर उसके समानान्तर बहती है तथा आगे चलकर सोन नदी में मिल जाती है ।

कटनी नदी :-

यह नदी भीतरी गढ़ श्रेणी की उत्तरी ढाल पर स्थित जंजगरा ग्राम के पास से निकलती है तथा इसी क्षेत्र में बहुती हुई महानदी में मिल जाती है ।

इनके अतिरिक्त शेर, शक्कर, दूधी इत्यादि नदियाँ भी इस क्षेत्र की नर्मदा की सहायक नदी के रूप में जानी जाती है ।

3· जलवायु :-

भारत ही नहीं वरन् मध्य प्रदेश के भी मध्य में स्थित होने के कारण गढ़ा मण्डला क्षेत्र में मानसूनी जलवायु की सभी विशेषताएँ मिलती है । जैसा कि सर्वविदित है कि 21 मार्च के पश्चात् सूर्य उत्तरायण होता है और सूर्य की किरणे निरन्तर सीधी होती है, तथा 21 जून को कर्क रेखा के निकट सूर्य लम्बवत् होता है । कर्क रेखा इस प्रदेश के उत्तरी भाग से होती हुई जाती है जिसके फलस्वरूप तापमान में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है और 21 सितम्बर के पश्चात जब सूर्य दक्षिणायन होने लगता है तब किरणे निरन्तर तिरछी होने लगती है, फलस्वरूप तापमान भी गिरने लगता है । ऋतु वेत्ताओं ने वर्ष को जलवायु के दृष्टिकोण से तीन भागों में विभाजित किया है, ग्रीष्म ऋतु, वर्षा ऋतु, एवं शीत ऋतु वस्तुत: गढ़ा मण्डला प्रदेश भी इन तीनों ऋतुओं से पूर्णत: लाभान्वित होता है ।

अ· तापमान :-

ग्रीष्म ऋतु लगभग मार्च के मध्य से जून के अन्त तक माना जाता है । यद्यपि कर्क रेखा के इस प्रदेश से निकलने के कारण सूर्य जब उत्तरायण होकर इसके लम्बवत् होता है तब तापमान में वृद्धि अवश्य ही होती है किन्तु तब भी देश के अन्य क्षेत्रों म्र से यहाँ का तापमान कम होता है क्योंकि सम्पूर्ण प्रदेश का अधिकांश भाग पर्वतीय एवं सघन वनों से आच्छादित है । ग्रीष्म ऋतु में यहाँ का तापमान 31-3° से· से

1· डा· प्रमिला, म·प्र· एक भौगोलिक अध्ययन, पृ· 36

45-0° से.[1] तक ही रहता है । यदा कदा गर्मी असह्य हो जाती है जिसके फलस्वरूप "लू" का प्रकोप हो जाता है । यहाँ मई की अपेक्षा जून में रात्रि अधिक गर्म होती है ।

जून में मानसून के आते ही तापमान गिरने लगता है तथा जून की तुलना में, जुलाई का तापमान बहुत कम हो जाता है ।[2] तापमान में माह सितम्बर तक कोई अधिक भिन्नता नहीं पायी जाती है किन्तु अक्टूबर से जनवरी तक तापमान निरन्तर गिरता चला जाता है तथा फरवरी का तापमान लगभग स्थिर रहता है । माह दिसम्बर और जनवरी वर्ष के सबसे ठंडे दिन होते हैं । इस अवधि में न्यूनतम तापमान 13° से.से 9° से. तक हो जाता है । कभी-कभी अपवाद स्वरूप न्यूनतम तापमान जल के हिमांक तक गिर जाता है और शीत लहर का प्रकोप छा जाता है ।

ब. वर्षा :-

समग्र गढ़ा मण्डला प्रदेश में वर्षा की प्रकृति मानसूनी है । अधिकतम वर्षा जून माह से माह सितम्बर तक होती है तथा दिसम्बर और जनवरी से चक्रवातों के फलस्वरूप भी कुछ वर्षा हो जाती है । साधारणत: सम्पूर्ण क्षेत्र में अलग अलग स्थानों पर 75 से.मी. से 150 से.मी. तक वर्षा होती है । जबलपुर और सिवनी 75 से.मी.[3] वर्षा की रेखा के अन्तर्गत आते हैं जबकि मण्डला और बालाघाट इत्यादि जिले 139 से.मी. से 150 से.मी. की परिधि में आते है । इस क्षेत्र में सिंचाई के साधनों की कमी के कारण फसलों की पैदावार पर वर्षा का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । अत: फसलों की पैदावार तभी होती है जबकि वर्षा फसल के विभिन्न चरणों में समय पर और उचित परिणाम में हो । कभी-कभी

---

1. जबलपुर जि.ग., 1969 पृ. 51
2. डा. प्रमिला, म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन, पृ. 36
3. डा. प्रमिला, म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन, पृ. 36

तो पूर्ण होने पर भी फसल नष्ट केवल इसलिए हो जाती है कि उपयुक्त समय पर वर्षा नहीं हो पाती है । इस प्रकार समयानुकूल वर्षा न होने पर भी अकाल की सम्भावना बनी रहती है ।

तथापि तापमान, हवायें एवं वर्षा इत्यादि में यदि अपवाद स्वरूप भिन्नताएँ उत्पन्न न हो तो सामान्यत: समग्र गढ़ा मण्डला प्रदेश की जलवायु रमणीय एवं स्वास्थ्यप्रद है ।

--0--

=:: 0 : 0 : 0 ::=

अध्याय 2

अध्याय - 2 गढ़ा मण्डला का पूर्वेतिहास

1· ऐतिहासिक काल :-

प्राचीन काल में गढ़ा मंडला प्रदेश का स्वरूप क्या था तथा यहां किन-किन राजाओं का प्रभुत्व स्थापित था, यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता है, तथापित जैसा कि विदित है, वैदिक सभ्यता का प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद माना जाता है जिसमें आर्यों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है, परन्तु इस प्रदेश के प्रमुख प्रतिनिधि नर्मदाऔर विन्ध्य पर्वत का ऋग्वेद में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। सम्भवत: ऋग्वैदिक आर्यों का पदार्पण इस प्रदेश में न हुआ हो। आगे चलकर हमें उत्तर वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण आरण्यकों में इस प्रदेश का सन्दर्भ प्राप्त होता है। जैसा कि पहले ही लिखा जा चुका है कि ब्राह्मण साहित्य में "त्रिपुरी" विषयक कई उल्लेख आते हैं, और उत्तरोत्तर साहित्य में "रेवा" {नर्मदा} का उल्लेख भी मिलने लगता है।

ऐतरेय ब्राह्मण में दक्षिण दिशा और उसके निवासी सत्वन्त के अलावा वैदर्भ, निषध और कुन्ति लोगों के रहने का उल्लेख मिलता है। शतपथ ब्राह्मण में दक्षिण एक राजा नल की उपाधि नैषिध मिलती है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसी नैषिध को बाद में नैषध कहा गया है जिसका अर्थ होता है निषध देश का निवासी।[2] ऐसा माना जाता है कि निषध देश को विदर्भ के निकट कहीं होना चाहिए। सम्भवत: उस समय गढ़ा मण्डला प्रदेश को या उसके किसी भाग को निषध देश कहा जाता रहा होगा।

ऐतरेय ब्राह्मण में ही एक अन्य स्थान पर आन्ध्र, पुण्ड्र, शबर

1· जबलपुर जि·गजेटियर, 1969, पृ· 54

2· श्री शुक्ल, इ·खं· पृ· 8

पुलिन्द और मूहिब जाति के लोगों का उल्लेख मिलता है, जिनमें आर्य और अनार्य दोनों के ही गुण पाये जाते थे। इनमें आन्ध्र और मूतिब को इस प्रदेश से सम्बन्धित बताया जाता है। निषाद लोग विन्ध्य एवं सतपुड़ा के जंगलों में निवास करते थे ऐसा पुराणों से विदित होता है।

अनुश्रुतियों के अनुसार इक्ष्वाकु वंश के राजा माधृत का पुत्र मुचकुंद ने परियात्र और ऋक्ष[1] पर्वतों के बीच नर्मदा के किनारे एक नगर बसाकर उसे ~~दुर्ग~~ दुर्ग के समान चारों ओर से सुरक्षित कर लिया, किन्तु हैहय राजा महिष्मन्त ने उसे जीत कर उसका नाम माहिष्मती[2] रखा। माहिष्मन्त ~~ने उसे~~ के उत्तराधिकारी ने पौरव और काशी को जीत कर अपने साम्राज्य में मिला लिया था[3] परन्तु यह कथन केवल अनुश्रुतियों पर आधारित है, इसे पूर्ण रूप से प्रमाणिक स्वरूप देना उचित प्रतीत नहीं होता है।

राजा दशरथ के समय में यह प्रदेश किसी यादव राजा मधु के अधीन था, जिसका राज्य यमुना से लेकर गुजरात तक फैला हुआ था तब निश्चित ही गढा मण्डला प्रदेश उसके राज्य का मध्य क्षेत्र रहा होगा। आगे चलकर ऐसा प्रतीत होता है कि स्वयं राम ने भी कुछ दिनों तक इस प्रदेश में निवास किया होगा। ऐयर महोदय राम का निवास हिण्डोरिया में, नोहटा में मारीच का स्थान, तथा पम्पा के विशाल कमल सरोवर को जबेरा घाटी में माना है।[4] स्थानीय अनुश्रुतियों में बिल्थारी को राजा बालि का निवास स्थान माना गया है[5] कहा जाता है कि राजा बालि

1· सतपुड़ा पर्वत का प्राचीन नाम ऋक्ष पर्वत था।

2· अनेक विद्वान वर्तमान मण्डला का प्राचीन नाम "माहिष्मती" मानते है।

3· श्री शुक्ल, इ·खं· पृ· 9

4· ऐयर टी·पी·, रामायण एण्ड लंका, पृ· 11-12

5· नरसिंहपुर से लगभग 38 कि·मी· उ·प· में नर्मदा के उत्तरी तट पर स्थित है।

ने यहाँ यज्ञ किया था ।[1] महाभारत कालीन इतिहास का विवरण पिछले अध्याय में दिया जा चुका है अतः उसकी पुनरावृत्ति न करते हुए आगे बढ़ना ही उचित होगा ।

महाजनपद काल में गढ़ा मण्डला प्रदेश के ऐतिहासिक विकास के सन्दर्भ में अनुश्रुतियाँ भी मौन हो जाती हैं और इतिहास के पन्नों पर पुनः अन्धकार की धूल जमने लगती है ।

कालान्तर में बालाघाट में प्राप्त हुए चाँदी के सिक्कों से ऐसा विदित होता है कि यह प्रदेश चेदि वंश के अधीन रहा होगा, जिसका राज्य विस्तार उत्तर में यमुना नदी से लेकर दक्षिण में गोदावरी नदी तक था ।[2] चेदि वंश के इन सिक्कों की तिथि ई॰पू॰ 400 लगभग मानी जाती है ।[3]

मौर्य, शुंग तथा सातवाहन काल :-

ऐसा माना जाता है कि मौर्य साम्राज्य से पूर्व नन्दवंश के राजाओं का अधिकार इस प्रदेश पर था, किन्तु अभी तक इसकी सत्यता के लिए हमें कोई प्रमाण प्राप्त नहीं हुए है ।

जबलपुर के निकट रूपनाथ में मौजूद ई॰पू॰ 232 का अशोक के

1॰ नरसिंहपुर जि॰गजे॰, 1972, पृ॰ 38

2॰ श्री शुक्ल; इ॰खं॰, पृ॰11, डेविस सी॰सी; एन हिस्टोरिकल एटलस आफ इंडियन पेनिनसुला, द्वि॰सं॰, मैप एंसियन्ट इंडिया, सी॰500 बी॰सी॰ दमोह जि॰गजे॰ 1972, पृ॰ 34, मिराशी वा॰वि; कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 13

3॰ जर्नल आफ न्यूमिस्मैटिक सोसायटी आफ इंडिया, 13, 14 और 15.

शिलालेख से यह ज्ञात होता है कि यह सम्पूर्ण क्षेत्र मौर्य साम्राज्य का एक अंग था । इस शिलालेख में अशोक ने राजाज्ञा जारी कर पुरूषार्थ की महत्ता को प्रकट किया था, जिसे उसने अपने एक प्रवास के दौरान 256 में पडाव में लिखा था ।[1] सम्भवत: रूपनाथ उस समय एक धार्मिक स्थल रहा होगा जहाँ देश के कोने-कोने हिन्दू तीर्थ यात्री आते रहे जिसके कारण शिलालेख के लिए उसे उपयुक्त माना गया हो । इसी प्रकार करछुला, तेवर (त्रिपुरी) ऐरण में प्राप्त हुई कुछ आहत मुद्रायें भी इसी काल की मानी जाती हैं, इसके अतिरिक्त इसी क्षेत्र के भिटापाटन तथा तेवर में काली चमकदार पालिए किए बर्तन प्राप्त हुए हैं जबकि मौर्यकालीन बर्तनों की मुख्य विशेषता काली चमकदार पालिश ही है ।

184 ई॰पू॰ में सेनापति पुष्पमित्र शुंग ने राजा बृहद्रथ की हत्या कर स्वयं राजा बना जिसका उल्लेख वाणभट्ट के हर्ष चरित्र में किया गया है [2] तथा विष्णु पुराण के अध्याय 24 में इसकी पुष्टि की गयी है । मराठा राजसिंहासन पर शुंग वंश की स्थापना करते हुए पुष्पमित्र ने अपने पुत्र अग्निमित्र को भिलसा (विदिशा) का सूबेदार नियुक्त किया,[3] जो वहाँ से मालवा पर राज्य करता था, परन्तु शुंगों को मौर्य साम्राज्य का सम्पूर्ण प्रदेश प्राप्त नहीं हुआ था । ऐसी स्थिति में यह कहना कठिन है कि सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला प्रदेश उसके अधीन रहा होगा । सम्भवत: इस प्रदेश का केवल उत्तरी भाग ही शुंग वंश के अधीन रहा हो तथा शेष भाग पर किसी स्वतन्त्र गणराज्य का आधिपत्य अथवा यवन राजा मिलिन्द (मेनण्डर) की सत्ता रही हो ।

---

1. हीरालाल रा॰ब॰, दि डिस्क्रीप्टीव लिस्ट आफ दि इंस्क्रिप्शन्स इन दि सी॰पी॰ एण्ड बरार, 25, पृ॰ 20
2. श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 14
3. श्री हीरालाल रा॰ब॰, सागर सरोज पृ॰ 8

जैसा कि वर्तमान बालाघाट जिले में मेनण्डर के समय ताबे के 6 सिक्के प्राप्त हुए हैं,[1] जिसके आधार पर उसकी ही सत्ता होना अधिक उचित प्रतीत होता है ।

इसके बाद सातवाहन वंश का क्रम आता है । इसी समय इस वंश के आन्ध्र अपने साम्राज्य विस्तार में लगे हुए थे । इनकी राजधानी प्रतिष्ठान (वर्तमान पैठन) हैदराबाद राज्य में थी । इसी वंश के राजा शातकर्णी का विस्तार डाहल प्रदेश तक था ।[2] फलतस्वरूप त्रिपुरी उनके अधीन था ।[3]

इस कारण के सिक्के त्रिपुरी, खिड़किया[4] (जिला होशंगाबाद) और विदिशा में पाये गये हैं[5], नासिक प्रशस्ति से इसी वंश के एक अन्य शासक गौतमी पुत्र शातकर्णी के विषय में ऐसा ज्ञात होता है कि उसे विझा (पूर्वी विन्ध्य पर्वत) तथा अच्छवत (सतपुड़ा पर्वत) नरेश आदि भी कहा जाता था ।[6] इससे यह स्पष्ट है कि गौतमी पुत्र शातकर्णी के शासनकाल (लगभग ई॰पू॰ 106-30 ई॰) तक गढ़ा मण्डला प्रदेश सातवाहनों के अधीन था ।

1· श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 14

2· वर्तमान गढ़ा मण्डला प्रदेश का प्राचीन नाम, देखिये, अध्याय एक में इसकी विवेचना की गयी है ।

3· श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 14

4· नरसिंहपुर जिला गजेटियर पृ॰ 39 पर खिडिया लिखा हुआ है जो गलत है, वास्तव में खिड़किया होना चाहिए ।

5· जर्नल आफ दि न्यूमिस्मेटिक सोसायटी आफ इंडिया, 12,13,14 और 1

6· इंडियन एन्टीक्वेरी, 47, 1918, पृ॰ 150-51

गुप्त काल से कल्चुरियों के पूर्व तक :-

इससे पूर्व कि गुप्त वंश के इतिहास की विवेचना की जाये इस प्रदेश पर एक और वंश के सत्तासीन होने का प्रमाण मिलता है जिन्होंने लगभग 27 वर्षों तक शासन किया । यह वंश वाकाटक के नाम से विख्यात है । ई॰सन् तिसरी शदी के प्रथम दशक में सात वाहन वंश का ह्रास होने लगा था उसी समय वाकातकों ने अपने राज्य स्थापित कर लिया था । इस वंश का प्रथम राजा सम्भवत: विन्ध्यशक्ति था । जिसने नागपुर के निकट अपनी राजधानी बनायी । उसका साम्राज्य बुन्देलखण्ड से हैदराबाद तक विस्तृत था ।[1] उसका उत्तराधिकारी प्रवरसेन प्रथम था हुआ जिसके समय में वाकाटक राज्य टुकड़ों में विभाजित हो गया था । ऐसा समझा जाता है कि प्रवर सेन का प्रथम पुत्र गौतमी राजधानी में ही रहा, परन्तु द्वितीय पुत्र सर्वसेन ने कहीं वासिम[2] {प्राचीन वत्सगुल्म} में अपनी राजधानी स्थापित की, इसी वंश में आगे चलकर एक अन्य राजा प्रवरसेन द्वितीय हुआ, जिसके समय के ताम्रपत्र एवं लेखं गढ़ा मण्डला प्रदेश के अन्य स्थानों पर पाये गये हैं । इनमें छिन्दवाडा, बालाघाट प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं । वाकाटक वंश के शासक यद्यपि स्वतंत्र थे, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वे गुप्त वंश की सत्ता के अधीन थेो या उन्हें कर देते थे जैसा कि अपने लेखों में वे स्वयं को "महाराज" तथा गुप्त सम्राटों को "महाराजाधिराज" लिखाते थे ।[3] ऐसी स्थिति में यह भी कहा जा सकता है कि इस प्रदेश पर गुप्त वंश का अधिकार था यह बात और है कि वे प्रत्यक्ष रूप से स्वयं शासन न करते हुए कुछ समय के लिए वाकाटकों को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया हो और आगे चलकर वाकाटक उत्तराधिकारियों की अयोग्यता या आपसी फूट के कारण उन्होंने इस प्रदेश को भी अपने

1· श्री शुक्ल, इ·खं·, पृ· 18

2· वर्तमान महाराष्ट्र में अकोला से लगभग 65 कि·मी· दक्षिण में स्थित

3· श्री शुक्ल, इ·ख·, पृ· 18

साम्राज्य में मिला लिया हो ।

गुप्त वंश में प्रवेश करते ही हमें इस प्रदेश में प्राप्त पुरातत्वों के कारण इतिहास की धरातल पर दृढ़ता का आभास होने लगता है । जैसा कि विदित है कि भारतीय इतिहास में गुप्त वंश के साम्राज्य काल को स्वर्ण युग की संज्ञा दी गयी है । न सही स्वर्णयुग रहा हो, किन्तु इस सत्यता को भी झुठलाया नहीं जा सकता है कि गुप्त राज्यकाल में संस्कृति और साहित्य की असाधारण उन्नति हुई तथा सर्वसाधारण तक सुख, समृद्धि और सम्पन्नता से परिपूर्ण था ।

इ॰स॰ तीसरी शदी के उत्तरार्द्ध में गुप्त नामक सामन्त ने मगध में इस वंश की नींव रखी थी । जिसके पुत्र घटोत्कच का उत्तराधिकारी चन्द्रगुप्त प्रथम हुआ उसने अपने साम्राज्य का विस्तार प्रयाग तक किया तथा महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण करने के साथ ही उसने 320 ई॰ में गुप्त सम्वत् के नाम से एक नवीन संवत् आरम्भ किया ।

उसके पश्चात समुद्रगुप्त सिंहासनारूढ़[1] हुए । यद्यपि उसके पूर्व उसका बड़ा भाई काचगुप्त राजा बना परन्तु राजकाल अल्प साबित हुआ ।[2] कुछ इतिहासकारों का मत है कि अपने शासनकाल में ही चन्द्रगुप्त प्रथम ने समुद्रगुप्त को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया

1॰ समुद्रगुप्त सिंहासन पर कब बैठा यह अभी तक मतभेद का विषय बना हुआ है कुछ विद्वान इसे 320 ई॰ तथा उसकी मृत्यु 380 ई॰ के लगभग मानते है । एक अन्य मत के अनुसार 340 और 340 ई॰ के मध्य माना जाता है जबकि तीसरे मत के इतिहासकार इस तिथि को 325 और 335 के मध्य मानते है । {देखिये – डा॰सत्यनारायण दुबे; प्राचीन भारतीय इतिहास, पृ॰ 242}

2॰ श्री शुक्ल, इं॰सं॰, पृ॰ 20

था, परन्तु यह अभी तक स्पष्ट नहीं हो पपया है । जहाँ तक काचगुप्त का प्रश्न है उसके समय का सिक्का सफौर ﴾हटा के निकट﴿ ≠ में प्राप्त हुआ है जिससे उसके अस्तित्व का पता चलता है । दूसरी तरफ समुद्र गुप्त की गणना एक प्रतिभाशाली सम्राट के रूप में की जाती है । उसने समस्त आर्यावर्त के राजाओं पर विजय प्राप्त कर दक्षिणापथ की विजय यात्रा की थी । उस दौरान सागर में प्रवेश कर ऐरण-विदिशा के समकालीन राजा श्रीधर वर्मन पर आक्रमण कर उसे पराजित किया[1], तदोपरान्त उस क्षेत्र को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया । एरण में ही प्राप्त एक खण्डित शिलालेख से ज्ञात होता है कि समुद्र ने एरण को "स्वभाग नगर" बनाया तथा महारानी के द्वारा वहाँ किसी भवन का निर्माण करवाया गया था ।[2] उसने अपने इस अभियान में महाकोशल[3] के राजा महेन्द्र महाकान्तर के राजा व्याघ्र राज तथा आसपास के प्रदेशों के सभी आटविक[4] राजाओं को पराजित कर उन्हें अपने अधीन कर लिया ।[5] इस प्रकार समुद्रगुप्त सागर में प्रवेश कर दमोह, जबलपुर और मण्डला तथा छत्तीसगढ़ प्रदेश को अपने अधीन करता हुआ दक्षिण की

1· दमोह जि॰गजे॰, 1980, पृ॰ 35
2· फ्लीट; कार्पस इंस्क्रिप्शन्स इंडिकेरम, 3, पृ॰ 25
3· वर्तमान बिलासपुर, रायपुर, सम्बलपुर तथा गंजाम जिले का कुछ भाग
4· आटविक, सम्भवत: वन प्रदेश के राजा को कहा जाता था,
परिव्राजक राजा हस्तिन के ताम्रपत्र में ऐसे 18 राज्यों का उल्लेख मिलता है जिसमें डाभाल भी है ﴾देखिये, फ्लीट, का॰ इं॰ ई॰, 3, पृ॰ 115-16﴿ जैसा कि पिछले अध्याय में उल्लेख किया जा चुका है ।
5· का॰इ॰ई॰, 3, पृ॰ 13

ओर केरल चला गया जहाँ उसने राजा मन्नराज को परास्त कर उसका राज्य पुन: उसे वापस कर दिया ।[1] सकोर में समुद्रगुप्त कालीन अनेक सिक्के प्राप्त हुए जिनसे यह प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला प्रदेश पर समुद्रगुप्त का आधिपत्य था ।

उसके पश्चात चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिंहासनारूढ़ होने का उल्लेख मिलता हैं जिसने "विक्रमादित्य" की उपाधि धारण की थी, किन्तु विशाखदत्त रचित "देवी चन्द्रगुप्त" नाटक के कुछ उद्धरणों से ज्ञात होता है कि समुद्रगुप्त के पश्चात रामगुप्त गद्दी पर बैठा था, परन्तु वहएक दुर्बल एवं कायर था । एक बार किसी शक राजा से उसका युद्ध हुआ जिसमें पराजित उसने अपनी पत्नी ध्रुवस्वामिनी को शकों के हाथ सौंप देना स्वीकार किया । छोटा भाई चन्द्रगुप्त द्वितीय इस अपमान को बर्दाश्त न कर सका और येन-केन-प्रकारेण शक राजा की हत्या करवा दी और बाद में आपसी मतभेद के कारण अपने भाई की भी हत्या कर उसकी पत्नी से विवाह कर लिया और स्वयं सिंहासनारूढ़ हुआ ।[2] चन्द्रगुप्त के समय में गुप्त साम्राज्य पूर्णरूपेण फलित एवं विकसित होकर चर्मोत्कर्ष पर पहुँच गया था । उसके समय के सिक्के गढ़ा मण्डला प्रदेश के सिवनी एवं जबलपुर में प्राप्त हुए हैं ।[3] इन्हीं सिक्कों में स्कन्दगुप्त का भी एक सिक्का प्राप्त हुआहै ।[4] सम्भवत: गढ़ा मण्डला प्रदेश स्कन्दगुप्त के समय तक गुप्त साम्राज्य के अधीन था ।

1· शुक्ल प्र·द·, मध्य प्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले, पृ· 6

2· दुबे डा· सत्यनारायण, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ· 248

3· श्री शुक्ल, इ·खं·, पृ· 21

4· दमोह जि·गजे·, 1980, पृ· 35, हीरालाल रा·ब·, दमोह दीपक पृ· 5, श्री शुक्ल, इ·खं·, पृ· 21

ऐसा प्रतीत होता है कि बाद के गुप्त शासकों ने गढ़ा मण्डला प्रदेश पर प्रत्यक्ष रूप से राज न करते हुए अपने सामन्तों को दे दिया था। जैसा कि गुप्त संवृत 165 (484-85 ई॰) के एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि सरण में किसी महाराज मातृविष्णु एवं उसके भाई धन्यविष्णु या दतिय विष्णु ने एक ध्वज स्तम्भ का निर्माण करवाया था। उस समय यमुना और नर्मदा के मध्य स्थित प्रदेश पर बुधगुप्त के सामन्त सुरश्मिचन्द्र का शासन था।[1]

दूसरी तरफ दो अन्य शिलेखों गुप्त संवत् 199 (518 ई॰) तथा 209 (528 ई॰) में क्रमश: राजा हस्तिन गुप्त संवत् 156-198 (475-517 ई॰) और उसके पुत्र संक्षोभ गु॰सं॰ 198-209 (518-528 ई॰) का उल्लेख मिलता है।[2] राजा हस्तिन के सम्बन्ध में पहले ही लिखा जा चुका है कि उसने डाभाल सहित 18 वन राज्यों पर शासन किया था। हस्तिन का वर्णन सैकड़ों युद्धों का विजेता, सहस्त्रों गायों, हाथियों, घोड़ों, स्वर्ण मुद्राओं तथा अनेक भूमियों के दाता के रूप में किया गया है। राजर्षि सुशर्मन का वंशज होने के कारण ये परिब्राजक कहलाये। ये दोनों ही गुप्त सम्राट के सामन्त थे।[3]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि गढ़ा मण्डला प्रदेश पर उन दिनों गुप्त सम्राट के सामंत ही शासन करते थे। हो सकता है कि गुप्तों ने सामन्तों को एक स्वतन्त्र शासक की तरह राज करने की स्वतन्त्रता दे रखी हो और आगे चलकर परिस्थितियों एवं गुप्त शासकों की अयोग्यता का लाभ उठाकर पूर्णत: स्वतन्त्र शासक हो गये हों।

---

1. हीरालाल रा॰ब॰, दमोह दीपक, पृ॰ 25, दीक्षित एम॰जी॰, मध्य प्रदेश के पुरातत्व की रूपरेखा, पृ॰ 80-90
2. दि इंस्क्रिपशन्स इन दि सी॰पी॰एन्ड बरार, पृ॰ 87, का॰इ॰इं॰3, पृ॰ 113॰14
3. चट्टोपाध्याय एस॰ अर्ली हिस्ट्री आफ नार्थ इंडिया, पृ॰ 188-190

आगे चलकर सातवी शताब्दी में हमें कन्नौज के सम्राट हर्ष और बादामी के पुलकेशी नामक दो सम्राटों का वर्णन मिलता है। जिसकी पुष्टि पुलकेशी द्वितीय के ऐहोल के एक शिलालेख से होती है। जिसमें यह उल्लेख मिलता है कि इन दोनों सम्राटों के मध्य विन्ध्य के आसपास कहीं युद्ध हुआ था, तथा रेवा (नर्मदा नदी) के तट पर दक्षिण के साम्राज्य की उत्तरी सीमा निर्धारित होती थी।[1] परन्तु शोध ने सम्राट हर्ष के साम्राज्य विस्तार की विश्वसनीयता में सन्देह की एक दरार उत्पन्न कर दिया है। अभी तक ऐसा समझा जाता था कि उसका राज्य कामरूप से काश्मीर तक तथा हिमालय से विन्ध्य (नर्मदा नदी के उत्तरी किनारे) तक फैला हुआ था, किन्तु अनेक इतिहासविद् इस तथ्य से सहमत नहीं हैं जिनमें डा॰ त्रिपाठी एवं डा॰ मजूमदार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों की धारा है कि उन दिनों इस क्षेत्र में उज्जैन, ग्वालियर और बुन्देलखंड स्वतन्त्र राज्य थे जिन्हें हर्ष साम्राज्य का अंग नहीं मानना चाहिए।[2] वास्तव में यही उचित भी प्रतीत होता है जैसा कि पहले ही लिखा जा चुका है कि गुप्त काल के अंतिम शासक के समय से ही इस प्रदेश के सामन्त स्वतन्त्र होने लगे थे, अत: सम्भव है कि कल्चुरि वंश के उद्भव तक इन्हीं स्वतन्त्र शासकों का ही वर्चस्व रहा हो।

जहाँ तक पुलकेशी द्वितीय के साम्राज्य का प्रश्न है, उसके संबंध में केवल ऐहोल के शिलालेख से ही यह ज्ञात होता है कि गढ़ा मण्डला प्रदेश का दक्षिणी भाग सम्भवत: उसके अधीन रहा हो जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, किन्तु उसके राज्य की उत्तरी सीमा वास्तव में कहाँ तक थी इस सम्बन्ध में हमें कोई ठोस प्रमाण नहीं प्राप्त होता है।

---

1. मुकर्जी आर॰के॰; <u>गुप्ता एम्पायर</u>, पृ॰ 134

2. दुबे एस॰एन॰, <u>प्राचीन भारत का इतिहास</u>, पृ॰ 286

कल्चुरि शासक :-

कल्चुरियों के प्रादुर्भाव के साथ ही इस प्रदेश क्र में एक नवीन अध्याय का श्रीगणेश होता है। निःसन्देह इस प्रदेश के प्राचीन इतिहास में कल्चुरि वंश का महत्वपूर्ण स्थान है।

कल्चुरियों के प्रारंभिक नाम को लेकर भी विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। प्रारंभिक काल में यत्र तत्र इन्हें कलत्चुरी, कलत्सुरी, कलचुरी तथा कालचुर्य आदि नामों से जाना जाता था। इसके वास्तविक अर्थ भेद से सभी अनभिज्ञ थे अतः कुछ लोग इन्हें तुक शब्द "कुलचुर" से जोड़ते हुए[1] विदेशी मानते हैं जबकि पुराणों में पहले से ही हैहय वंशीय कल्चुरियों का उल्लेख मिलता है। जो कि कीर्तवीर्य अर्जुन के वंशज थे। अपने शिलालेखों में कल्चुरि लोग भी स्वयं को हैहय और सहस्त्रार्जुन का वंशज बताते हैं।[2] कहीं-कहीं कल्चुरियों का उल्लेख चेद्य या चेदि चेदि देश के स्वामी के रूप में भी मिलता है।[3] जिन्हें डाहल मण्डल का राजा भी कहा जाता था। ऐसा समझा जाता है कि उक्त वंश एक क्षत्रिय वंश से सम्बद्ध था जिसके वंशज अति और यदु के संयोग से चन्द्रमा से अवतरित हुए थे।[4]

प्रारम्भिक कल्चुरियों की राजधानी माहिष्मती थी, इनमें छठी शताब्दी के शासक बहुत प्रसिद्ध हुए थे जिन्होंने गुजरात, मालवा और महाराष्ट्र पर अपना अधिकार कर लिया था। कृष्ण राज नामक कल्चुरि राजा के सिक्के इस प्रदेश के वर्तमान जबलपुर जिले के अतिरिक्त नासिक, अमरावती, बम्बई व बेतूल में भी प्राप्त हुए हैं। यहां पर राजा कृष्णराज उसके पुत्र शंकरगण तथा पौत्र बुद्धराज का वर्णन मिलता

---

1. जबलपुर जि.गजे., 1969, पृ. 59
2. श्री शुक्ल, इ.खं., पृ. 25
3. लॉ.बी.सी., हिस्टारिकल ज्यागफी आफ एंशिएंट इंडिया, पृ. 312-13
4. नरसिंहपुर जि.गजे. 1972, पृ. 40

है,[1] कल्चुरि शासकों ने गुप्त शासकों की तरह एक नवीन संवृत चलाया जो कि चेदि या कल्चुरि संवत के रूप में प्रसिद्ध हुआ ।

त्रिपुरी के कल्चुरी :-

वामराजदेव, शंकरगण, कोकल्लदेव :-

महिष्मती से कल्चुरियों की एक शाखा त्रिपुरी चली आयी, किन्तु त्रिपुरी में ये लोग कब आये इस विषय पर प्रमाणों का अभी तक अभाव बना हुआ है । सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वामराजदेव के प्रादुर्भाव का उल्लेख मिलता है ।

सम्भवत: हर्ष के निधन के पश्चात् उत्तर भारत में व्याप्त असन्तोष एवं षड्यन्त्रों का पूर्ण लाभ वामराजदेव ने उठाया हो । जैसा कि मिराशी के वर्णन से ज्ञात होता है कि "वामराजदेव ने इसका लाभ उठाते हुए कालिन्जर पर आक्रमण कर वहाँ अपना प्रभुत्व स्थापित करते हुए बघेलखंड और बुन्देलखंड पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया । कालिन्जर में उसकी राजधानी होने के बाद भी नर्मदा के तट के प्रति उसके मोह न्र के कारण उसने अपनी दूसरी राजधानी त्रिपुरी में स्थापित की ।[2] वामराजदेव से ही कल्चुरियों को चेध या चेदि देश का स्वामी कहा जाता था । जैसा कि विदित है कि चेदि देश यमुना और नर्मदा के मध्य का प्रदेश कहलाता था । साथ ही उसके

---

1. मजूमदार आर.सी., एशियन्ट इंडिया, पृ. 291

2. मिराशी वा.वि., कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ. 12-13

वंशजों[1] ने उसे अत्यन्त सम्मान सूचक शब्दों जैसे परमभट्टारक, महाराजाधिराज परमेश्वर, परम माहेश्वर, वामदेव पादानुध्यात आदि विश्लेषणों से सम्बोधित किया है ।

वामराजदेव के पश्चात् शंकरगण का उल्लेख मिलता है । शंकरगण के दो शिलालेख सागर और कटनी-मुड़वारा प्रदेश के प्राप्त हुए है ।[2] परन्तु ऐसा समझा जाता है कि वामराज और शंकरगण के मध्य लगभग तीन पीढ़ियों का अन्तर रहा होगा । उनके मध्य सिंहासन पर कौन था इसका कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता है । पुन: शंकरगण के लगभग 100 वर्षों पश्चात लक्ष्मणराज का नाम आता है । उसका शासनकाल लगभग 825-45 के मध्य माना जाता है । परन्तु इसके सम्बन्ध में निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि वह कल्चुरी था अथवा राष्ट्रकूट प्रतिनिधि, क्योंकि करीतलाई में प्राप्त जिस खण्डित शिलालेख में उसके नाम का उल्लेख हुआ है उसमें राष्ट्रकूट राजा गोविन्द चतुर्थ और उसके पुत्र अमोघवर्ष प्रथम की विजयों का वर्णन भी है ।[3]

1· डा· मिराशी, कुल पाँच कल्चुरी राजाओं के ताम्रपत्रों का उल्लेख करते हैं, कर्ण, यशकर्ण, गणकर्ण, जयसिंह और विजयसिंह {देखिये - <u>कल्चुरि नरेश और उनका काल</u>, पृ· 13} जबकि बी·एस·पाठक कुल सात राजाओं के ताम्रपत्रों का उल्लेख किया है, जिसमें गयाकर्ण के स्थान पर नरसिंह तथा शंकरगण एवं त्रैलोक्य वर्मन का अतिरिक्त वर्णन है {देखिये - हिस्ट्री आफ दि शैव कल्ट्स इन नार्दन इंडिया, पृ· 36}

2· एनल्स आफ दि भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टिट्यूट, पृ· 35, पृ· 20, <u>का·इं·इं·</u>, 4-1, पृ· 175, 76, 78

3· <u>का·इं·इं·</u>, 4, लेख, 37

जिसके फलस्वरूप एक धारणा यह भी पायी जाती है कि तत्कालीन कल्चुरि नरेश राष्ट्रकूटों के अधीन थे ।

इस प्रकार यदि वामराजदेव को ही त्रिपुरी का संस्थापक मान भी लिया जाये तब भी काकल्लदेव को ही त्रिपुरी का सर्वप्रथम स्वतंत्र शासक माना जाता है । लक्ष्मणराव के पश्चात् कोकल्लदेव का नाम आता है । सम्भवत: वह 842-5 के मध्य राजसिंहासन पर बैठा होगा ।[1] उसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि वह एक महत्वाकांक्षी राजा था । उसने गुर्जर प्रतिहार राजा भोज को पराजित कर अंत में उसे अभयदान दिया था । बाद में बंगाल के राजा देवपाल और भोज प्रथम के युद्ध में उसने भोज की सहायता की थी, तथा तुरूषों को पराजित किया था । कोकल्लदेव ने चन्देल एवं राष्ट्रकूटों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर अपने साम्राज्य का विस्तार किया । संभवत: उसने 35 या 40 वर्षों तक शासन किया ।[2] कहा जाता है कि उसके 18 पुत्र थे जिनमें से बड़ा पुत्र त्रिपुरी का राजा हुआ तथा शेष पुत्रों में से किसी एक ने रतनपुर शारणा की स्थापना की थी ।

शंकरगण द्वितीय, बालहर्ष, युवराजदेव :-

कोकल्लदेव के पश्चात शंकरगण द्वितीय सिंहासनारूढ़ हुआ, उसे प्रसिद्ध धवल, मुग्धतुंग और रणविग्रह आदि विशलेषणों से सम्बोधित किया गया था, उसने पूर्वी समुद्र के किनारे तक अपनी विजय का पताका फहराया तथा कोशल नरेश से पाली छीन लिया था और अपने भाई को वहाँ का प्रमुख नियुक्त किया था । बाद में अपने बहनोई

---

1. श्री शुक्ल, इ.खं., पृ. 29

2. डा. मजूमदार इसे 845-88 ई. के मध्य मानते हैं, देखिये, दि एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ. 87-88

राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण द्वितीय की सहायता करते समय किरणपुर में चालुक्य नरेश विजयादित्य तृतीय द्वारा पराजित हुआ था ।[1]

ऐसा ज्ञात है कि लगभग 910 ई॰ में बालहर्ष सिंहासन पर बैठा था, जिसे शंकरगण द्वितीय का पुत्र बताया जाता है, किन्तु उसके शासन के सम्बन्ध में भी कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है । समझा जाता है कि उसकी मृत्यु नि:सन्तान हुई होगी क्योंकि तत्पश्चात उसका भाई युवराजदेव 915 ई॰ के लगभग सिंहासन पर बैठा । वह त्रिपुरी के सिंहासन पर अत्यधिक प्रसिद्ध हुआ । उसके सम्बन्ध में बिल्हेरी के शिलालेख से जो विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक शक्तिशाली पराक्रमी राजा होने के साथ ही शैवमतावलम्बी, लोककल्याणकारी तथा विद्वानों का आश्रय दाता था । वह स्त्री सौन्दर्य का प्रशंसक था तथा काश्मीर, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात और कर्नाटक की कन्याओं के साथ उसके सम्बन्ध स्थापित हुए थे ।[2] उसने अपनी विजयों में मालवा और कौशल के नरेशों को पराजित किया था जिससे उसे उज्जयिनी भुजंग की उपाधि प्राप्त हुई । सम्भवत: उसने दक्षिणी राजाओं के महासंघ को पराजित किया था जिसके फलस्वरूप कवि राजशेखर ने उसके दरबार में "विद्धशाल भंजिका" नामक नाटक लिखा था ।[3]

चन्देल लेखों से यह पता चलता है कि युवराजदेव यद्यपि यशोवर्मन से पराजित हुआ था, परन्तु उसके राज्य का कोई भाग छीना नहीं गया, लगभग उसी समय राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने कल्चुरियों को बुरी तरह पराजित किया जिसके फलस्वरूप सम्पूर्ण डाहल मंडल

1॰ श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 30, आर॰सी॰मजूमदार, दि एज आफ इम्पीरियल कन्नोज, पृ॰ 87-89

2॰ का॰इ॰इं॰ 4,1, पृ॰ 218

3॰ श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 30

उसकी कृपा पर आश्रित हो गया । सम्भवत: राष्ट्रकूट अधिक दिनों तक डाहल मंडल पर शासन न कर सके और युवराजदेव ने उन्हें शीघ्र ही पराजित कर डाहल मण्डल से भगा दिया ।[1] उसके ही काल में कर्पूर मंजरी, बालरामायण, बालमहाभारत, काव्यमिमांसा तथा सोमशंभु पद्धति नामक अनेक ग्रन्थों की रचना हुई थी । उसने और उसकी पत्नी रानी नोहला ने अनेक शैव मन्दिर एवं मठों का निर्माण करवाया, जिनमें चन्द्रेही, गुर्गीमसोन, विल्हेरी तथा त्रिपुरी में स्थित गोलकी मठ आदि अत्यधिक उत्कृष्ट कला के नमूने हैं । कहा जाता है कि उसने गोलकी मठ के प्रबन्ध हेतु सद्भावशंभु नामक आचार्य को तीन लाख गाँव दिये थे, सम्भवत: उस समय डाहल प्रदेश में नौ लाख गाँव थे ।[2] उसे चक्रवर्तिन एवं त्रिकलिंगाधिपति उपाधियों से विभूषित किया गया था ।[3]

<u>लक्ष्मणराव, शंकरगण द्वितीय, युवराजदेव द्वितीय</u> :-

युवराजदेव के पश्चात उसका पुत्र लक्ष्मणराज 950 ई॰ के लगभग त्रिपुरी के सिंहासन पर बैठा । उसने पूर्वी बंगाल, उड़ीसा, दक्षिण कोशल, लाट और गुर्जर नरेशों को पराजित किया था । लक्ष्मणराज ने सोमनाथ का दर्शन कर वहाँ अपार धन सम्पत्ति अर्पित की थी ।[4] केमूर में प्राप्त शिलालेख से यह विदित होता है कि उसने अपनी पुत्री बोंथा का विवाह चालुक्य सम्राट विक्रमादित्य चतुर्थ से की थी जिसके

1· डा॰ मिराशी ने लिखा है कि पयोष्णर के किनारे युद्ध में कल्चुरी सेना विजयी हुई इसमें चतुर्थ गोविन्द राष्ट्रकूट पराजित हुआ (देखिये <u>कल्चुरी नरेश और उनका काल</u>, पृ॰16) यहाँ चतुर्थ गोविंद कौन था यह स्पष्ट नहीं हो पाया है । हो सकता है कि चतुर्थ गोविन्द कृष्ण तृतीय का पारिवारिक सदस्य रहा हो ।

2· मध्यप्रदेश का इतिहास पृ॰ 19

3· <u>जबलपुर म॰ जि॰गजे॰</u>, 1969, पृ॰ 64

4· का॰इं॰इं॰, 8 4-1, पृ॰ 221

पुत्र तैलप द्वितीय ने राष्ट्रकूटों को पूर्णत: पराजित कर चालुक्य साम्राज्य की स्थापना की थी । लक्ष्मणराज के ही समय में उसके मंत्री सोमेश्वर ने विष्णु बाराहावतार के मंदिर का निर्माण करवाया था ।

लक्ष्मणराज का पुत्र शंकरगण द्वितीय सम्भवत: 970 ई॰ के आसपास सिंहासन पर बैठा था किन्तु इसके सम्बन्ध में हमें कोई विशेष जानकारी नहीं प्राप्त होती है । सम्भवत: वह किसी चन्देह शासक कृष्ण से पराजित हुआ था ।

उसके पश्चात उसका छोटा भाई युवराजदेव द्वितीय राजा हुआ । उसी के समय में तैलप द्वितीय ने उस प्रदेश पर आक्रमण किया था । परमार शासक मुंज ने भी त्रिपुरी पर आक्रमण कर उसे लूट लिया तथा उसके अनेक प्रमुख सैन्य अधिकारियों का वध कर दिया फल-स्वरूप युवराज द्वितीय को त्रिपुरी से भागना पड़ा, उसके बाद मंत्रियों ने कोकल्लदेव द्वितीय को राजा बनाया । उस समय तक कल्चुरी शक्ति का अधिकतम ह्रास हो चुका था । यद्यपि अपने शासन काल में कोकल्ल देव द्वितीय ने गुर्जर, दक्षिणापथ, कुन्तल तथा गौंड शासक महिपाल को पराजित किया, किन्तु उसकी यह विजयें कल्चुरी शक्ति को पुन: सुदृढ करने की एक कड़ी मात्र ही कही जा सकती हैं ।

कोकल्लदेव द्वितीय, गांगेय देव, कर्ण देव :-

कोकल्लदेव द्वितीय का उत्तराधिकारी गांगेयदेव लगभग 1015 ई॰ में सिंहासन पर बैठा, सम्भवत: वह प्रारम्भ में चन्देलों के अधीन था ।[1] सर्वप्रथम उसने परमार एवं चोल नरेश से मित्रता स्थापित कर चालुक्य नरेश पर आक्रमण किया, परन्तु अपने अभियान में सफल न हो सका । बाद में उसने उड़ीसा नरेश शुभकर द्वितीय सहित समुद्र तटीय

1॰ मिराशी वा॰वि॰, कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 21

अनेक राजाओं को पराजित कर वहाँ अपना विजय स्तम्भ स्थापित किया । यद्यपि अपने शासनकाल में वह चालुक्य नरेश जयसिंह द्वितीय तथा भोज परमार से पराजित हुआ था[1] तथापित अन्तत: उसका आधिपत्य डाहलमंडल के अतिरिक्त कुन्तल, उड़ीसा और कांगडाघाटी के साथ ही प्रयाग, बनारस और मगध तथा था । उसने वास्तव में त्रिपुरी के कल्चुरी शक्ति को पुन: स्थापित किया । उसने सोने के सिक्के चलाये थे तथा अपनी विजयों के उपलक्ष में विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी । ऐसा ज्ञात होता है कि गांगेय देव अपने अंतिम दिनों में राज सिंहासन कर्णदेव को सौंपकर अपनी रानियों सहित प्रयाग चला गया जहाँ 22 जनवरी 1041 ई॰ को (फ्लीट के अनुसार) उसकी मृत्यु हो गयी ।[2]

गांगेयदेव से ग्र कर्णदेव या लक्ष्मीबाई कर्ण ने त्रिपुरी का सिंहासन प्राप्त किया । नि:सन्देह वह कल्चुरी वंश का सबसे प्रतापी राजा कहा जा सकता है । उसने तत्कालीन पूर्वी बंगाल के शासन को पराजित कर ब्रजवर्मा को वहाँ सिंहासनारूढ़ किया और उससे अपनी कन्या वीरश्री का विवाह कर दिया[3] । अपने अंतिम समय में उसे पराजयों का सामना करना पड़ा था जिसमें पाल नरेश विग्रहपाल तृतीय, चालुक्य सोमेश्वर प्रथम, परमार उदयादित्य, कीर्तिबर्मन तथा भीम प्रथम से उसकी पराजय का वर्णन मिलता है । तथापित उसकी विजयों के वर्णन स्वरूप रासमाला में लिखा गया है कि 136 राजा उसके चरण कमलों की वन्दना करते थे ।[4] हो सकता है इसमें अतिशयोक्ति का सहारा

1· का॰इं॰इं॰, 4-2, पृ॰ 408, 4-1, पृ॰ 273, मिराशी, कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 21

2· मध्यप्रदेश का इतिहास पृ॰ 20

3· मिराशी वा॰वि॰, कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 23

~~4~~· मध्यप्रदेश का इतिहास पृ॰ 21

4· हीरालाल रा॰ब॰, मण्डला मयूख, पृ॰ 15

लिया गया हो, परन्तु प्रमाणों से ऐसा विदित होता है कि कर्ण ही एकमात्र शासक था जिसने लगभग 1052 ई॰ में अपना द्वितीय राज्याभिषेक करवाया था ।[1]

कल्चुरी शासकों का अवसान :-

कर्ण के पश्चात लगभग 1240 ई॰ तक गढ़ा मण्डला प्रदेश पर कल्चुरी शासन था । जिसमें क्रमशः यशकर्ण, गयाकर्ण, नरसिंहदेव, जयसिंह और विजयसिंह त्रिपुरी के सिंहासन पर बैठे, परन्तु इनके शासन काल में कल्चुरियों की शक्ति का निरन्तर ह्रास होता गया । प्र यशकर्ण के समय में ही कल्चुरी राज्य डाहल देश तक सीमित हो गया था । उसके उत्तराधिकारियों के समय में क्रमशः सभी अधीन शासक भी शासक भी स्वतन्त्र हो गये यहाँ तक रतनपुर के कल्चुरी शासक ने भी स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया ।

गढ़ा मण्डला प्रदेश पर कल्चुरीवंश का अंतिम शासक विजय सिंह को माना जाता है, यद्यपि कहीं कहीं अजयसिंह का नाम महाराजकुमार या युवराज के रूप में प्राप्त होता है, किन्तु इतिहास में उसके सिंहासन रूढ़ होने पर सन्देह व्यक्त किया जाता है । विजयसिंह लगभग 1212 ई॰ में बघेलखंड का अधिकांश भाग भाग हार चुका था । गढ़ा मण्डला प्रदेश क्षेत्र में प्राप्त सिक्कों[2] से ऐसा आभास होता है कि अन्ततः उसने यादव नरेश सिंहग की अधीनता स्वीकार कर लिया था । इस प्रकार गढ़ा मण्डला प्रदेश पर छटवीं शताब्दी में जिस कल्चुरी वंश की नींव रखी गयी थी वह अपने ऐश्वर्य एवं शक्ति के चर्मोत्कर्ष पर पहुँच कर पुनः धराशायी हो गया ।

1· मिराशी वा॰वि॰, कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 25

2· जर्नल आफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी आफ इंडिया, 8, पृ॰ 151

अस्थिरता का काल :-

यद्यपि कल्चुरियों के पश्चात गढा मण्डला प्रदेश पर गोंड सत्ता के पनपने का उल्लेख मिलता है परन्तु कल्चुरियों और गोंड शासकों के मध्य लगभग दो शदी तक इस प्रदेश पर राजनीतिक अस्थिरता बनी रही जिसमें अनेक राजाओं का हस्तक्षेप होता रहा । वस्तुत: विजयसिंह के पश्चात यद्यपि कल्चुरी डाहल प्रदेश पर विद्यमान रहे होगें तथापि उनकी सत्ता स्वतन्त्ररूप से जीवित न रही ।

प्रारम्भ में इस प्रदेश पर चन्देलों का प्रभुत्व स्थापित हुआ । जबलपुर के निकट तक चन्देलों के आधिपत्य का उल्लेख प्राप्त होता है । चन्देलों के किलों की सूची में गढ़ा का उल्लेख मिलता है तथा यहां उनके शिलालेख भी पाये जाते है ।[1]

बतियागढ और राहतगढ़ के शिलालेखों[2] से यह विदित होता है कि दमोह क्षेत्र पर वलबन की योग्यता के फलस्वरूप सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद (1246-60 ई॰) तथा उसके समानान्तर परमार शासक जयवर्धन द्वितीय का अधिकार था । कुछ समय पश्चात ही बलवन के अयोग्य उत्तराधिकारियों के समय चन्देलों को पुन: अपनी शक्ति दृढ करने का अवसर प्राप्त हुआ । हिन्डोरिया में प्राप्त 1287 ई॰ के शिलालेख से यह विदित होता है कि इस प्रदेश पर प्रतिहार वंशीय सामन्त वाघदेव, चन्देलों के अधीन प्रशासक था, परन्तु अलाउद्दीन खिलजी के विजयी अभियान के आगे वाघदेव को भी नतमस्तक होना पड़ा और 1309

---

1. मिराशी वा॰वि॰, कल्चुरी नरेश और उनका काल, पृ॰ 32
2. एपिग्राफिका इंडिका, पृ॰ 44-45 इन्स्क्रिपशन्स इन दि सी॰पी॰एन्ड बरार, पृ॰ 56 क्र॰ 70, इंडियन एंटिक्वेरी, 20, पृ॰ 84

ई॰ में इस प्रदेश पर खिलजी सत्ता स्थापित हो गयी ।[1] ऐसा विदित होता है कि उसी समय लगभग 1310 ई॰ में यादव राजा रामचन्द्र ने गढ़ा मण्डला प्रदेश पर आक्रमण किया । पुन: बटियागढ में प्राप्त फारसी लिपि के शिलालेखों से इस प्रदेश पर गयासुद्दीन तुगलक और मुहम्मद तुगलक के आधिपत्य की जानकारी मिलती है ।[2]

इसके पश्चात गढ़ा मण्डला प्रदेश का इतिहास पुन: अंधकार मय हो जाता है । हो सकता है कि इस कालक्रम में सत्ता छोटेछोटे सामंतों एवं जागीरदारों के हाथों तक सिमट गयी हो तथा इन्हीं में से किसीएक शक्ति के प्रादुर्भाव ने कालान्तर में गढ़ा मण्डला के सशक्त गोंड राजवंश की नींव रखी हो ।

गोंड शासक :-

नि:सन्देह कल्चुरियों के पतन के पश्चात गढ़ा मण्डला प्रदेश में व्याप्त राजनीतिक अस्थिरता ने ही गोंड राज्य के उदय का मार्ग प्रशस्त किया । गोंड सत्ता के संस्थापक के विषय में दो अनुश्रुतियों का उल्लेख मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि सकतू गोंड की कन्या तथा इच्छाधारी नाग के पुत्र धारूशाह के पौत्र यादव राय ने गोंड राज्य की नींव रखी ।[3] दूसरी अनुश्रुति के अनुसार गोदावरी के निकट

1· लाल, खिलजी वंश का इतिहास, पृ॰ 234, अबुल फजल ने लिखा है कि ई॰ 1564 में आसफखाँ की विजय के बाद जब मुगल सेना चौरागढ़ पहुँची तो आसफ खाँ को वहाँ अलाउद्दीन की सोने की अशर्फिया से भरे सौ घड़े प्राप्त हुए (देखिये - अकबरनामा, अनु॰ बेवरिज, 2 पृ॰ 332)

2· इस्क्रिप्शन्स सी॰पी॰एन्ड बरार, पृ॰ 59, दमोह दीपक, पृ॰ 13

3· श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 37, मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले, पृ॰ 49

सेहलगाँव[1] के पटेल जोधसिंह[2] का पुत्र यादवराय लाँजी दरबार में नौकर था । एक बार अपने स्वामी के साथ अमरकंटक की मात्रा के दौरान उसने स्प्न स्वप्न में राम, लक्ष्मण, सीता, हनुमान और नर्मदा माँ को देखा तथा उसी स्वप्न में उसने स्वयं के राजा होने का आभास किया । स्वप्न देखने के कुछ दिनोपरान्त गढ़ा मण्डला प्रदेश के तत्कालीन राजा नागदेव ने अपनी एक मात्र सन्तान रत्नावली के लिए स्वयंवर आयोजित की थी, जिसमें वर ढूँढने का निर्णय एक नीलकंठ पक्षी पर रखा गया था, वह नीलकंठ यादवराय के सिर पर बैठा, जिसके फलस्वरूप रत्नावली का ब्याह यादवराय से हो गया । कालान्तर में यही यादवराय गढ़ा मण्डला के सिंहासन पर बैठा । इन समस्त घटना क्रम में सुरभि पाठक उसका सहयोगी था अत: सिंहासनारोहण के पश्चात वह यादवराय का प्रधानमंत्री बना । इसी यादवराय को गोंडवंश का संस्थापन माना जाता है । उसके राज्यारोहण की तिथि के सम्बन्ध में सर्वाधिक मतभेद[3]

---

1. श्री शुक्ल, इ.खं.,पृ. 37, पर मोठाकठगाँव तथा हीरालाल रा.ब. मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ. 76 पर मोणकट लिखा गया है ।
2. मध्य प्रदेश का इतिहास, प्र तथा श्री शुक्ल, इ.खं., पृ. 37 पर भोजसिंह लिखा गया है ।
3. फेल इसे 627 ई., स्लीमेन 358 ई., कनिघंम 664 ई. तथा वार्ड और गढेशनृप वर्णनम् 158 ई. मानते है (देखिये, क्रमश: एशियाटिक रिसर्चेज, 15, 1825, पृ. 437, ज.ए.सो.ब. 68, 1837, पृ. 621, आर्कियालॉजिकल सर्वे आफ इंडिया रिपोर्ट्स 17, 1881-82 पृ. 47-54 रिपोर्ट आन दि लेण्ड रेवेन्यू सेटलमेंट आफ दि मण्डला डिस्ट्रिक्ट, 1868-69, पृ. 15 गढेशनृपवर्णनम् , भावे जी.व्ही. नागपुर यूनिवर्सिटी जर्नल, 6, 1940, पृ. 193

पाया जाता है। रामनगर शिलालेख तथा गढेशनृपवर्णनम् में यादवराय के पश्चात क्रमशः 54 और 63 राजाओं की सूची प्राप्त होती है, जिनमें अधिकांशतः कल्पित प्रतीत होते है। वस्तुतः गोंड शासकों की प्रमाणिक, जानकारी हमें खरजी के राज्यारोहण, जिसकी तिथि लगभग 1440 ई.[1] मानी जाती है, से प्राप्त होता है। अतः इस ग्रन्थ में गोंड ह शासकों का वर्णन खरजी के समय से ही किया जाना उचित होगा। खरजी का उल्लेख अकबरनामा में इस प्रकार प्राप्त होताहै कि वह अपनी योग्यता और चालाकी से प्रदेश के अन्य शासकों से पेशकश वसूल किया करता था। इस प्रकार उसने एक सौ घुड़सवार और दस हजार पैदल कीसेना तैयार कर ली[2]। यहां से गढ़ा मण्डला के गोंड राज्य का उत्कर्ष प्रारम्भ होता है। खरजी ने सम्भवतः 1460 ई. तक राज किया।[3] खरजी के बाद लगभग 20 वर्षों तक उसके उत्तराधिकारी गोरक्षदास ने शासन किया होगा, परन्तु उसके सम्बन्ध में स्पष्ट साक्ष्य प्राप्त नहीं होते है।

ऐसा समझा जाता है कि सुखनदास क्र संगिनदास लगभग 1480 ई. में सिंहासन पर बैठा। सम्भवतः उसने राजपूतों के सहयोग से लगभग पांच सौ घुड़सवार तथा साठ हजार पैदल की सेना एकत्र करके गोंड सत्ता को सुदृढ बनाया।

<u>संग्रामशाह</u> :-

लगभग 1500 ई. में सांगिनदास का उत्तराधिकारी अर्जुनदास गढा मण्डला में सिंहासनारूढ़ हुआ। अबुल फजल सिंहासनारोहण के समय उसकी उम्र 40 वर्ष बताता है।[4] किन्तु दुर्भाग्यवश उसे सिंहासन पर बैठने

---

1. <u>गढ़ा के गोंड राज्य</u>, पृ. 22
2. <u>अकबरनामा</u>, अनु. बेवरिज, 2 पृ. 325-26
3. <u>गढ़ा के गोंड राज्य</u>, पृ. 22
4. <u>अकबरनामा</u>, अनु. बेवरिज, 2, पृ. 325-6

के साथ ही अपने जेष्ठ पुत्र अमानदास वास्तविक नाम आम्हणदास[1] के विद्रोह का सामना करना पड़ा, जो कि युवावस्था से ही उद्दण्ड व दुष्कर्मी था, कालान्तर में आम्हाणदास ने अपने पिता की हत्या कर गढ़ा मण्डला का सिंहासन प्राप्त किया । उन्हीं दिनों यह समाचार भाठ [रीवा] के राजा वीरसिंह देव को प्राप्त हुआ जो कि अ सिकन्दर लोदी की सेवा में तथा अर्जुनदास का मित्र था । उसने एक विशाल सेना सहित इस प्रदेश परचढ़ाई करदी फलस्वरूप आम्हणदास भाग खड़ा हुआ परन्तु बाद में उसने पश्चातप करते हुए वीरसिंह देव से माफी मांगी, तब वीरसिंह देव ने उसका राज्य वापस देते हुए उसे गढ़ा मण्डला का राजा मान लिया ।[2] इस प्रकार पूर्णतः एक स्वतंत्र शासक के रूप में लगभग 1510 ई. में आम्हणदास गद्दी पर बैठा ।[3] आम्हणदास के समय का एक सोने का सिक्का प्राप्त हुआ है जिस पर "संग्राम साहि" अंकित है,[4] समझा जाता है कि आम्हणदास को गुजरात के सुलतान बहादुरशाह से रायसेन के विजयोपक्ष्य में संग्रामशाह की उपाधि प्रे प्राप्त हुई थी ।[5] बाद में वह इसी नाम से सर्वाधिक प्रसद्धि हुआ ।

आम्हणदास गढ़ा मण्डला राज्य को गोंड वंश का प्रथम प्रतापी एवं महत्वाकांक्षी शासक था । रामनगर की प्रशस्ति में उसकी अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा की गयी है, जिसके आधार पर स्लीमेन ने उसके

---

1. ठरका के दो सती लेखों में आम्हणदास लिखा गया है [देखिये हीरालाल, दमोह दीपक, पृ. 78]
2. सिंह जीतन, रीवा राज्य दर्पण, पृ. 53
3. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 25
4. मिराशी वा.वि., संशोधन मुक्तावली [सरतिसरा] 1958 पृ. 211-12
5. अकबरनामा, अनु. बेवरिज, 2, पृ. 325

राज्य विस्तार के सम्बन्ध में 52 गढ़ो का उल्लेख किया है ।[1] डा॰ सुरेश मिश्र इसे त्रुटिपूर्ण मानते है उनके अनुसार मात्र 43 गढ़ संग्रामशाह के क्षेत्र के अन्तर्गत हो सकते थे ।[2] इसी प्रकार विल्स[3] द्वारा 52 गढ़ों का सत्यापन भी सोलहवी शती के गढ़ा मण्डला राज्य के विस्तार के सम्बन्ध में उचित प्रतीत नहीं होता है । वास्तव में संग्रामशाह ‖आम्हणदास‖ के राज्य विस्तार के सम्बन्ध में केवल भ्रांतियां ही प्राप्त होती हैं, कोई प्रमाणिक जानकारी नहीं, तथापित यह कहा जा सकता है कि वर्तमान बालाघाट, सिवनी, छिन्दवाडा नरसिंहपुर,

---

1· ज॰आ॰ए॰सो॰आफ बंगाल, 68, 1837, पृ॰ 645-46 निम्न गढ़ थे:
1· गढ़ा 2· मारूगढ़ 3· पचेलगढ 4· सिंगोरगढ़, 5· आमोदा 6· कनौजा 7· वागमार 8· टीपागढ 9· रायगढ 10· परताबगढ 11 अमरगढ 12 देवहार 13· पाटनगढ 14· फतेहपुर 15· निमुआगढ 16· भँवरगढ 17· बरगी 18· धनसोर 19· चौरई 20· डोंगरताल 21· करवागढ 22· झाझनगढ 23· लाफागढ 24· संतागढ 25· दियागढ 26· बाँकागढ 27· पवाईकरही 28· शाहनगर 29· धमौनी 30 हटा 31· मड़ियादो 32· गढा कोट 33 शाहगढ़ 34· गढ पहरा 35· दमोह 36· रहली 37· इटावा 38· खिमलासा 39· गनौर 40 बारी 41· चौकीगढ 42· राहतगढ़ 43· मकडाई 44· कारूबाग 45· कुरवाई 46· रायसेन 47· भँवरासो 48· भोपाल 49· ओपदगढ 50· पनागढ़ 51· देवरी और 52· गौर झामर

2· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 23।

3· विल्स सी॰यू॰, दि॰राजगोंड महारानास आफ दि सतपुड़ा हिल्स पृ॰ 111-16

मण्डला जबलपुर और दमोह जिलों का पूरा भाग तथा सागर, होशंगाबाद, पन्ना, बिलासपुर, नागपुर, राजनंदगाँव जिले का कुछ भाग उसके साम्राज्य में सम्मिलित था। संग्रामशाह एक सफल कूटनीतिक शासक था। अपनी इसी योग्यता के फलस्वरूप उसने इब्राहिम लोदी तथा वीरसिंह देव जैसे शासकों के साथ मधुरसंबंध बनाये रखे तथा लगभग 33 वर्षों तक गढ़ा मण्डला राज्य को अपनी सेवायें अर्पित करते हुए गोंड वंश की सत्ता को सर्वाधिक शक्तिशाली बनाया। उसके समय में सिंगौरगढ़, गढ़ा, मण्डला और चौरागढ़ प्रमुख सैनिक केन्द्र थे।[1]

दलपतिशाह :-

संग्रामशाह की मृत्यु[2] के पश्चात दलपतिशाह लगभग 1543 ई. में राजा बना। दलपतिशाह को अपने पिता से एक विशाल एवं समृद्धशाली साम्राज्य विरासत में मिला। दलपतिशाह का विवाह महोबा की चंदेल शासक सालिवाहन की पुत्री दुर्गावति से हुआ था, जिसकी वीरता एवं शौर्य की प्रसिद्धी न केवल गढ़ा मण्डला के इतिहास में वरन् सम्पूर्ण भारत के इतिहास में एक नवीन अध्याय के रूप में वर्णित है। दलपतिशाह के समय में किसी युद्ध या विशाल घटना का उल्लेख

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 33, श्री शुक्ल, इ.खं., पृ. 41

2. अबुल फजल के वर्णन को यदि आधार माना जाये तो संग्रामशाह की मृत्यु की तिथि 1541 ई. ज्ञात होती है (अकबरनामा, अनु. बेवरिज, 2, पृ. 326-31) वर्तमान जिला गजेटियर भी इसी तिथि का उल्लेख करते हैं, परन्तु ब्रिटिश म्युजियम में सुरक्षित एक सिक्के के आधार पर इतिहासविद् मिराशी संग्रामशाह का शासन संवत 1600 (1543 ई.) तक मानते है (देखिये संशोधन मुक्तावली, 3, पृ. 209-12) यही तिथि सत्य के निकट भी प्रतीत होती है।

नहीं मिलता है, सिवाय इसके कि उसने अपनी राजधानी गढ़ा से सिंगोरगढ़ स्थानान्तरित की थी। एक अन्य घटना, परताबगढ़ पंडरिया के लोधी जमींदार द्वारा विद्रोह किये जाने पर उसे अपदस्थ करके शामचंद राजगोंड को पंडरिया की जमींदारी दिये जाने का उल्लेख मिलता है[1] समझा जाता है कि अपने पड़ोसी राज्यों से उसके अच्छे सम्बन्ध थे, किन्तु अधिक समय तक उसे राजसुख का सौभाग्य प्राप्त न हो सका तथा सिंहासनारोहण के 7 वर्ष पश्चात ही ई॰सन् 1550 में उसकी मृत्यु हो गयी।

दुर्गावती और वीरनारायण :-

दलपतिशाह की आकस्मिक मृत्यु ने गढ़ा मंडला राज्य को संकटापन्न कर दिया। उसका भाई चन्द्रशाह सिंहासनाकांक्षी था, परन्तु जनविरोध के फलस्वरूप भाग कर उसने ~~अ~~ चाँदा में शरण ली।[2] तब रानी दुर्गावती ने प्रमुख मंत्रियों की सलाह से अपने अल्पायु पुत्र वीरनारायण को राजा बनाया तथा शासन की बागडोर स्वयं सम्हाली।[3] सम्भवत: वीरनारायण उस समय तीन या पाँच वर्ष का था तथा दुर्गावती की उम्र लगभग 27 वर्ष थी। शासनसूत्र सम्हालने के साथ ही दुर्गावती ने अदम्य साहस और योग्यता का परिचय दिया। आधार कायस्थ तथा मान ब्राह्मण जैसे योग्य एवं विश्वासपात्र मंत्रियों के सहयोग से शासन कार्य संचालन आरम्भ किया। तत्कालीन राजधानी सिंगोरगढ़ से चौरागढ़ को स्थानान्तरित किया जो कि दुर्गम सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों के मध्य एक सुदृढ किला था। बाद में लगभग 1634 ई॰ तक यह स्थान गढ़ा मण्डला राज्य की राजधानी बना रहा। आरम्भ में सिवनी मालवा के मियाने अफगानों की एक टुकड़ी ने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण किया, किन्तु वे असफल हुए। बाद में अनेक अफगान दुर्गावती की सेना में शामिल हो गये तथा अपनी योग्यता से उच्च पदों पर

---

1. विलासपुर जि॰गजे॰, 1910, पृ॰ 332
2. ग्रान्ट डफ: सेन्ट्रल प्राविन्स गजेटियर, 1870, पृ॰ 143
3. अकबरनामा, अन॰ बेवरिज प॰ 326

नियुक्त होते रहे । उनमें शम्सखाँ मियानी एक महत्वपूर्ण सैन्याधिकारी था ।[1]

ई॰सन् 1556-62 के मध्य मालवा का शासक बाजबहादुर ने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण किया किन्तु बुरी तरह पराजित हुआ । इस युद्ध में उसका चाचा फतहखाँ मारा गया । फरिश्ता बाजबहादुर द्वारा दो बार आक्रमण किये जाने का उल्लेख करता है ।[2] निःसन्देह बाजबहादुर पर रानी दुर्गावती के विजय दुन्दुभी का स्वर चारों दिशाओं में फैल गया था । सम्भवतः उसके प्र यश की चर्चा मुगल सम्राट अकबर के दरबार तक भी पहुँची होगी और तब उसकी ईर्ष्यालु और साम्राज्यवादी नीति बलवती हो उठी हो, जो आगे चलकर कडा के सूबेदार आसफखाँ को गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने के लिए दी जाने वाली अनुमति में परिणत हो गयी ।

आसफखाँ का आक्रमण :-

रानी दुर्गावती के वैभव एवं सम्पन्नता से कडा मानिकपुर का सूबेदार अब्दुल मजीद आसफ खाँ आकर्षित हुए बिना न रह सका, उसने मुगल सम्राट अकबर से अनुमति लेकर 1564 ई॰ में गढ़ा मण्डला पर आक्रमण कर दिया, निश्चित ही इस आक्रमण के लिए अकबर को कारण ढूँढने की आवश्यक्ता नहीं थी ।[3] एक जनश्रुति के अनुसार अकबर ने ~~हेतु~~ दुर्गावती के पास एक चरखा भेजा, जिसका आशय था कि स्त्रियों का कार्य चरखा चलाना है न कि राज्य करना । प्रत्युत्तर में दुर्गावती ने सोने का एक जींजन भेजा, जिसका आशय था कि यदि मेरा काम

---

1. अकबरनामा, अनु॰बेवरिज, 2, पृष्ठ 329
2. श्रीशुक्ल - इ॰खं॰, पृ॰ 44
3. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 55

चरखा चलाना है तो तुम्हारा काम रूई पींजना है । इससे अकबर रूष्ठ हो गया । दूसरी तरफ रामनगर शिलालेख में आसफ खां के आक्रमण का कारण कर वसूली बताया गया है । वस्तुत: छ हजार सवार 12 हजार पैदल तथा तोपखाने से युक्त एक विशाल सेना सहित आसफखां ने गढा मण्डला पर चढ़ाई की । उस समय रानी दुर्गावती सिंगोरगढ में थी । पूर्व तैयारी के अभाव में दुर्गावती की सेना में ॠ भगदड़ मच गयी । केवल 500 सैनिक उसके पास शेष रहे तथापि दुर्गावती हिम्मत न हारते हुए युद्ध के लिए कटिबद्ध थी । सम्भवत: उस समय आधार सिंह कायस्थ ने उसे वस्तुस्थिति से अवगत कराते हुए संधि के लिए प्रेरित किया, किन्तु अपने सैनिकों के पलायन से क्षुब्ध दुर्गावती ने उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया । उसने अपमानजनक जीवन से सम्मान पूर्ण मृत्यु को श्रेयस्कर समझा । सिंगोरगढ से वह गढ़ा की ओर बढ़ी, किन्तु दुश्मन की त्वरित गतिविधि से गढ़ा से मण्डला की ओर कूच कर गयी । इस बीच आसफखां दमोह में रूककर अपनी सेना व्यवस्थित करने लगा । अत: समय का लाभ उठाकर दुर्गावती ने 2000 सैनिक संगठित कर लिया । तत्पश्चात उसने अपने योग्य अधिकारियों से परामर्श कर युद्ध के लिए सुरक्षित एवं उचित स्थान समझकर नरई[1] की ओर प्रस्थान किया । ऐसा समझा जाता है कि अन्त तक उसके पास कुल लगभग 500 सैनिक ही र गये थे, परन्तु उनमें अधिकांशत: अप्रशिक्षित थे । योजनानुसार शत्रु की एक टुकड़ी के घाटी में प्रवेश करते ही वे उन पर टूट पड़े । इस युद्ध में रानी की विजय हुई और शाही सेना का पीछा करती हुई दुर्गावती घाटी से बाहर निकल आयी ।

---

1. गढ़ा के पूर्व दिशा में एक दुर्गम स्थान है, जहां प्रवेश करना एवं बाहर निकलना बहुत ही कठिन समझा जाता था । उसके चारों तरफ पर्वत की विशाल श्रृंखला, जिसमें सामने गौर नदी तथा दूसरी तरफ नर्मदा नदी है ।

दुर्गावती का बलिदान :-

दूसरे दिन सुबह तक आसफखाँ अपने तोपखाने से घाटी की किलेबन्दी कर चुका था । अत: सुबह से ही तीर, बन्दूक, तलवार बर्छी, भाले व तोपखानों से घमासान युद्ध हुआ, दुर्गावती की ओर से शम्स खाँ मियाना और मुबारक बिलूच ने अत्यन्त बहादुरी का प्रदर्शन किया । स्वयं वीरनारायण ने भी तीन बार मुगल सेना को पीछे हटा दिया, परन्तु अन्त में स्वयं घायल हो गया । आधार कायस्थ की तत्परता से उसे युद्ध मैदान से सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया गया । दूसरी तरफ दुर्गावती भी बहादुरी के साथ अपने अनुचरों के कंधों से कन्धा मिलाकर संघर्ष करती रही । इस बीच क्रमश: दो तीर रानी दुर्गावती की कनपटी पर लगे, जिन्हें तुरन्त ही निकालकर दुर्गावती ने फेंक दिया परन्तु एक तीर का फल घाव में ही रह जाने के कारण असह्य वेदना से वह मूर्छित हो गयी । परिणाम स्वरूप दुर्गावती के सैनिक अपना साहस खो बैठे और युद्ध मैदान में उनके पाँव उखड़ने लगे । समयान्तरोपरान्त होश में आने पर मुगलों से घिरी हुईतथा अपनापराजय सुनिश्चित जानकर शत्रुओं के हाथ में पड़ने की अपेक्षा स्वयं पर कटार से आघात कर मृत्यु का वरण करती हुई दुर्गावती वीरगति को प्राप्त हुई ।[1]

रानी दुर्गावती की लगभग सभी समकालीन इतिहासकारों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है यहाँ तक कि मुगलों का दरबारी इतिहासकार अबुल फजल उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा करते हुए लिखता है कि वह साहसी थी तथा अपनी दूरदर्शिता से महान कार्य किया । आगे लिखता है कि वह सदैव शिकार पर जाती और बन्दूक से जानवरों का शिकार करती, उसकी आदत थी कि जब शेर दिखने का समाचार उसे मिलता तो वह

---

1. गढा के गोंड राज्य, पृ. 57

बिना
उसे मारे जल भी ग्रहण न करती थी ।[1]

नि:सन्देह रानी दुर्गावती में स्त्रियोचित सौन्दर्य और आकर्षण के साथ पुरूषोचित शौर्य, साहस और कर्मठता की कमी न थी । वह एक सहिष्णु,दानशील, प्रजापालक एवं कुशल प्रशासिका थी । जैसा कि जयगोविन्द ने लिखा है कि वह प्रजापालन में इतनी सचेत थी कि उसने लोकपालों को भी परास्त कर दिया ।[2]

वस्तुत: नरई का युद्ध मुगलों की गढ़ा मण्डला विजय का पहला चरण कहा जा सकता है गढा पर अधिकार करने के पश्चात आसफ खाँ तत्कालीन राजधानी चौरागढ़ की ओर रवाना हुआ, जहाँ वीर नारायण अपने सहयोगियों सहित विद्यमान था । लगभग दो माह पश्चात आसफ खाँ चौरागढ़ पहुँचा ।[3] अब तक वीर नारायण काफी स्वस्थ्य हो चुका था । उसके घाव भी लगभग ठीक हो चुके थे, उसने भी रानी दुर्गावती का अनुसरण किया और समर्पण की अपेक्षा युद्ध करते हुए मृत्युपान करना श्रेयस्कर समझा । अत: अपनी निर्बल स्थिति के बावजूद भी अपने थोड़े से सैनिकों को साथ लेकर उसने आसफ खाँ का सामना किया और अन्त में घमासान युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ । दूसरी तरफ किले के अन्दर उपस्थित स्त्रियों ने अपने बच्चों सहित अपनी इज्जत के रक्षार्थ जौहर व्रत का वरण किया । इस प्रकार रानी दुर्गावती और वीर नारायण की मृत्यु के साथ ही गढा मण्डला के सिंहासन पर गौंड वंश की सत्ता रूपी सूर्य को ग्रहण लगने लगा और यहीं से गौंड शक्ति का अवसान आरम्भ हो गया ।

1· अकबरनामा, अनु· बेवरिज, 2, पृ· 327-28

2· जर्नल आफ अमेरिकन सोसायटी, 7, 1860, पृ·7, श्लोक 22

3· गढ़ा के गौंड राज्य, पृ· 59

मुगल आधिपत्य में गोंड शासक :-

मुगल सुबेदार :-

चौरागढ़ से आसफ खाँ को अपार धन प्राप्त हुआ । समझा जाता है कि उसका कुछ अंश ही सम्राट को नजर किया था । इसी सम्बन्ध में अबुल फजल लिखता है कि उसने यह विचार नहीं किया कि मूल्यवान मोती और जवाहरात भाग्य ने बादशाह के लिए निर्मित किये हैं और स्वयं को महत्वपूर्ण मानकर उसने अपने सम्मान रूपी मस्तक पर विनाश की धूल डाल ली ।[1]

तत्पश्चात आसफ खाँ ने गढ़ा मण्डला की सुबेदारी सम्हाल ली । उसके बाद मेंहदी कासिम खाँ इस प्रदेश का सूबेदार नियुक्त हुआ । परन्तु दुर्गावती की मृत्योपरान्त प्रदेश में व्याप्त अव्यवस्था को सुधारने में असफल रहा । अत: निराश होकर कन्दहार चला गया ।[2]

मेंहदी कासिम खाँ के पश्चात क्रमश: शाह कुली खाँ नारंगी एवं काकर अली खाँ {संयुक्त रूप से} राम सुर्जन हाड़ा, सादिक खान, इस्माइल कुली खाँ, बाकी खाँ, अजीम कोका तथा जमालुद्दीन हुसैन का नाम गढा मण्डला के मनसबदार के रूप में पाया जाता है । इनके अतिरिक्त गढा मण्डला के सन्दर्भ में शाहम खाँ का भी उल्लेख मिलता है, किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि वह मंसबदार अथवा सैनिक अभियान में यहाँ आया था ।[3]

चन्द्रशाह, मधुकर शाह एवं प्रेमशाह :-

इस प्रकार दुर्गावती की मृत्यु के बाद गढ़ा मण्डला प्रदेश लगभग 25 वर्षो तक प्रत्यक्ष रूप से मुगल आधिपत्य में रहा । इन 25

---

1. अकबरनामा, बेवरिज, 2, पृ. 332
2. मासिर-उल उमरा, 1, पृ. 504-5
3. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 75

वर्षों तक गढ़ा मण्डला के सिंहासन पर गोंड वंश के चन्द्रशाह और मधुकर शाह नामक नाममात्र दो शासक हुए, जिन्हें मुगल मंसबदारों के अधीन रखा गया था । इनमें चन्द्रशाह को आसफ खां की वापसी के तुरन्त बाद वहां का शासक मान लिया गया था ।[1]

कुछ समय बाद मधुकर शाह ने चन्द्रशाह और उसके बड़े पुत्र की हत्या करके सिंहासन पर कब्जा कर लिया । सम्भवत: सम्राट के प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिए मुगल दरबार में उपस्थित होने वाला वह पहला शासक था, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अपने कुकृत्य के लिए वह पश्चाताप की ज्वाला से मुक्त नहीं हो पाया था और कुछ समय पश्चात ही मण्डला के पास देवगांव में एक वृक्ष की खोह में बैठकर आत्मदाह कर लिया ।

मधुकरशाह के बाद प्रेमशाह[2] 1586-7 ई॰ में राजा हुआ, उसके समय से गढ़ा मण्डला में मुगल मंसबदारों का उल्लेख नहीं मिलता है शायद उसी समय से गढ़ा मण्डला के भाग्य ने करवट बदली हो, ऐसा प्रतीत होता है कि उसे मुगल आधीनता में स्वतन्त्र शासक का अधिकार प्राप्त हुआ था । मुगल सम्राट जहांगीर के भ्रमण काल में उसने माण्डू पहुंचकर 19 जून 1617 ई॰ को जहांगीर को सात हाथी भेंट किया ।[3] लगता है जहांगीर इससे अत्यधिक प्रसन्न था । जैसा कि मुंशी देवी प्रसाद ने लिखा है कि 21 अगस्त 1617 ई॰ को गढ़ा के राजा प्रेमनारायण को हजारी जात और 500 सवारों का मंसब मिला

1॰ गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 75

2॰ जहांगीरनामा में इसे प्रेमनारायण कहा गया है {जहांगीरनामा, मुंशीदेवी प्रसाद, पृ॰ 266}

3॰ जहांगीरनामा, मुं॰दे॰प्र॰,पृ॰ 266, अनु॰ ब्र॰र॰दा॰, पृ॰ 442

उसी के देश में उसे जागीर प्रदान की गयी ।[1] इस कृपा के पश्चात प्रेम शाह कुछ समय मुगल दरबार में व्यतीत कर 27 नवम्बर 1617 ई॰ को गढ़ा मण्डला के लिए वहाँ से वापस चल पड़ा ।[2] प्रेम शाह के गढ़ा मण्डला के ~~लिए वहां~~ आने के पश्चात ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि किन्हीं व्यक्तिगत कारणों से 1634 ई॰ में ओरछा के राजा जुझारसिंह बुन्देला ने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण किया और शीघ्र ही चौरागढ़ का किला घेर लिया । लगभग नौ माह तक घेरा डाल कर भी अथक प्रयासों के बावजूद भी किला भेदने में सफल न हो सका अत: अन्त में अपने आपको असमर्थ पाकर उसने विश्वासघात का सहारा लिया, जिसके परिणामस्वरूप अपने 300 साथियों सहित युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की तथा जुझार सिंह ने चौरागढ़ किले पर अधिकार कर लिया ।[3] किन्तु उसका यह अधिकार अधिक दिनों तक स्थायी न रह सका । वस्तुतत: मुगल सम्राट के हस्तक्षेप के कारण उसे चौरागढ़ से भागना पड़ा बाद में ऐसा विदित होता है कि चाँदा के जंगलों में गौंडों ने जुझार सिंह और उसके पुत्र की हत्या कर दी ।

1· जहाँगीरनामा, मुं·दे·प्र·पृ· 272, अनु·ब्र·र·दा· पृ· 451

2· जहाँगीरनामा, अनु· ब्रजरत्नदास, पृ· 474

3· गढ़ा के गौंड राज्य, पृ· 83

4· श्री शुक्ल, इ·खं· पृ· 50

हृदय शाह एवं उसके उत्तराधिकारी :-

सन् 1635 ई. में हृदयशाह को प्रेम शाह का उत्तराधिकारी मान लिया गया, हृदयशाह के समय में गढ़ामण्डला प्रदेश का एक बड़ा क्षेत्रफल मुगल नियंत्रण में चला गया, जिनमें चौरागढ़, धमोनी प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है, जहां मुगल फोजदार नियुक्त थे।

1651 ई. में जुझारसिंह के भाई पहाड़सिंह बुन्देला को पदोन्नति के फलस्वरूप जागीरदार के रूप में चौरागढ़ भेजा गया, जिसके भय से भाग कर रींवा में शरण ली। पहाड़सिंह ने हृदयशाह को शरण देने के कारण रींवा पर चढ़ाई कर दी.। परिणामस्वरूप तत्कालीन रींवा नरेश अनूप सिंह ने अपने परिवार और हृदयशाह के साथ जंगलों में शरण ली तथा पहाड़ सिंह ने रींवा की सेवा को पराजित कर रींवा को लूट लिया।[1] इस तरह चौरागढ़ स्थायी रूप में गढ़ा मण्डला के शासकों के हाथ से निकल गया।

1662 ई. में पहाड़ सिंह वापस दिल्ली लौट गया। उसके बाद हृदयशाह अपने राज्य में आया। उसने रामनगर को अपनी राजधानी बनाया। ऐसा समझा जाता है कि अपने शासन

---

1. सिंह जीवन; रींवा राज्य दर्पण, पृ. 62



काल में उसने अनेक सुधार करने का प्रयत्न किया था । उसके समय में ही किसानों, व्यापारियों, शिल्पियों एवं पन्सारियों को बसाने का उल्लेख मिलता है । स्थानीय अनुश्रुतियों में उसके द्वारा किये गये लोक कल्याणकारी कार्यों का वर्णन भी मिलता है । हृदयशाह ने ही अपने शिलालेख में गोंडवंश को उर पीढ़ियों का उल्लेख करवाया है । हृदयशाह की मृत्यु कब हुई यह स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं है तथापि ऐसा माना जाता है कि 1672 ई. में उसके उत्तराधिकारी छत्रशाह सत्तारूढ़ था ।[1] तब यह संभवत: 60 वर्ष का था । इसी बीच छत्रशाह का भाई हरीसिंह गढ़ामण्डला पर अपना अधिकार बताने के लिए मुगल दरबार में उपस्थित हुआ । दुर्भाग्यवश उसी वर्ष 1684 ई. में छत्रशाह की मृत्यु हो गयी । छत्र-शाह के उपरान्त उसके पुत्र केसरीशाह को फरवरी 1684 में राजा बनाया गया । उसी वर्ष हरीसिह ने राज्य में विद्रोह कर केसरीशाह की हत्या कर सिंहासन पर स्वयं अधिकार कर लिया । फलस्वरूप केसरी शाह के अल्पायु पुत्र नरेन्द्रशाह को रामकृष्ण बाजपेयी के संरक्षण में भागकर लांजी में शरण लेनी पड़ी ।[2]

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 100, श्री शुक्ल; इ. खं., पृ. 51

   पर छत्रशाह के गद्दी पर बैठने की तिथि 1678 दी गयी है, जो उचित प्रतीत नहीं होती ।

2. विल्स सी. यू.; दि राजगोंड महाराजास आफ दि सतपुड़ा हिल्स, पृ. 99



किन्तु हरीसिंह मात्र तीन वर्ष ही राज्य कर सका क्योंकि 1687 ई· में मौका पाकर नरेन्द्रशाह के मामा जुगराज सिंह[1] ने उसकी हत्या कर दी ।

ऐसा प्रतीत होता है कि हरी सिंह पश्चात उसका पुत्र पहाड़ सिंह कुछसमय के लिए गढ़ा मण्डला का राजा हुआ जो कि उसके द्वारा जारी की गयी सितम्बर 1687 ई· की सनद से स्पष्ट होता है,[2] परन्तु पहाड़सिंह भी गढ़ा मण्डला के लिए क्षणिक सिद्ध हुआ । नरेन्द्र-शाह के समर्थकों से पराजित होकर वह दक्षिण की ओर भाग गया, जहां उसने औरंगजेब कीसेना में सेवा प्राप्त की । इस तरह छत्रशाह के पश्चात नरेन्द्रशाह के सिंहासनारूढ होने तक गढ़ामण्डला षड्यंत्रों और विद्रोहों के कारण राजनीतिक अस्थिरता का अखाड़ा बना हुआ था । पहाड़सिंह के पलायन के पश्चात सत्ता नरेन्द्रशाह को प्राप्त हुई, परन्तु शाही मान्यता प्राप्त करने के लिए उसे अपना पांच किला[3] औरंगजेब

1· श्री शुक्ल; इ·खं·, पृ·51 पर लिखा है कि रामकृष्ण बाजपेयी के पुत्र कामदेव ने हरीसिंह पर आक्रमण कर उसे मरवा डाला और नरेन्द्रशाह को राजा घोषित किया । हो सकता है यह सत्य हो परन्तु उसी समय नरेन्द्र शाह को सत्ता प्राप्त नहीं हुई, क्योंकि उससे पूर्व पहाड़सिंह का उल्लेख मिलता है ।

2· मिश्र सुरेश; शोध पत्र, जर्नल आफ म·प्र· इतिहास परिषद, 9, [1973-74] पृ· 35-42

3· धमोनी, हटा, मड़ियादो, गढ़ाकोटा और शाहगढ़, [देखिये, स्लीमेन, जर्नल आफ दि· एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल 68, 1837, पृ· 633] किन्तु औरंगजेब की मृत्यु के बाद उक्त सभी किले छत्रसाल के अधिकार में आ गये थे ।

को सौंपना पड़ा । जिसके परिणामस्वरूप सागर-दमोह क्षेत्र का उत्तरी भाग नरेन्द्रशाह के हाथ से निकल गया ।

दूसरी तरफ पहाड़ सिंह ने मुगल सेना के सहयोग से गढ़ा मंडला पर आक्रमण कर दिया । फतेहपुर के निकट नरेन्द्रशाह उससे पराजित होकर सोहागपुर {रीवा} चला गया । वहाँ उसने पुन: सेना एकत्र कर पहाड़सिंह का सामना किया । इस युद्ध में पहाड़सिंह मारा गया और विजयी नरेन्द्रशाह मण्डला लौट आया । तत्पश्चात उसने मंडला को अपनी राजधानी बनाया । नि:सन्देह मण्डला उसके लिए पूर्णत: सुरक्षित स्थान था, जिसके तीन तरफ से नर्मदा बहती है ।

पहाड़सिंह की मृत्यु के पश्चात भी नरेन्द्रशाह विद्रोह एवं षडयन्त्रों से मुक्त न हो सका और पहाड़सिंह के धर्म परिवर्तन ~~बेटे~~ किए हुए बेटे अब्दुल रहमान और अब्दुल हाजी के आक्रमण का सामना करना पड़ा उसे । नरेन्द्र शाह ने उनसे समझौता करने का प्रयास किया, किन्तु सफल न हो सका । उसी समय क्रमश: बारहा और चौरई के जागी~~द~~दार अजीम खाँ और लौंडी खाँ ने भी विद्रोह कर दिया तथा पहाड़सिंह के पुत्र द्वय से मिल गये । परिणामस्वरूप नरेन्द्र शाह की स्थिति अत्यन्त संकटमय एवं दयनीय हो गयी । विवशत: नरेन्द्रशाह ने विद्रोहियों का दमन करने के लिये देवगढ़ के राजा बख्त बुलन्द तथा बुन्देलखंड के राजा छत्रसाल से सहायता माँगी[1]। जिनकी सहायता से 1699 ई॰ में व्रिद्रोह का दमन करने में नरेन्द्रशाह को सफलता प्राप्त हुई तथा सभी प्रमुख विद्रोही मारे गये । इस सहायता के फल-स्वरूप नरेन्द्रशाह ने ~~बख्त~~ बख्तबुलन्द को तीन महाल[2] तथा पाँच महाल[3] छत्रसाल को दिया । इनके अतिरिक्त अन्य जागीरदारों

1· गढ़ा के गौंड राज्य, पृ· 120

2· चौरई, डोंगरताल, घुंसौर {तीन महाल} देखिये गढ़ा के गौंड राज्य पृ· 120

3· गढ़पहरा, खिमलासा, इटावा, रेहली और दमोह {कुल पाँच महाल} देखिये - वही

द्वारा दी गई सहायता के बदले में उन्हें भी प्रदेश का कुछ कुछ भाग दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप गढ़ामण्डला राज्य का क्षेत्रफल अत्यधिक सीमित हो गया ।

ऐसा प्रतीत होता है कि आगे चलकर नरेन्द्रशाह को अपने शासनकाल में ही मराठों के हस्तक्षेप का सामना करना पड़ा था । जिसके सम्बन्ध में विस्तृत रूप से आगामी अध्याय में उल्लेख किया जायेगा ।

वस्तुत: विद्रोहों और षड्यन्त्रों का सामना करते हुए नरेन्द्र शाह ने लगभग 1731 ई॰ तक गढ़ा मण्डला पर शासन किया । यद्यपि उसके शासनकाल में गढ़ा मण्डला का क्षेत्रफल अत्याधिक सीमित हो गया तथापि उसके शासनकाल के उत्तरार्द्ध में किसी विद्रोह का ना होना उसके आंतरिक शासन की सफलता का द्योतक है । नि:सन्देह उसका श्रेय उसके योग्य मंत्रियों एवं पदाधिकारियों को भी मिलना चाहिए ।

गौंड राज्य का अवसान :-

नरेन्द्र शाह के पश्चात ही गढ़ा मण्डला के गौंड राजवंश रूपी सूर्य का रथ अपनी अंतिम सीमा पर पहुँच चुका था । लगभग

1॰ गढ़ा के गौंड राज्य, पृ॰ 120

2॰ चौरई

1731-32 ई॰ में महाराजशाह सत्तारूढ़ हुआ । अपने शासनकाल में आरम्भ से ही उसे पानपटिया के सूबेदार के आक्रमण का सामना करना पड़ा । जिसे परास्त करने के लिए उसने भोपाल के शासक की सहायता ली, किन्तु दुर्भाग्यवश 1742 ई॰ में पेशवा के आक्रमण के पश्चात उसकी मृत्यु हो गयी ।

1742 ई॰[1] महाराजशाह के बाद उसका युवा पुत्र शिवराजशाह सत्तारूढ़ हुआ । उसके समय में कुछ छुटपुट घटनाओं का उल्लेख मिलता है । उसने बरेला (जबलपुर के पास) के ठाकुर को चौदह ग्राम दिया ।[2] तथा खोलवा के जमींदार अनूपसिंह को मान्यता प्रदान की । शिवराज शाह को भी आरम्भ से ही मराठों के आक्रमण का सामना करना पड़ा । अन्तत: उसे मराठो से संधि करनी पड़ी जिसका विस्तृत विवरण हम आगामी अध्याय में देखेंगे । लगभग सात वर्ष ही राज्य करने के पश्चात 1749 ई॰ में नि:सन्तान ही शिवराज शाह की मृत्यु हो गयी ।[3]

शिवराजशाह की मृत्योपरान्त गढ़ा मण्डला सिंहासन पर उत्तराधिकार के लिए खींचतान शुरू हो गयी । उसका भाई निजामशाह स्वयं शासक का होना चाहता था । दूसरी तरफ दुर्जनसिंह और मोहन सिंह शिवराज के दो अवैध सन्तान थे । अत: एक षड्यन्त्र के द्वारा निजामशाह ने मोहनसिंह की हत्या करवा दी, परन्तु वह अपनी

1· शिवराजशाह के सिंहासनारोहण के सन्दर्भ में स्लीमेन, कनिंघम और वार्ड क्रमश: 1744, 1742 एवं 1748 ई॰ बताते है । गढा के गौंड राज्य, पृ॰ 137 पर 1741 लिखा गया है ।

2· ग्राण्ट डफ, गजेटियर आफ दि सेन्ट्रल प्राव्हिन्सेस आफ इंडिया 1970, पृ॰ 27

3· गढ़ा के गौंड राज्य, पृ॰ 138 डा॰अन्धारे के अनुसार शिवराज शाह की मृत्यु आरम्भ 1742 ई॰ में हुई, देखिये बुन्देलाखंड अण्डर दि मराठाज, पृ॰ 70

आकांक्षाओं की पूर्ति में सफल न हो सका । शिवराज शाह की विधवा रानी विलास कुँवर और उसके सहयोगियों के प्रयास से दुर्जनशाह गद्दी पर बैठा । वह भी क्षणिक मात्र सिद्ध हुआ । अधिकार लिप्सु रानी ने निजामशाह के साथ मिल कर एक षड्यन्त्र रचा और 1749 ई॰ के मध्य दुर्जनशाह की हत्या कर दी गई जो कि अपने शासन की अल्पावधि में ही अत्याचारों और क्रूरता के लिए बहुत बदनाम हो चुका था ।[1]

दुर्जनशाह की हत्या के उपरान्त सितम्बर 1749 ई॰ में निजामशाह को गद्दी प्राप्त हुई । वह एक अनुभवी व योग्य शासक समझा जाता था । विदित है कि मराठों का हस्तक्षेप गढ़ा मंडला राज्य में नरेन्द्र शाह के समय से ही आरम्भ होने लगा था । निजामशाह को तत्कालीन प्रमुख मराठा शक्तियाँ भोंसले और पेशवा दोनों से कठिन शर्तों पर समझौता करना पड़ा था । ऐसी स्थिति में उक्त दोनों के मध्य पिसना उसके लिए भारी पड़ रहा था ।[2] निजामशाह के समय में भानपुर[3] के जमींदार के विद्रोह का उल्लेख मिलता है जिसे उसके आदेश पर किसी सुजानसिंह को पकड़ा था । अत: सुजानसिंह को पुरस्कार स्वरूप भानपुर की जमींदारी घाटबन्दी पर दी गयी ।[4] उसके समय में अनेक ग्राम माफीदारी में तथा जागीर में दिये जाने के वितरण मिलते हैं ।[5] ऐसा प्रतीत होता है कि निजामशाह अपने शासनकाल में पर्याप्त लोकप्रिय था क्योंकि सर्वसाधारण की स्मृति में उसका नाम अब तक विद्यमान है । इस तरह जनहित में कल्याणकारी कार्य करते हुए उसने लगभग 27 वर्षों तक राजसुख का

1· गढ़ा के गोंड राज्य पृ॰ 139
2· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 141
3· बालाघाट जिले में
4· बालाघाट जिला गजेटियर, . 1907, पृ॰ 143
5· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 143-45

भोग किया । तत्पश्चात 1776 ई॰ में निजामशाह परलोकवासी हुआ ।

षड्यन्त्रकारी गतिविधियाँ :-

निजामशाह की मृत्यु के बाद गढ़ा मण्डला पूर्ण रूपेण षड्यन्त्रों एवं विद्रोहों का केन्द्र बन गया । उत्तराधिकारियों की अयोग्यता, फिर आंतरिक षड्यन्त्र एवं विद्रोह तथा मराठों के आक्रमणों ने न केवल गोंड राज्य को पंगु ~~ब~~ बना दिया वरन् मराठे, राजाओं के भाग्य भी लिखने लगे । परिणामस्वरूप आगामी छ: वर्षों के भीतर ही गढ़ा मण्डला के गोंड राज्य का अवसान हो गया ।

निजामशाह के पश्चात महिपालसिंह का उल्लेख मिलता है । जिसके सहयोगी रघुवंश वाजपेयी और उसके परिवार के लोग तथा गणेश पासवान थे ।[1] परन्तु विदित होता है कि वह मात्र कुछ माह ही शासन कर सका । उसका अन्त कैसे हुआ वह अज्ञात है । सम्भवत: विधवा रानी विलास कुंवर द्वारा रघुवंश वाजपेयी और उसके परिवार की हत्या[2] करवाने के पश्चात महिपालसिंह को भी समाप्त कर दिया गया हो ।

1776 ई॰ में ही विलासकुंवर ने अपने समर्थकों के सहयोग से नरहरिशाह को गद्दी पर बैठाया जो कि निजामशाह का भतीजा था, दूसरी तरफ निजामशाह का पुत्र सुमेर शाह गद्दी का प्रत्याशी था । आरम्भ में सुमेरशाह ने नागपुर के भोंसले राजा मुधोजी से सहायता की अपील की किन्तु उचित समय पर विलास कुंवर की मुधोजी से कूटनीतिक समझौते के फलस्वरूप सुमेरशाह की आशाओं पर तुषारापात

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ ~~143-45~~ 159
2. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 160

हो गया । अत: निराश होकर उसने सागर में पेशवा के प्रतिनिधि विसाजी चान्दोरक से सहायता मांगी । 1780 ई॰ में विसाजी के सहयोग से सुमेरशाह सिंहासन पर बैठा । जिसके बदले में उसने सुमेरशाह से 20 लाख रूपयों की मांग की जिसमें 12 लाख रूपये उसने नगद एवं सामग्री के रूप में वसूल कर लिया । शेष 8 लाख रूपये आने का आश्वासन लेकर सागर लौट गया[1] अपने साथ बन्दी के रूप में नरहरीशाह को ले गया ।

इधर सुमेरशाह ने सर्वप्रथम नरहरिशाह के सहयोगी मंत्री गंगागीर को बन्दी बना लिया और 1749 ई॰ से ही गढ़ा मण्डला की राजनीति में सक्रिय रानी विलासकुँवर की हत्या करवा दी । तदोपरान्त वह एक स्वतन्त्र शासक बनना चाहता था इसलिए विसाजी की कृपा कर निर्भर रहना उसे चुभने लगा, क्योंकि विसाजी ने पूर्व शर्त के अनुसार शेष रकम वसूलने के लिए गढ़ा मण्डला में चौकियां स्थापित की थी । सुमेरशाह ने विभिन्न जमींदारों के साथ मिलकर विसाजी के विरूद्ध योजना बनायी । दूसरी तरफ सुमेरशाह की गतिविधियों से अवगत होकर विसाजी ने पुन: गढ़ा मण्डला पर आक्रमण कर दिया, फलत: सुमेरशाह पराजित हुआ और उसे कैद करके जटाशंकर के किले में भेज दिया गया ।[2]

1782 ई॰ में विसाजी ने नरहरिशाह को गद्दी पर बैठाया । इसी के साथ गंगागीर को कैद से मुक्त करके क्षतिपूर्ति का रूपया चुकाने के लिए उत्तरदायी बनाया गया । कालान्तर में नरहरिशाह

1॰ शेजवलकर : नागपुर अफेयर्स, 1, पृ॰ 125

2॰ गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 164

और गंगागीर द्वारा विद्रोह किये जाने पर यद्यपि विसाजी मारा गया, किन्तु अन्त में मराठों की सेना ने चौरागढ़ पर अधिकार कर लिया और नरहरिशाह को बन्दी बनाकर खुरई[1] के किले में कैद कर दिया गया तथा उसके विश्वासपात्र मंत्री गंगागीर गोसाई की भीभत्स मृत्यु हुई । जिसका विस्तृत विवरण आगामी अध्याय में किया जायेगा । फिलहाल नरहरिशाह की एक बन्दी के रूप में खुरई के किले में 1789 ई॰ में मृत्यु हो गयी ।

इस प्रकार नरहरिशाह के अन्त के साथ ही गढ़ा मण्डला राज्य में संग्रामशाह और रानी दुर्गावती के समय चर्मोत्कर्ष पर पहुँचने वाले गोंड वंश का सत्ता रूपी सूर्य सदैव के लिए अस्त हो गया ।

-0-

==:: o : o : o ::==

1॰ सागर जिले में


उ०
0 50 100 कि०मी०
स्केल
गढ़ा मण्डला राज्य का चरमोत्कर्ष (संग्रामशाह का शासन 1510 3 ई०)
औरंगजेब द्वारा अधिकृत प्रदेश 1688 ई०
छत्रसाल " " 1651-71 ई०
छत्रसाल " " 1699 ई०
पेशवा " " 1763 ई०
पेशवा " " 1780 ई०
बख्तबुलन्द " " 1686-1710 ई०
" " " 1699 ई०
रघुजी भोंसला " " 1742-47 ई०
रघुजी भोंसला " " 1749-55 ई०

अध्याय 3

अध्याय - 3 गढ़ा मण्डला में मराठे

गढ़ा मण्डला प्रदेश पर गोंड आधिपत्य काल में ही निर्बल और अयोग्य उत्तराधिकारियों के समय में मराठों का हस्तक्षेप आरंभ हो चुका था जिसने उत्तरोत्तर बढ़ते हुए सम्पूर्ण गढ़ा मंडला राज्य को मराठा शक्ति के अधीन कर लिया । सम्भवतः छत्रपति राजाराम के समय में गढ़ा मण्डला राज्य की भूमि पर पहला मराठा कदम किसी गंगाजी पंडित ने रखा था, किन्तु यह गंगाजी पंडित कौन था, यह स्पष्ट नहीं हो पाया है ।[1]

प्रारंभिक मराठा हस्तक्षेप :-

1699 ई॰ में स्पष्ट रूप से गढ़ा मण्डला राज्य की सीमा में मराठा हस्तक्षेप का उल्लेख मिलता है । जबकि मराठा सरदार कृष्णाजी सावंत अपने 15 हजार घुड़सवारों के साथ नर्मदा पार कर धमोनी के निकट कुछ स्थानों को लूट कर वापस चला गया था । समझा जाता है कि कृष्णा जी सावंत ने पहली बार नर्मदा नदी को पार किया था । सम्भवतः तब तक किसी मराठा सरदार ने नर्मदा पार नहीं किया था । उसी वर्ष अप्रेल 1699 ई॰ में देवगढ़ के शासक बख्त बुलन्द ने कृष्णा जी सावंत को कैद कर लिया था ।[3] किन्तु दो माह पश्चात् ही जून 1699 ई॰ में वह बख्तबुलन्द की कैद से भागने में सफल हो गया ।[4] उसके पश्चात वह कहाँ गया ? स्पष्ट

1· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 121

2· डा॰ रघुवीर, मालवा इन ट्रांजिशन, पृ॰ 54, पा॰टि॰2

~~3~~· सरकार सरयदुनाथ, हिस्ट्री आफ औरंगजेब, 5, पृ॰ 382, 409

3· सिंह डा॰ रघुवीर, मालवा इन ट्रांजिशन, पृ॰ 54

4· सरकार सरयदुनाथ, हिस्ट्री आफ औरंगजेब, पृ॰ 409-10

नहीं हो पाया ।

बाद में 1704 ई. में मुगल सेनापति ने मालवा पर आक्रमण करने वाले मराठा सरदार नीमाजी सिंधिया को पराजित किया तब निमाजी इस उद्देश्य से बुन्देलखंड की ओर भागा कि वह धमौनी और गढ़ा होता हुआ वापस लौट जायेगा, परन्तु फिरोज ने उसका पीछा करते हुए स्थानीय जंगलों में उसे पकड़ लिया ।[1]

तथापित इन छुटफुट धावों से गढ़ा मण्डला राज्य को कोई खतरा पैदा नहीं हुआ । ऐसा प्रतीत होता है कि ये धावे मराठा राजाराम एवं ताराबाई के काल में मगलों के विरूद्ध किये जाने वाले स्वातंत्र्य संग्राम की कार्यवाही के अन्तर्गत ही हुए होंगे । कालान्तर में पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने जिस मराठा शक्ति का संचार किया, वही आगे चलकर मराठा संघ के रूप में परिवर्तित हो गयी ।[2]

बालाजी विश्वनाथ का उत्तराधिकारी बाजीराव प्रथम की उत्तर भारत पर आक्रमण करने की योजना पूर्णत: फलीभूत हुई । मराठों ने 29 नवम्बर 1728 ई. को धार के निकट अझमेरा के युद्ध में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की[3], जिसके परिणाम स्वरूप मालवा में उनका प्रभुत्व स्थापित हो गया । उत्तरोत्तर अपना आधिपत्य दृढ करने में मराठे अत्यधिक व्यस्त होते चले गये और मराठों की इस विस्तार वादी नीति ने सारे देश की अर्थ व्यवस्था को नष्ट कर दिया ।[4] गढ़ा मण्डला राज्य पर मराठों के इस विनाशकारी तांडव का प्रभाव नरेन्द्र शाह के शासनकाल के उत्तरार्द्ध में पड़ना आरम्भ हुआ ।

---

1. सिंह, डा. रघुवीर, मालवा इन ट्रांजिशन, पृ. 61
2. सरकार सरयदुनाथ, हिस्ट्री आफ औरंगजेब, पृ. 384
2. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 121
3. गुप्त भ.दा., महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ. 90
4. वर्मा. एच.पी., ए स्टडी इन मराठा डिप्लोमैसी, पृ. 30

गढ़ा मण्डला में मराठों के हस्तक्षेप की वास्तविक स्थिति जानने के लिए हमें क्षणिक रूप से देवगढ़ की ओर चलना होगा। देवगढ़ गढ़ा मण्डला से सटा हुआ उसका पड़ोसी राज्य था जो कि इस समय अपने पतन के अंतिम कगार पर खड़ा था। वहाँ का तत्कालीन शासक चाँद सुल्तान था। इस समय मराठो का आना देवगढ़ के मार्ग से सम्भावित था। क्योंकि मराठों के लिए देवगढ़ का मार्ग निष्कंटक था।

दूसरी तरफ मराठा शक्तियों में भोंसला और पेशवा आपसी प्रतिद्वन्दी थे कालान्तर में गढ़ा मण्डला प्रदेश पर अपने आधिपत्य को लेकर दोनों में एक लम्बे समय तक झगड़ा चलता रहा। दोनों ही शक्तियाँ गढ़ा मण्डला पर अपने अधिकार की लालसा रखती थी।

गढ़ा मण्डला राज्य की दक्षिणी सीमा पर स्थित लाँजी का दुर्ग उन दिनों अत्यन्त सुरक्षित माना जाता था। डा॰सुरेश मिश्र के अनुसार नरेन्द्रशाह ने अपने ज्येष्ठ पुत्र महाराजशाह को सम्भावित मराठा आक्रमणों को रोकने के लिए ही लाँजी के किले में नियुक्त किया था।[1]

1728 ई॰ में पेशवा वाजीराव प्रथम की सेना का अचानक देवगढ़ सिवनी और छपारा होकर गढ़ा मण्डला की ओर बढ़ने का उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु ऐसा समझा जाता है कि इस अभियान का उद्देश्य गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करना नहीं वरन् किसी भास्कर राम की विशाल सेना को गढ़ा मण्डला से वापस लौटाना था।[2] भास्कर राम रघुजी भोंसला का सेनाधिकारी था जिसे उसने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने के लिए भेजा था। उल्लेखनीय है कि उस

1· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 122

2· सेलेक्शन्स फ्राम दि पेशवा दफ्तर, 13, पृ॰ 13-14 में उल्लिखित चिमनाजी अप्पा को उनके एक सेनाधिकारी ने 17·9·1728 ई॰ को पत्र द्वारा यह सूचना भेजी थी।

सू्म
समय तक रघुजी भोंसला की सेना साहब सुभा की पदवी नहीं मिली थी। बाजीराव के आने का समाचार सुनकर भास्कर राम वापस लौट गया। अत: बाजीराव देवगढ़ वापस चला गया। जहां से अ उसने 4 जनवरी 1729 ई॰ को मालवा में तैनात अपने भाई चिमना जी को पत्र लिखा कि "मुझे तुरन्त बताये कि यदि आवश्यकता हो तो मैं आपके पास आ जाऊं और यदि आपकी ओर से कोई समाचार नहीं मिला तो मैं सीधे बुन्देलखंड को जाऊंगा।[1] देवगढ़ के राजा को संधि करके[2] वह गढ़ा मण्डला की ओर इस उद्देश्य से रवाना हुआ कि वहां से वह मालवा या उत्तर की ओर चला अ जायेगा।[3]

बुन्देलखण्ड में प्रवेश :-

छत्रसाल की प्रार्थना :-

गढ़ा मण्डला प्रदेश में मराठों के वास्तविक प्रभुत्व से पूर्व हमें बन्देलखण्ड की उस घटना को भी देखना पड़ेगा जिसने उसकी पृष्ट भूमि तैयार की थी।

1729 ई॰ में प्रयाग के सुबेदार मुहम्मद खां वंगश ने एक विशाल सेना लेकर छत्रसाल के राज्य बुन्देलखंड पर आक्रमण किया। इस अभियान में उसका पुत्र कायम खां भी उसके साथ था। धमोनी के अ निकट बुन्देलों ने वंगश का सामना किया, किन्तु वे मुगल सेना को पराजित न कर सके।

1· सरदेसाई, स·गो, मराठो का नवीन इतिहास, 2,पृ· 104
2· राजवाडे, मराठापाचा इतिहासांची साधने पत्रेयादी वगैरे, पृ·14
गुप्त भ·दा·, महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ· 90-91
3· गढ़ा के गौंड राज्य पृ· 122, सरदेसाई, मराठो का नवीन इतिहास 2,पृ· 104, गुप्त भ·दा·,महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ· 90

दूसरी तरफ बंगश ने जैतपुर के सुदृढ किले पर आक्रमण कर दिया और लगभग चार माह के घेरे वह किले पर अधिकार करने में सफल हो गया ।[1] इस युद्ध में छत्रसाल का पुत्र जगतराज बन्दी बना लिया गया । स्वयं छत्रपाल भी उस समय बंगश की सेना से घिर चुका था ।[2] आगे ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि छत्रसाल ने होली के अवसर पर घर जाने के लिए बंगश से अनुमति मांगी । अपने अनुकूल परिस्थिति देखकर बंगश ने छत्रसाल को आज्ञा दे दी । अतः समय का लाभ उठाकर शीघ्र ही छत्रसाल वहाँ से मऊ पहुँचा ।[3] जहाँ उसे वाजीराव पेशवा का ध्यान आया जो उन दिनों देवगढ़ में था । वहाँ से छत्रसाल ने वाजीराव पेशवा को अपनी सहायतार्थ याचना स्वरूप एक हृदयस्पर्शी पत्र लिखा [4]

<u>बाजीराव का प्रस्थान</u> :-

जनवरी 1729 ई॰ में बाजीराव देवगढ़ से उत्तर की ओर प्रयाण कर गढ़ा मण्डला राज्य में पहुँचा, जहाँ फरवरी 1729 ई॰ में उससे छत्रसाल के दूत मिले और छत्रसाल का पत्र उसे दिया ।[5] बाजीराव ने छत्रसाल की सहायता करना स्वीकार किया और उसी समय चि चिमनाजी को पत्र लिखा । "मैं छत्रसाल के सहायतार्थ जा रहा हूँ, जैसा आप उत्तम समझें मुझसे स्वतन्त्र रूप से अपनी प्रगति का प्रबन्ध

---

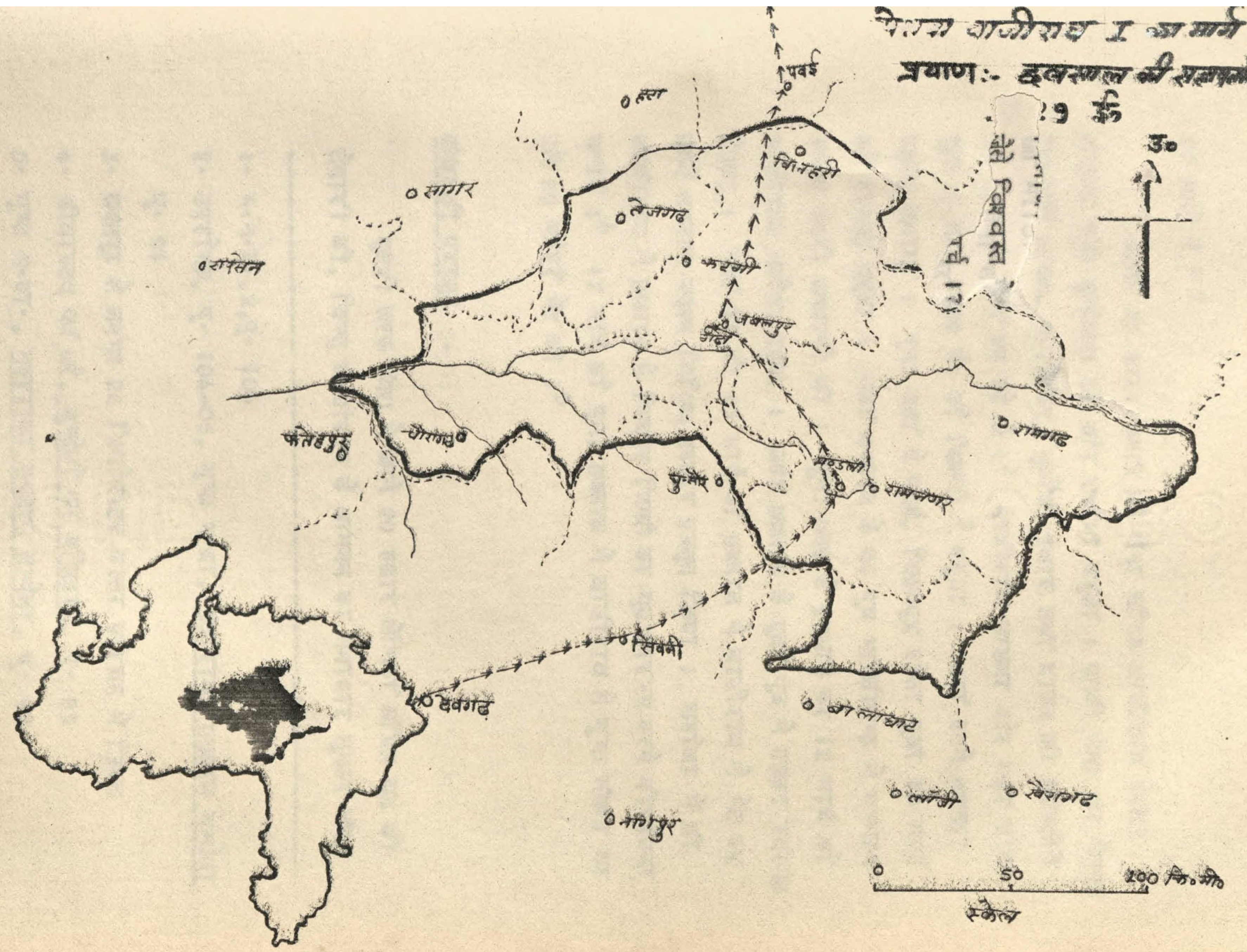
1. श्रीवास्तव एवं खरे, <u>बुन्देलों का इतिहास</u>, पृ॰ 91।

2. वही, पृ॰ 92

3. वही, पृ॰ 93

4. छत्रसाल के पत्र के सम्बन्ध में बुन्देलखंड में यह जनश्रुति प्र प्रचलित है कि उसने वाजीराव को लिखा था :-"जो गति भई गजेन्द्र की,
सोगति पहुँची आयम।
बाजी जात बुन्देल की,
राखो बाजी राय ।।

5. गुप्त भ॰दा॰ <u>महाराजा छत्रसाल बुन्देला</u>; पृ॰ 91।


पेशवा बाजीराव I का मार्ग
प्रयाण :- छत्रसाल की
29 ई
उ॰
पवई
हटा
सागर
तेजगढ़
रायसेन
कटंगी
जबलपुर
फतेहपुर
चौरागढ़
मण्डला
रामनगर
रामगढ़
सिवनी
देवगढ़
लाँजी
खैरागढ़
नागपुर
0
50
100 कि॰मी॰
स्केल

कर सकते है." ।

अपनी 25 हजार सवार की सेना सहित बाजीराव पेशवा शीघ्रता पूर्वक बुन्देलखंड की ओर रवाना हुआ । उसकी सेना का नेतृत्व पिलाजी जाधव, नारोशंकर, तुकोजी पवार तथा दावल जी सोमवंशी जैसे विश्वस्त नेता कर रहे थे ।[2] बाजीराव मण्डला और गढ़ा होता हुआ 5 मार्च 1729 ई॰ को खिरजी [3] पहुँचा । वहाँ उसने अपना पड़ाव लगाया । पुनः वहाँ से पवई, विक्रमपुर होता हुआ 10 मार्च को राजगढ़ पहुँचा । जहाँ छत्रसाल के एक पुत्र भारतीचन्द्र ने सम्मान स्वरूप उसकी अगवानी की । पुनः वहा से प्रस्थान कर 12 मार्च को बाजीराव महोबा पहुँचा । जहाँ छत्रसाल के दूसरे पुत्र ने उसका स्वागत किया । यहाँ पर ही 13 मार्च को छत्रसाल ने बाजीराव से भेंट कर उसके सम्मान स्वरूप विविध उपहार प्रस्तुत किया । महोबा में ही बाजीराव ने छत्रसाल से विचार विमर्श कर युद्ध प्रारम्भ करने कीयोजना बनाई ।[4] 17 मार्च को पुनः छत्रसाल ने बाजीराव से गुप्त मंत्रणा कर उसे 80 मोहरें भेंट की ।[5]

<u>वंगश की पराजय</u> :-

दूसरी तरफ वंगश ने अपने 20 हजार सैनिकों सहित युद्ध की तैयारी की, किन्तु बाजीराव के आगमन का समाचार सुनकर वंगश

---

1. म॰न॰इ॰,2,पृ॰ 104
2. उपरोक्त, पृ॰ 104-05, गुप्त भ॰दा, <u>महाराजा छत्रसाल बुन्देला</u> पृ॰ 91
3. जबलपुर से लगभग 28 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में स्थित
4. श्रीवास्तव एवं खरे, <u>बुन्देलों का इतिहास</u>, पृ॰ 93
5. गुप्त भ॰दा॰, <u>महाराजा छत्रसाल बुन्देला</u>, पृ॰ 92

के सहायक राजा उससे पृथक हो गये । अत: सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से वंगश ने डेरे के चारों ओर खाईयाँ खुदवाई ।[1] बाजीराव और छत्रसाल की सम्मिलित सेना ने जैतपुर के समीप वंगश का घेरा डाल कर उसे मिलने वाली रसद को रोक दिया । उसी बीच सूपा के निकट कायम खाँ मराठा सेना से बुरी तरह पराजित हुआ । विवश होकर वंगश ने अपनी सेना सहित जैतपुर के किले में शरण ली । मराठों ने त्वरित कार्यवाही कर किले का भी घेरा डाल दिया और शत्रु की सेना को पहुँचने वाली रसद का मार्ग बन्द कर दिया परिणामस्वरूप कुछ समय पश्चात ही वंगश के सैनिक भूख से मरने लगे । उस समय का ऐसा भी उल्लेख प्राप्त होता है कि वे बैलों के साथ ही घोड़ों का भी माँस खाने लगे । सम्भवत: उस समय वंगश के डेरे में आटे का भाव 80 रूपये सेर तक हो गया था । जैसा कि श्रीवास्तव एवं खरे ने उल्लेख किया है ।" मराठे सैनिक रात में किले की दिवार के नीचे खड़े हो जाते थे तथा मुसलमान सिपाही रूपये रस्से द्वारा लटका देते थे और मराठे रूपये लेकर हड्डी के चूर्ण से मिला आटा मुसलमान सिपाहियों को दे देते थे ।[2]

दुर्भाग्यवश उसी समय मराठा सेना में महामारी फैल गयी । जिसके प्रकोप से सैकड़ों मराठा सैनिक मरने लगे । अत:23 मार्च 1729 ई॰ को वाजीराव पेशवा ने जैतपुर से पूना के लिए प्रस्थान किया ।[3] किन्तु तब तक वंगश खाँ बुरी तरह टूट चुका था । इसलिए छत्रसाल संधि कर पूर्व प्राप्त धन पर ही संतोष करके उसने बुन्देलखंड छोड़ दिया और पुन: बुन्देलखंड पर आक्रमण करने की हिम्मत न कर सका । इस प्रकार बंगश पर छत्रसाल की विजय का पूर्ण श्रेय बाजीराव को प्राप्त हुआ ।

1॰ श्रीवास्तव एवं खरे, महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ॰ 93

2॰ उपर्युक्त, पृ॰ 94, पाद टि॰ ।

3॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰2, पृ॰ 106

सागर में पेशवा की सत्ता :-

मुहम्मद खाँ बंगश की पराजय के फलस्वरूप छत्रसाल वाजीराव से बहुत प्रसन्न हुआ । उल्लेखनीय है कि इस युद्ध से एक तरफ जहाँ उसे बाजीराव का सहयोग प्राप्त हुआ, वहीं उसे अपने पुत्रों की फूट का भी ज्ञान हो गया । अपनी वृद्धावस्था के कारण वह अच्छी तरह जान चुका था कि बिना बाजीराव के सहयोग से अपना राज्य सुरक्षित रखना सम्भव नहीं है । अतः उसने बाजीराव को अपना तृतीय पुत्र मानकर उसे अपने राज्य का तीक्ष्ण हिस्सा देने का निश्चय किया तथा अपने पुत्रों एवं उनके राज्य की रक्षा का भार बाजीराव को सौंप दिया । जिसे बाजीराव ने सहर्ष स्वीकार किया ।[1] कहा जाता है कि उसी समय छत्रसाल ने बाजीराव को मस्तानी[2] नामक एक नर्तकी भी भेंट की थी तथा ढाई लाख रूपये की जागीर उसके खर्च के लिए दिया था ।[3]

इसके दो वर्ष पश्चात 4 दिसम्बर[4] 1731 ई॰ को छत्रसाल की मृत्यु हो गयी । समझा जाता है उसके समय में राज्य की कुल आमदनी एक करोड़ 53 लाख रूपये थी । अपनी मृत्यु से पूर्व ही छत्रसाल ने अपने राज्य कुल आमदनी में से 23 लाख रूपये के आमदनी की भूमि अपने सामन्तों, पुत्रों एवं सम्बन्धियों को दे दिया था । शेष एक करोड 30 लाख रूपये की आमदनी की भूमि के सम्बन्ध में

1॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 2,पृ॰ 106

2॰ जनश्रुतियों के अनुसार वह छत्रसाल की मुगल उपपत्नी से उत्पन्न कन्या थी, देखिये , महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ॰ 97

3॰ सागर जिले की रेहली तहसील, देखिये, श्रीवास्तव एवं खरे, बुन्देलों का इतिहास, पृ॰ 96

4॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 2, पृ॰ 106 पर 14 दिसम्बर लिखा है

उसने एक वसीयन लिखा जिसके अनुसार उसके पुत्रों[1] को प्राप्त हुए राज्य का तीसरा हिस्सा बाजीराव को देना निश्चित हुआ था । जिसके अनुसार बाजीराव पेशवा को काल्पी, सिरोंज, भेलसा, गुना और सागर, कुल 43 लाख 33 हजार रू.[2] आय का प्रदेश दिया जाना निश्चित हुआ । कुछ इतिहासकारों का मानना है कि छत्रसाल ने अपने राज्य की आय से संबंधित तथ्य को छिपा लिया था ताकि उसे कम से कम भाग पेशवा को देना पडें । किन्तु श्रीवास्तव एवं खरे इस मत से सहमत नहीं है । उन्होंने अपने तर्क के पक्ष में छत्रसाल के एक पत्र की प्रतिलिपि प्रस्तुत की है जिसमें छत्रसाल द्वारा राज्य की कुल आय एक करोड 53 लाख रूपया बताई गई है ।[3]

दूसरी तरफ डा. भगवान दास गुप्त ने पेशवा को प्रेषित एक पत्र का उल्लेख किया है जिसमें छत्रसाल ने डेढ करोड की जागीर को केवल एक करोड ही बताया है और उसी के आधार पर अपने राज्य का तीसरा हिस्सा बाजीराव को देना निश्चित किया । जिसके अनुसार पेशवा को 33 लाख रूपये की आय का प्रदेश ही मिलना चाहिए । उसी पत्र में छत्रसाल ने अपने पुत्रों को यह निर्देश दिया कि जहां तक हो सके पेशवा को दिये जाने वाले हिस्से के हस्तान्तर को टालते रहे ।[4]

यहां यह उल्लेखनीय है कि लगभग सभी इतिहासकार इस मत से

---

1. हृदयशाह और जगतराज
2. श्रीवास्तव एवं खरे, बुन्देलों का इतिहास, पृ. 96. वैसे आय के सम्बन्ध में विभिन्न मतों का उल्लेख मिलता है । पायसन के अनुसार 30 लाख 76 हजार, गोरेलाल तिवारी 33 लाख, स्लीमेन 36 लाख, ग्रान्ट डफ 19 लाख तथा कुंवर कन्हैया जू ने पन्ना स्टेट गजेटियर में 39 लाख रूपये बताई है.
3. श्रीवास्तव एवं खरे, बुन्देलों का इतिहास, पृ. 97-8
4. गुप्त भ.दा., महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ. 98

सहमत हैं कि छत्रसाल के राज्य की वास्तविक आय लगभग डेढ करोड थी । ऐसी स्थिति में छत्रसाल जैसे व्यक्तित्व द्वारा अपने वास्तविक आय को छिपाने का प्रमुख कारण सम्भवत: काल एवं परिस्थितियोंवश उसकी विवशता या अपने राज्य के प्रति उसका मोह ही कहा जा सकता है ।

वस्तुत पेशवा के हिस्से में मिलने वाले 33 लाख रूपये की जागीर को ही उचित मानकर हम आगे बढते हैं ।

छत्रसाल की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने पर बाजीराव ने हृदयशाह को संवेदनापूर्ण पत्र भेजा, जिसमें उसने हर प्रकार से सहायता देने का वचन दिया था ।

आरम्भ में बाजीराव ने अपने हिस्से के संबंध में बातचीत एवं आवश्यक कार्यवाही करने के लिए मुधोजी हरी को बुन्देलखण्ड भेजा ।[1] सम्भवत: हृदयशाह और जगतराज ने उसे सागर या उसके समीप ही दो लाख रूपये की जागीर देकर टालने का प्रयत्न किया ।[2] 1732 ई॰ के अंतिम सोपान में बाजीराव ने मिनाजी अप्पा को इस प्रयोजन से बुन्देलखण्ड भेजा कि वह पेशवा के तीसरे हिस्से को निश्चित करे तथा स्थानीय राजाओं से राज्य कर वसूल सके । वह गोविन्द बल्लाल खेर एवें बाजी भिवराज रेटरेकर के साथ खंडवा, टिमरनी और सोहागपुर होताहुआ 24 दिसम्बर 1732 ई॰ को हृदयनगर पहुंचा ।[3] उसने

1· डा॰ अन्धारे, भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰प्रथम, पृ॰40

2· गुप्त भ॰दा॰, महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ॰99, श्री शुक्ल इ॰ख॰, पृ॰ 91 हीरालाल, सागर सरोज, पृ॰ 25

3· अन्धारे भा॰रा॰, संशोधन शिंमले, पृ॰ 25

हृदयशाह और जगतराज के पास गोविन्द बल्लाल खेर[1] को भेजा। जिसके प्रयत्नों के फलस्वरूप हृदयशाह के पास से सवा लाख की जागीर एवं राजगढ का किला तथा जगतराज से एक लाख रुपये की जागीर प्राप्त की।[2]

उससमय हृदय शाह एवं जगतराज की मराठों से हुई संधि में एक प्रावधान यह भी रखा गया कि यदि वसूली की रकम कम हुई तो शेष रकम की पूर्ति हृदयाह एवं जगतराज करेंगे तथा किसी अन्य उत्तरी राज्य पर आक्रमण करने की स्थिति में दोनों भाई मराठों का साथ देंगे एवं विजित प्रदेश का आधा हिस्सा मराठों का होगा तथा शेष आधा हिस्सा दोनों भाइयों में ~~विभि~~ विभाजित होगा। तत्पश्चात चिमनाजी ने ओरछा के राजा रामचन्द्र पर आक्रमण कर उसे चौथ देने के लिए बाध्य किया। इसअभियान में हृदय शाह के दीवान एवं सेनापति ने मराठों का साथ दिया।[3] इस प्रकार उक्त सवा दो लाख की व्यवस्था और वसूली का उत्तरदायित्व गोविन्द बल्लाल खेर को सौंप कर[4] चिमनाजी सेना सहित मई 1733 ई. में पूना वापस लौट गया।

आरम्भ में गोविन्द बल्लाल खेर को वसूली एवं कब्जा करने

---

1. इसे कहीं-कहीं गोविन्दराव एवं गोविन्द पंत लिखा गया है
2. गुप्त. भ. दा., महाराजा छत्रसाल बुन्देला, पृ. 99
   अन्धारे भा.रा संशोधन शिंदे, पृ. 25-26
3. उपरोक्त, पृ. 26
4. एस.पी.डी., 14, नं. 9, पा. 10,11,12 एवं 30
   नं. 16, पृ. 71, 72

में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ा । ऐसी स्थिति में हृदयशाह एवं उसके मंत्री हिम्मतराय से शिकायत की, हृदयशाह और जगतराज ने उसके एक नवीन प्रस्ताव रखा जिसके अनुसार बाजीराव पेशवा को दी गयी जागीर यदि उचित प्रतीत नह हो तो उसके बदले में दोनों भाई दो लाख रूपये नकद देने के लिये तैयार थे,[1] परन्तु बाजीराव ने उसके इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया ।

इस तरह यद्यपि बुन्देले मराठों को प्रदेश हस्तान्तर करने में विलम्ब कर रहे थे तथापि वहां से 50 हजार रूपये नकद वसूल करके 3 जुलाई 1734 ई० को गोविन्द बल्लाल खेर ने बाजीराव को भेजा[2] इसी सन्दर्भ में 1734 ई०- 35 ई० में पिलाजी जाधव के आक्रमण का भी उल्लेख मिलता है । सम्भवत: जिसे बाजीराव ने भेजा था, परन्तु उसके आक्रमण से कुछ विशेष निष्कर्ष न निकल सका और 5 जून 1735 ई० को वह वापस पूना लौट गया ।[3] उसके लगभग दो वर्ष पश्चात 1737-38 ई० में निजाम को उत्तर में निर्बल बनाने के उद्देश्य से बाजीराव स्वयं बुन्देलखंड आया और उसने सागर के पास कुरवाई में अपना शिविर लगाया[4]. ~~छत्रसाल~~ जहां छत्रसाल के दोनों पुत्रों ने 12 जुलाई 1738 ई० को उससे भेंट कर एक समझौता किया । जिसके अनुसार वाजीराव को पौने तीन लाख रूपया और धमोनी का किला प्राप्त हुआ ।[5]

1739 ई० में हृदयशाह की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रों सभा सिंह और पृथ्वी सिंह में जागीर के लिए गृहयुद्ध हुआ जिसमें मराठो

---

1. अन्धारे भा०रा०, संशोधन शिमले, पृ० 26
2. एस०पी०डी० 22, न०11, पृ० 56
3. एस०पी०डी० 30, नं० 320 पृ० 317-18
4. अन्धारे भा०रा०, संशोधन शिमले, पृ० 27
5. बाड़ द्वारा सम्पादित, ट्रीटिज एंगेजमेंट एण्ड सनदस, पृ० 9-10
6.

ने पृथ्वी सिंह का साथ दिया, फलस्वरूप पृथ्वीसिंह गढ़ा कोटा का राजा बना और उसने मराठों को चौथ देना स्वीकार किया ।[1]

इस प्रकार यद्यपि गढ़ा कोटा और उसके समीप के प्रदेश पर भी मराठों का आधिपत्य स्थापित हो गया, परन्तु अब तक भी छत्रसाल की वसीयत के अनुसार मराठों को उनके तीसरे हिस्से का आधिपत्य प्राप्त न हो सका था ।

यहाँ उक्त विवरण देने का प्रमुख आशय यह स्पष्ट करना है कि छत्रसाल द्वारा घोषित वसीयतनामे के अनुसार बुन्देखंड पर बाजीराव का प्रभुत्व शीघ्र स्थापित न हो सका । जैसा कि कुछ इतिहासकारों का मत है कि छत्रसाल की वसीयत के अनुसार बाजीराव को काल्पी, जालौन, गुरसराय, गुना, हटा, सागर, हृदयनगर का प्रदेश प्राप्त हुआ । तर्क संगत प्रतीत नहीं होता है । यद्यपि छत्रसाल के वसीयत नामे को एक आधार अवश्य ही कहा जा सकता है तथापित जहाँ तक बुन्देलखंड में तीसरे हिस्से पर बाजीराव के आधिपत्य का प्रश्न है उसे मराठों ने क्रमिक रूप से सैन्यबल एवं शक्ति के प्रयोग से लगभग 1747 ई॰ में प्राप्त किया । सम्भवतः छत्रसाल के उत्तराधिकारी मराठों को अपना तीसरा हिस्सा जागीर के रूप में नहीं देना चाहते थे इसीलिए वे जागीर पर आधिपत्य के हस्तान्तरण में विलम्ब करते रहे ।

बहरहाल उल्लेखनीय है कि चिमनाजी अप्पा द्वारा गोविन्द बल्लाल खेर को प्रबन्ध व्यवस्था सौंपने के समय तक सागर और उसके आसपास का प्रदेश मराठों के आधीन हो चुका था ।[2] बाजीराव ने गोविन्द बल्लाल खेर को सुबेदार नियुक्त किया ।

आरम्भ में सूबेदार का निवास स्थान रानगिर निश्चित किया गया,[3] परन्तु गोविन्द बल्लाल खेर ने सागर में एक किले का

1· हीरालाल रा·ब·,सागर सरोज, पृ· 25

श्रीवास्तव एवं खरे, बुन्देलों का इतिहास, पृ· 102

2· हीरालाल रा·ब· सागर सरोज पृ· 25,श्री शुक्ल इ·खं·, पृ·91

3· श्री शुक्ल,इ·खं·पृ·91

निर्माण करवाकर वहीं निवास स्थान बनाया और वहीं से वार्षिक चौथ इत्यादि के संग्रह का प्रबन्ध करने लगा ।[1] इस तरह सागर और उसके समीपवर्ती उस भूभाग पर मराठों का अधिकार हो गया जो गढ़ा मण्डला राज्य को स्पर्श करता था। आगे चलकर गढ़ा मण्डला पर भी अधिकार मराठों ने सागर से ही उसका प्रबन्ध संचालन किया ।

<u>भोंसला एवं पेशवा के आपसी हित</u> :-

उल्लिखित है कि गढ़ा मण्डला राज्य में मराठों का हस्तक्षेप गोंड शासक नरेन्द्रशाह के समय से ही आरम्भ हो चुका था, किन्तु उसके उत्तराधिकारी महाराजशाह के शासनकाल गढ़ा मण्डला पर मराठों का आक्रमण होने लगा । निःसन्देह इसे 1780-82 ई॰ में होने वाले गढा मण्डला राज्य केने गोंड वंश के पतन के कहानी की भूमिका कहा जा सकता है ।

वस्तुतः इस समय तक मराठे भारत की राजनीति के सूत्रधार बन चुके थे और जो कुछ उन्होंने गढ़ा मण्डला राज्य के प्रति किया वह उनकी समग्र भारत की गतिविधियों का अंश मात्र था । नागपुर के भोंसला राजा तथा मराठा साम्राज्य के प्रमुख प्रधान पेशवा दोनों ही शक्तियाँ उत्तर भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहती थी । अतः न केवल भोंसला वरन् स्वयं पेशवा भी गढ़ा मण्डला में रूचि रखने लगा । इस तरह भोंसला और पेशवा का गढ़ा मण्डला प्रदेश में समान रूप से रूचि रखने के कुछ विशेष कारण थे ।

---

1. श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 91

दरअसल 1731 ई. में मराठा साम्राज्य के प्रमुख सतारा दरबार की ओर से प्रथम रघुजी भोंसला को बरार में चौथ वसूली का अधिकार प्रदान किया गया ।[1] गढ़ा मण्डला बरार का पड़ोसी राज्य देवगढ़ का सीमावर्ती होने के कारण रघुजी भोंसला का ध्यान उस ओर आकर्षित होना स्वाभाविक ही था । देवगढ़ के माध्यम से रघुजी भोंसला का सम्पर्क गढ़ा मण्डला से स्थापित हुआ । इस समय तक देवगढ़ एवं गढ़ा मण्डला में राज्य शक्ति का ह्रास होना आरम्भ हो चुका था । उत्तराधिकारियों की अयोग्यता एवं राजनैतिक निर्बलता, अनुकूल परिस्थितियां पैदा करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई । इस समय दोनों ही राज्यों के उत्तराधिकारियों में इतना सामर्थ नहीं था कि वह मराठों के आक्रमणों का प्रतिरोध कर उनकी प्रगति को रोक सके, क्योंकि तब तक मराठों का प्रसार अब विधिवत आरम्भ हो चुका था और उनकी सेवाएं लगभग सम्पूर्ण भारत को रौंदने का संकल्प कर चुकी थी ।

1738 ई. तक भोंसला ने बेनगंगा से लेकर नर्मदा तक के प्रदेश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था और अपनी सीमा मालवा तक बढ़ा ली थी ।[2] उसकी धारणा थी कि यदि पेशवा गढ़ा मण्डला पर अपना कब्जा कर लेता है तो वह उसके उत्तरी प्रदेश को आसानी से प्रभावित कर सकता था ।[3] अतः ~~अ~~ स्वाभावतः भोंसला यह नहीं चाहता था कि पेशवा गढ़ा मण्डला पर अपना कब्जा स्थापित कर सके ।[4] इतना ही नहीं सागर स्थित पेशवा की सेना को दक्षिण की ओर ~~से~~

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 133
2. सिन्हा एच.एन. राइज आफ दि पेशवाज, पृ. 222
3. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 134
4. सिन्हा एच.एन., राइज आफ दि पेशवाज, पृ. 222

बढ़ने सेगरोकने के लिए तथा स्वयं भोंसला को उत्तर की ओर बढ़ने के लिये गढ़ा मण्डला प्रदेश अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकता था ।

दूसरी तरफ यह प्रदेश पेशवा के लिए भी उतना ही सहायक एवं महत्वपूर्ण था जितना कि भोंसला के लिए था ।[1] 1735 ई॰ तक गढ़ा मण्डला के समीपवर्ती प्रदेश बुन्देलखंड के सागर और उसके आसपास के प्रदेश पर पेशवा का आधिपत्य स्थापित हो चुका था ।[2] जो कि उसे वंगश खां के विरूद्ध छत्रसाल की सहायता करने के फलस्वरूप हुआ था। अत: सीमावर्ती प्रदेश पर पेशवा का दृष्टिपात होना स्वाभाविक था । साथ ही गढ़ा मण्डला से वह भोंसला की उत्तर भारत की ओर बढ़ती हुई प्रगति को सरलता से रोक सकता था । इस तरह उत्तर भारत को भोंसला के हस्तक्षेप से पूर्णत: मुक्त रखा जा सकता था । इतना ही नहीं पेशवा यह भी भलि भांति जानता था कि गढ़ा और मण्डला दो ऐसे प्रमुख ठिकाने नर्मदा पर स्थित थे जो मालवा की दक्षिणी सीमा की रक्षा कर सकते थे । ऐसी स्थिति में पेशवा के लिए भी गढ़ा मण्डला प्रदेश अत्यन्त महत्वपूर्ण था । जिसे हस्तगत कर वह प्रमुख सैनिक छावनी बना सकता था ।

रघुजी भोंसला का आक्रमण :-

ऐसा उल्लेख मिलता है कि गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने की पहल सर्वप्रथम रघुजी भोंसला ने की थी । जैसा कि इससे पूर्व उल्लेख किया

1· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ· 134

2· सिन्हा एच·एन,· राइज आफ दि पेशवाज, पृ· 22।

जा चुका है कि 1728 ई. में रघुजी भोसला प्रथम ने भास्कर राम को गढ़ामण्डला पर आक्रमण करने के लिए भेजा था परन्तु बाजीराव पेशवा की फौज द्वारा पीछाकिये जाने के कारण उसे वापस लौटना पड़ा । यहाँ उल्लेखनीय है कि उस समय तक रघु जी भोसला को सेना साहब का सम्मान नहीं प्राप्त हुआ था । यह सम्मान उसे 1739 ई. में प्राप्त हुआ ।[1]

भास्कर राम की घटना के पश्चात ही 1731 ई. में रघुजी भोसला को सतारा दरबार की ओर से बरार की चौथ वसूल करने का अधिकार मिलने के कारण वहाँ अपनी स्थिति सुदृढ़ कर गढ़ामण्डला के लिए प्रयास करना उसके लिए सुगम हो गया ।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि 1737-38 ई. में मालवा में बाजीराव पेशवा की व्यस्तता का लाभ उठाने का प्रयास रघुजी भोसला ने किया ।[3] 1738 ई. में राजा शाहू की तरफ से एक नवीन सनद रघुजी को प्राप्त हुई, जिसके अनुसार उसे अन्य प्रान्तों पर मराठा प्रभुत्व प्रस्थापित करने का अधिकार प्राप्त हुआ ।[4] इन प्रान्तों में लखनऊ, मकसुदाबाद, विदर, बंगाल, बुन्देलखण्ड, इलाहाबाद, हाजीपुर एवं पातना[5] आदि सम्मिलित थे, जबकि उसे देवगढ़, गढ़ामण्डला, चांदा एवं भंवरगढ़ में चौथ वसूली का अधिकार पहले ही दिया जा चुका था । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि बुन्देलखंड में पेशवा पहले से ही मराठा प्रभुत्व को प्रस्थापित करने में व्यवस्त था । ऐसी स्थिति में शाहू राजा द्वारा रघुजी भोसला को सनद दिया जाना उचित प्रतीत नहीं होता है ।

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 122
2. वही, पृ. 134
3. अंधारे भा. रा. ; संशोधन शिमले, पृ. 115
4. काले या. मा., ना. भो. इ. [illegible], पृ. 47
5. संभवत: यह भवानी पातना (वर्तमान उड़िसा में) होना चाहिए

वस्तुत: 1738 ई॰ में यह देखकर बाजीराव पेशवा मालवा के अभियान में व्यस्त है, रघुजी भोसला ने इलाहाबाद प्रान्त पर आक्रमण करने के लिए प्रस्थान किया, तब मार्ग में पड़ने वाले गढ़ामण्डला पर आक्रमण कर उसे अधिकृ2 कर लिया[1] संभवत: यह युद्ध घूमा[2] नामक स्थान पर हुआ था,[3] ऐसा प्रतीत होता है कि रघुजी भोसला ने गढ़ामण्डला पर अपना अधिकार स्थापित कर वहां के तत्कालीन राजा महाराजशाह से क्षतिपूर्ति वसूल की होगी और तब उसे यथावत राजा बने रहने दिया, साथ ही इसके एवज में संभवत: उससे वार्षिक कर के रूप में कुछ नीधि निश्चित की होगी।

पेशवा का आक्रमण और महाराज शाह की मृत्यु :-

इससे पूर्व लिखा जा चुका है कि गढ़ा मण्डला पर रघुजी भोसला के आक्रमण के समय बाजीराव पेशवा बुन्देलखण्ड एवं मालवा के अभियान में अत्यधिक व्यस्त था। ऐसी स्थिति में वह तत्काल रघुजी भोसला के विरूद्ध कदम न उठा सका। यद्यपि अवसर मिलने पर बाजीराव स्वयं रघु जी भोसला पर आक्रमण करना चाहता था किन्तु उसी समय दिल्ली पर हुए नादिरशाह के आक्रमण (1739 ई॰) के कारण उसे अपना इरादा बदलना पड़ा[4] जिसके लिए उसे मराठा प्रमुख राजा शाहू की तरफ से भी दिल्ली के सम्राट की सहायता करने के लिए आदेश प्राप्त हुआ था,[5] ऐसा प्रतीत होता है कि शायद बाजीराव स्वयं भी तत्कालीन घरेलू झगड़ों में न उलझते हुए पहले विदेशी शत्रु को भगाना अधिक उचित समझता था, परन्तु

---

1. काले, मा॰मा॰, ना॰भो॰इ॰,॰ पृ॰48, 100
2. घूमा वर्तमान सिवनी जिले में है
3. लाइफ आफ कोलब्रुक, पृ॰450
4. विदर्भ संशोधन मण्डल वार्षिकी, 1982, पृ॰199
5. सर देसाई, म॰न॰इ॰, 2, पृ॰196

इससे पूर्व कि वह दिल्ली पहुंच पाता, नादिरशाह दिल्ली को लूटकर वापस चला गया, दुर्भाग्यवश इन्हीं अभियानों के दौरान बाजीराव पेशवा अकस्मात बीमार पड़ गया और रावेरखेड़ी[1] में नर्मदा के तट पर 28 अप्रेल 1740 ई॰ को उसका देहान्त हो गया।[2]

यद्यपि बाजीराव पेशवा की यह मृत्यु उसके अकस्मात बीमार पड़ने के कारण मानी जाती है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह कोई आकस्मिक घटना नहीं वरन 1739 ई॰ के उत्तरार्द्ध में बाबाजी बाजीराव एवं चिमना जी अप्पा द्वारा पूना में मस्तानी को अपहृत कर उसे कैद किया जाना था, उल्लेखनीय है कि बाजीराव मस्तानी से अगाध प्रेम करता था निश्चित ही इस घटना से बाजीराव को सदमा पहुंचा होगा, जैसा कि 7 मार्च 1740 ई॰ को लिखा गया चिमना जी अप्पा के एक पत्र से विदित होता है "जब से हम एक दूसरे से विदा हुए है, मुझको पूज्यनीय राव से कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ है, मैंने उनके विक्षिप्त मन को यथाशक्ति शांत करने का प्रयास किया, परन्तु मालूम होता है कि ईश्वर की इच्छा कुछ और ही है, मैं नहीं जानता हूं कि हमारा क्या होने वाला है, मेरे पूना वापस होते ही हमको चाहिए कि हम उसको (मस्तानी को) उनके पास भेज दें।[3]

इस तरह विक्षिप्त हृदय से मानसिक एवं आन्तरिक वेदना उसकी मृत्यु के रूप में परिणित हो गयी। बाजीराव के पश्चात उसका पुत्र बालाजी बाजीराव उर्फ नाना साहब उत्तराधिकारी हुआ किन्तु बालाजी को पेशवा का पद विधिवत रूप से 25 जून 1740 ई को प्राप्त हुआ।

---

1. रावेरखेड़ी वर्तमान खरगोन जिले में नर्मदा नदी के तट पर स्थित है
2. सरदेसाई, म॰नं॰इ॰, 2, पृ॰ 195, 205-6,
   विदर्भ संशोधन मण्डल वार्षिकी, 1982, पृ॰ 200
3. सरदेसाई, म॰नं॰इ॰, 2, पृ॰ 188-89

सम्भवतः इस अवधि में लगभग दो माह के अन्तराल में पेशवा पद को प्रतिद्वन्दिता का सामना करना पड़ा होगा । जिसमें बाबू जी नायक का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । बाजीराव की मृत्यु के समय बाबू जी नायक[1] रघुजी भोसला के साथ कर्नाटक में त्रिचनापल्ली के अभियान में व्यस्त था । दूसरी तरफ स्वयं रघुजी भोसला भी छत्रपति शाहू से सीधा सम्पर्क होने के कारण पूना की राजनीति में हस्तक्षेप करना चाहता था वह बालाजी बाजीराव का पेशवा की गद्दी पर बैठना पसन्द नहीं करता था । अतः पेशवा की मृत्यु का समाचार पाते ही वह बाबूजी नायक का पक्ष लेकर छत्रपति शाहू से बातचीत करने के लिए अविलम्ब सतारा पहुंचा,[2] किन्तु अथक प्रयासों के बावजूद भी वह सफलनहो सका[3] ।

वस्तुतः बालाजी बाजीराव पेशवा पद पर पदासीन हुआ । वह पूर्ण पेशवा बाजीराव के अपूर्ण कार्य को पूर्ण कार्य को पूर्ण करना चाहता था । अतः अब रघुजी के विरूद्ध कार्यवाही आरम्भ करने की जिम्मेदारी उसकी हो गयी । बालाजी बाजीराव पेशवा गढ़ामण्डला को अपने अधीन करने का अवसर ढूंढने लगा, संयोगवश शीघ्र ही ऐसी परिस्थितियां निर्मित हुई जिसका लाभ नवीन पेशवा ने उठाया ।

इस समय रघुजी भोसला कर्नाटक में त्रिचनापल्ली के अभियान में व्यस्त था साथ ही उसने अपने विश्वासपात्र एवं योग्य सेनानायक भास्करराम को बिहार व बंगाल अभियान (अक्टूबर 1741 ई.) पर बिदा कर दिया ।[4] इस तरह गढ़ामण्डला पर आक्रमण करने के लिए

---

1. यह एक महाजन तथा शाहू का विशेष कृपा पात्र था ।
2. सरदेसाई म.न.इ., 2, पृ. 196, काले, ना. भो. इ. द्वि. वृ. पृ. 51
3. सरदेसाई म.न.इ., 2, पृ. 196, अंधोरे, संशोधन शिंपले, पृ. 116
4. विल्स सी.यू.,; ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 12
   सरदेसाई, म.न.इ., 2, पृ. 188-89, 211

बालाजी बाजीराव पेशवा का मार्ग निष्कंटक और सुगम हो गया ।
1 दिसम्बर 1741 ई॰ को बालाजी बाजीराव पेशव ने अपने विश्वस्त सेना नायक विलासी जाधव, महादेव पुरन्दरे, बाजी भिवराव रेतरेकर आदि के साथ पूना से प्रस्ताव किया ।[1] इस बीच मल्हारशाह होल्कर एवं राणोजी शिन्दे भी अपनी सेना सहित आकर पेशवा से मिल गये[2] निमाण, मकड़ई और शिवनी मालवा होती हुई मराठा सेना गढ़ामण्डला की ओर अग्रसर हुई ।

परन्तु गढ़ा मण्डला पर पेशवा का यह आक्रमण कब हुआ, इस संदर्भ में कुछ भ्रांतियां प्राप्त होती है । मराठा हिस्ट्री के अग्रज ग्राण्ट डफ सहित लगभग सभी इतिहासकार इसकी तिथि 1742 ई॰ मानते है । सर देसाई के अनुसार मार्च 1742 ई॰ में पेशवा ने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण कर उस पर अधिकार करता हुआ बन्देलखण्ड में प्रवेश किया[3] इस युद्ध में गढ़ा मण्डला का गोंड राजा महाराजशाह मारा गया[4] । इसके मृत्यु के सम्बन्ध में चर्चा हम इसी अध्याय में आगे करेंगे ।

1· अन्धारे, भा॰रा॰ ,॰ बुन्देलखण्ड अण्डर दी मराठाज पा॰ 1, पृ॰ 64

2· वही, पृ॰ 65

3· सरदेसाई, म॰ न॰ इ॰ ,2, पृ॰ 211,221

4· विदर्भ संशोधन मण्डल वार्षिकी, 1982, पृ॰ 200

दूसरी तरफ राजवाड़े के वृतान्तों से ऐसा प्रतीत होता है कि पेशवा की सेना द्वारा गढ़ा मण्डला पर दो बार आक्रमण किया गया । जिसका सत्यापन करते हुए डा॰ सुरेश मिश्र का मत है कि महाराजशाह की मृत्यु प्रथम आक्रमण के समय (1741 ई॰ के उत्तरार्द्ध) में हुई होगी, क्योंकि मराजशाह का उत्तराधिकारी शिवराजशाह फरवरी 1742 ई॰ में सत्तारूढ़ हो चुका था[1] संभवतः शिवराजशाह गढ़ामण्डला पर आक्रमण करने का यह अभियान सागर की ओर से गया । फरवरी 1741 ई॰ में मराठों की सेना ने उनके मार्ग में पड़ने वाले देवरी के किले पर आक्रमण किया[2] आरम्भ में देवरी चन्दल राजाओं के अधीन परगना पंचमहाल[3] की राजधानी थी । समझा जाता है कि इसका प्राचीन नाम रामगढ़ या उजरगढ़ था किन्तु वहां एक देवालय के निर्माण के फलस्वरूप यह स्थान देवरी कहलाया[4] वस्तुतः चन्देलों ने देवरी में एक किला बनवाया था इस समय यह किला गोरझामर के दुर्गा सिंह के पास था, जिसे उसने 1731 ई॰ में किसी चूरामन से प्राप्त किया था[5] उस समय देवरी गढ़ामण्डला राज्य के अधीन उसके पश्चिमोत्तर सीमा पर एक प्रमुख दुर्ग माना जाता

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰136
2. उपरोक्त , पृ॰ 135
3. परगना पंचमहाल में देवरी, गोरीझामर, नाहरमउ, चंवरपाठर एवं तेन्दूखेड़ा आते थे, देखिए संशोधन शिम्पले, पृ॰ 117
4. अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज पा॰1, पृ॰69
5. गढ़ा के गोंड राज्य , पृ॰ 135

था । मराठा सेना को देवरी के आक्रमण में अधिक शक्ति या समय का उपयोग नहीं करना पड़ा लगभग एक माह के अन्दर ही 18 मार्च 1741 ई[1] को मराठों ने सरलतापूर्वक देवरी के किले पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया[2] तदोपरान्त किले की व्यवस्था का भार आवजी कावड़े[3] को सौप कर पेशवा की सेना गढ़ा और मण्डला की ओर अग्रसर हुई और शीघ्र ही गढ़ा के किले को घेर लिया । ऐसा लगता है कि इस समय गढ़ा मण्डला के राजा सुरक्षा व्यवस्था का उचित प्रबंध नहीं किया गया था । 1741 ई॰ के मई-जून में पेशवा की सेना ने गढ़ा पर अधिकार कर लिया ।[4] गढ़ा के अधिकृत करने के पश्चात मराठा सेना ने मण्डला की ओर प्रस्थान किया और शीघ्र ही मण्डला का किला घेर लिया गया ।

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 135 पर 8 मार्च 1741 ई॰ तथा वि॰सं॰म॰ वार्षिकी 1982 पृ॰ 201 पर 18 मार्च 1742 ई॰ लिखा हुआ है
2. अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰1, पृ॰69
3. उपरोक्त पृ॰ 69, गढ़ा के गोंड राज्य, पृ॰ 135
   सम्भवतः यह महिपतराव कावड़े होना चाहिए, जैसा कि डा॰ अन्धारे ने लिखा है कि " महिपत राव कावड़े ने देवरी को जीत लिया था और मल्हारपंत को उस प्रदेश पर निगरानी के लिए लिए नियुक्त किया था" देखिए, बुन्देलखण्ड अण्ड दि मराठाज पृ॰114-115, निश्चित ही यह सत्य के निकट कहा जा सकता है क्योंकि आवजीकावड़े 1740 ई॰ में बुन्देलखण्ड में अपना कार्य समाप्त कर वापस पूना जा चुका था, देखिए सरदेसाई, मराठों का नवीन इतिहास, 2, पृ॰201, इसके विपरीत यदि"आवजे कावड़े को मान लिया जाए तब महिपतराव कावड़े ने देवरी कब जीता? यह विदित नहीं है ।
4. राजवाड़े, मराठ्यांचा इतिहासची साधने पत्रे यादी वगैरह, 2, पृ॰91

इस युद्ध के संदर्भ में हमें एक बार पुन: प्रमाणों के अभाव का सामना करना पड़ता है परन्तु स्थानीय वृतान्तों के आधार पर लिखे गये ग्रन्थों[1] से जो जानकारी प्राप्त होती है, उसके अनुसार यह विदित होता है कि गोंड राजा को बहुत दिनों तक मराठा सेना से युद्ध करना पड़ा । जिसमें मण्डला राज्य के जागीरदार बिल्हरी वाले शम्भाजी मुगाराव तथा भेड़ाघाट के महन्त कल्याणपुरी सहायता के लिए महाराजशाह के पास आये किन्तु दोनों ही राजा के प्रति विश्वासघाती सिद्ध हुए । वे मराठा सेना से जा मिले तथा उसे किले में प्रवेश करवाने का वचन दिया और युद्ध के दौरान शम्भाजी ने मण्डला के किले की पश्चिमी बुर्ज में सुरंग लगाकर वहां मराठा सेना के प्रवेश के लिए स्थान बना दिया तब मराठा सेना ने बड़ी ही सुगमता से किले में प्रवेश किया[2] । इसी समय महाराजशाह की मृत्यु हुई ।

महाराजशाह की मृत्यु के संबंध में भी अलगअलग मत प्राप्त होते हैं । अग्रवाल एवं पाठक के वृतान्तों के अनुसार मण्डला किले के भीतर से शम्भाजी एवं कल्याणपुरी द्वारा दागी गयी बन्दूकों में गोली नहीं थी । जिससे पेशवा की सेना हताहत होने से बच गयी और पेशवा की सेना द्वारा मण्डला के लिए प्रवेश करने के साथ ही शम्भा जी ने गोली मार कर महाराजशाह की हत्या कर दी ।[3]

1· अग्रवाल रा·भ· "गढ़ा मण्डला के गोंड राज्य", तथा गणेश दत्त पाठक "गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास"

2· अग्रवाल रा·भ·, गढ़ामण्डला के गोंड राज्य, पृ· 101, पाठक, ग·द·, गढ़ामण्डला का पुरातन इतिहास पृ· 27

3· पाठक, ग·द·, गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास, पृ· 27
अग्रवाल रा·भ· गढ़ामण्डला के गोंड राज्य, पृ· 102, इनके अनुसार फाल्गुन सं· 1799 (मार्च 1742 ई·) को युद्ध प्रारम्भ हुआ और वैशाख शुक्ल तृतीया सं· 1800 (मई 1743 ई·) को किला टूटा । इस तथ्य से महाराजशाह की मृत्यु मई 1743 ई· में हुई परन्तु यह तथ्य सही नहीं है जैसा कि रघुजी भोसले I के द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है ।

इसके विपरीत 4 मई 1742 ई॰ को रघुजी भोसला ने छत्रपति शाहू को एक पत्र लिखा था जिससे विदित होता है कि महाराजशाह ने अपमान से बचने के लिए अग्नि समाधि ली थी । यहाँ रघुजी भोसला के पत्र पर सन्देह करने का कोई उचित कारण प्रतीत नहीं होता । निःसन्देह रघुजी भोसला ने यह पत्र घटना के कुछ समय बाद ही लिखा होगा क्योंकि वह पेशवा की प्रत्येक गतिविधि पर विशेष रूप से ध्यान दे रहा था । इस प्रकार महाराजशाह की मृत्यु 1741 ई॰ के उत्तरार्द्ध में हुई[1] ही अधिक विश्वसनीय प्रतीत होती है । स्पष्ट है कि पेशवा ने इस आक्रमण में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लिया ।

इसके साथ ही हम एक बार पुनः पूना की तरफ चलते हैं जहाँ से दिसम्बर 1741 ई में प्रस्ताव कर पेशवा गढ़ा मण्डला की ओर अग्रसर हुआ । वह निरन्तर रघुजी भोसला की प्रगति का भी अवलोकन करता रहा । नर्मदा के दक्षिणी तट के साथ आगे बढ़ता हुआ सम्भवतः वह मार्च 1742 ई में गढ़ा और मण्डला में स्थित अपनी पूर्व सेना से जा मिला ।

अब तक शिवराजशाह गढ़ा मण्डला के राजा के रूप में सिंहासन ग्रहण कर चुका था परन्तु अब वह पूर्णतः मराठों की कृपा पर निर्भर हो गया । यद्यपि पेशवा चाहता तो गढ़ा मण्डला को अधिकृत कर गोंड़ राजवंश की इतिश्री कर सकता था तथापि इससे रघुजी भोसला से प्रत्यक्ष युद्ध होने के भय से उसने ऐसा करना उचित नहीं समझा । पेशवा की सेना काफी दिनों तक मण्डला में पड़ी रही ।

1• गढ़ा के गोंड़ राज्य पृ॰ 136

इधर शिवराजशाह को अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए एक वर्ष से अधिक समय प्राप्त हुआ[1] इस बीच प्रतिरोध स्वरूप उसने कोई प्रयास किया होगा, इसका उल्लेख नहीं मिलता है। अतिरिक्त इसके कि महाराजशाह के साथ विश्वासघात करने वाले शम्भाजी मुंगाराव की हत्या करवाकर विश्वासघात का बदला लिया था।[2]

वस्तुत: 18 नवम्बर 1742 ई॰ को अंतिम रूप से मण्डला का किला जित लिया गया[3] विवश होकर शिवराजशाह ने पेशवा के साथ संधि की[4] जिसके अनुसार क्षतिपूर्ति के रूप में चार लाख रूपया पेशवा को दिया जाना निश्चित हुआ[5]। पेशवा ने शिवराजशाह के भाई निजामशाह को

---

1. गढ़ा के गौंड राज्य, पृ॰ 137
2. पाठक ग॰द॰ गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास, पृ॰ 28, गढ़ा के गौंड राज्य पृ॰ 137, अग्रवाल रा॰भा॰, गढ़ा मण्डला के गौंड राज्य पृ॰ 102
3. गढ़ा के गौंड राज्य पृ॰ 137
4. डा॰ अन्धारे के तथ्यों से ऐसा विदित होता है यह संधि अगस्त 1742 ई॰ से पूर्व हुई होगी, उनके अनुसार अगस्त 1742 ई॰ में शिवराजशाह की मृत्यु हो चुकी थी, देखिए संशोधन शिंदे पृ॰ 117
5. स्लीमन, ज॰ए॰सो॰बं॰, 68, 1837, पृ॰ 636

को साथ ले जाकर सागर स्थित अपने प्रतिनिधि विसाजी चान्दोरकर को उस समय तक के लिए सौंप दिया जब तक कि क्षतिपूर्ति की राशि चुकाई न जा सके । ऐसा आभास होता है कि पेशवा ने निजामशाह के साथ उदारता पूर्ण व्यवहार किया क्योंकि जाते समय उसने यह आदेश दिया कि एक लाख रूपया प्राप्त होने पर ही निजामशाह को वापस भेज दिया जाये तथा शेष तीन लाख रूपये बाद में वसूल किया जाये ।[1]

उल्लेखनीय है कि क्षतिपूर्ति के अतिरिक्त पेशवा को प्र लूट में लगभग चार लाख रूपये की सम्पत्ति प्राप्त हुई तथा एक लाख रूपये वार्षिक चौथ के रूप में निर्धारित की गयी ।[2] इस प्रकार मण्डला किले की आवश्यक व्यवस्था कर पेशवा ने बुन्देलखंड की ओर प्रस्थान किया ।

भोंसला और पेशवा की शत्रुता :-

1742 ई. में पेशवा द्वारा गढ़ा मण्डला पर अधिकार किये जाने के साथ ही यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से गोंड राजवंश ही राज सिंहासन पर बैठा तथापि अप्रत्यक्ष रूप से इस प्रदेश को एक नवीन राजनीतिक हलचल का सामना करना पड़ा जिसका दूरगामी परिणाम कालान्तर में परिलच्छित हुआ ।

इस आक्रमण के फलस्वरूप प्रमुख मराठा शक्तियाँ भोंसला और पेशवा के मध्य म्र स्पष्ट रूप से शत्रुता आरम्भ हो गयी । इसके साथ ही गढ़ा मण्डला पर आधिपत्य को लेकर भोंसला और पेशवा के

---

1. गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 138

2. डा.अन्धारे ने लिखा है कि बालाजी बाजीराव पेशवा ने चौथ की रकम चार लाख रूपये वार्षिक के हिसाब से वसूल की । देखिये वि.सं.मं.वार्षिकी 1982, पृ. 200

मध्य लगभग 50 वर्षों तक झगड़े चलते रहे ।[1]

दरअसल यह कोई आकस्मिक घटना नहीं वरन् बहुत दिनों से चली आ रही उक्त दोनों के आपसी स्पर्धा का ही परिणाम था । 1737-38 ई॰ में मालवा में निजाम के विरूद्ध वाजीराव पेशवा के अभियान में छत्रपति शाहू के आदेश के बावजूद भी रघुजी भोंसला ने पेशवा की सहायता नहीं की वरन् ठीक उसी समय रघुजी भोंसला ने गढ़ा मण्डला पर आक्रमण कर दिया था । तब से ही पेशवा बाजीराव ने रघुजी भोंसला की शक्ति कम करने का निश्चय कर लिया था तथा यथासम्भव उसे आत्म समर्पण हेतु विवश करना चाहता था ।[2] उसका कहना था कि नर्मदा के उत्तर की ओर कर वसूलने का अधिकारी रघुजी भोंसला को नहीं है तथा उस क्षेत्र में आक्रमण करने के लिए भी उसे शाहू जी या पेशवा से अनुमति लेना चाहिए ।[3]

दूसरी तरफ रघुजी भोंसला का शाहू से सीधा रिश्ता एवं स्वतंत्र सम्पर्क होने के कारण वह वाजीराव पेशवा की परवाह नहीं करता था । उसका मानना था कि पेशवा का पद सदैव ब्राह्मणों के लिए आरक्षित नहीं है इससे आगे शाहू के निःसन्तान मरने पर वह स्वयं सतारा की गद्दी पर बैठने का अभिलाषी था ।[4] इसके साथ ही रघुजी भोंसला का कहना था कि गढ़ा मण्डला नागपुर राज्य से सटा होने के कारण इस पर हमारा अधिकार बनता है

1॰ विदर्भ संशोधन मण्डल वार्षिकी, 1982, पृ॰ 199

2॰ सिन्हा, एच॰एन॰, राइज आफ दि पेशवाज, पृ॰ 222

3॰ केलकर, एन॰सी॰, मराठे और अंग्रेज, पृ॰ 159

4॰ सिन्हा, एच॰एन॰, राइज आफ दि पेशवाज, पृ॰ 222, केलकर, मराठे और अंग्रेज, पृ॰ 160, विदर्भ संशोधन मंडल वार्षिकी, 1982, पृ॰ 200

जबकि पेशवा का कहना था कि गढ़ा मण्डला बुन्देल खंड क्षेत्र का एक हिस्सा होने के कारण उसके अधिकार में आता है ।[1]

यह भी उल्लेखनीय है कि पेशवा बाजीराव की मृत्यु के पश्चात रघुजी भोंसला बालाजी बाजीराव के पेशवाई पद के लिए भी विरोध प्रकट किया । ऐसी स्थिति में भोंसला और पेशवा के मध्य कटुता उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था ।

वस्तुतः गढ़ा मण्डला पर अपने अधिकार को लेकर उत्पन्न हुए विवाद के कारण भोंसला एवं पेशवाओं में पैदा हुई कटुता अन्ततः अंग्रेजों से सहायता लेने के स्तर पर पहुँच गयी ।[2]

जैसा कि उल्लिखित है कि भोंसला और पेशवा एक दूसरे की गतिविधियों का अवलोकन कर रहे थे । अतः गढ़ा मण्डला जिसे रघुजी भोंसला ने अपने इलाहाबाद अभियान के दौरान जीता था, किन्तु पेशवा बालाजी बाजीराव ने आक्रमण करके अधिकृत कर लिया तो वह सहन न कर सका और अपना विरोध प्रकट करते हुए उसने विश्वनाथ भट्ट को पत्र लिखकर {4 मई 1742 ई॰ को} शाहू से तत्कालीन पेशवा की शिकायत की । रघुजी प्र भोंसला ने पत्र में लिखा "हम लोग मंजिल दर मंजिल बरार से देवगढ प्रान्त नागपुर के मुकाम पर वापस आये । नागपुर आने पर मुझको ज्ञात हुआ कि पेशवा ने अनाधिकार पूर्वक मुझे प्रदत्त प्रदेश का अतिक्रमण किया है । उसने गढ़ा और मण्डला के मेरे थानों पर अधिकार कर लिया । मेरे प्रदेश को लूट कर नष्ट कर दिया है तथा सिवनी और छपारा को भी लूट लिया और नष्ट कर दिया है । अपमान से बचने के लिए मण्डला का

1· विदर्भ संशोधन मंडल वार्षिकी, 1982, पृ· 200

2· अन्धारे भा·रा· _बुन्देलखंड अण्डर दि मराठाज_, पा·1 पृ· 65

राजा जौहर करके मृत्यु को प्राप्त हुआ । तत्पश्चात पेशवा ने बुन्देल खंड की ओर प्रस्थान किया । अभी तक मैं उनके मार्ग में नहीं आना चाहता था, परन्तु अब मेरा धैर्य समाप्त हो चुका है । छत्रपति को सूचित कर दीजिये कि मैंने पूर्ण प्रतिशोध लेने का निश्चय कर लिया है । पेशवा के सेनाधिकारी त्रयम्बक विश्वनाथ पेठे को मेरे प्रदेश में हस्तक्षेप करने के कारण मैने पहले से ही कैद कर रखा है ।[1]

इस तरह रघुजी भोंसला और बालाजी वाजीराव पेशवा के मध्य गढा मण्डला को लेकर मतभेद और बढ़ते गये । कालान्तर में नागपुर के भोंसला अनेक बाधाओं के बावजूद भी गढ़ा मण्डला पर अपना आधिपत्य स्थापित करने में सफल हुए । इसकी विस्तृत चर्चा हम आगामी अध्यायों में करेंगे ।

गढ़ा मण्डला विवाद के साथ ही 1743 ई. में पेशवा ने बंगाल में रघुजी भोंसला की प्रगति में बाधा उत्पन्न की । इस बीच बंगाल में नवाब अलीवर्दी खाँ ने पेशवा से एक संधि की जिसके अनुसार वह रघुजी भोंसला के विरूद्ध बंगाल में अलीवर्दी खान की सहायता करेगा ।[2] अन्तत: दोनों की शत्रुता 10 अप्रेल 1743 ई. को पाचेट[3] के समीप बेंदू के दर्रे के युद्ध के रूप में परिवर्तित हो गयी ।[4] इस युद्ध में रघुजी भोंसला को पराजय का सामना करना पड़ा ।

---

1. सरदेसाई, मराठी रियासत, पाँच, पृ. 68, सरदेसाई म.न.इ. ,2, पृ. 220, गढ़ा के गोंड राज्य ,पृ. 136
2. सरदेसाई, म.न.इ.,2,पृ. 223
   विल्स सी.यू.,ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 13
3. पापेट, पुरुलिया से लगभग 32 कि.मी.पश्चिम में स्थित
4. सरदेसाई, म.न.ई.,2,पृ. 221

<u>भोंसला और पेशवा की संधि</u> :-

अपनी हार का बदला लेने के लिये रघुजी भोंसला ने गायकवाड़ की तरफ मित्रता का हाथ बढ़ाया ।[1] स्वाभाविक था कि भोंसला गायकवाड़ के साथ मिल कर पेशवा के प्रदेश पर आक्रमण करता और हर सम्भव गढ़ा मण्डला को प्राप्त करने का प्रयत्न करता । ऐसी स्थिति में पेशवा को एक साथ दो शत्रुओं का सामना करना पड़ता । अब पेशवा के समक्ष मात्र दो विकल्प थे या तो इन मराठा प्रमुख से शत्रुता का युद्ध करे अथवा रघुजी भोंसला को बंगाल के साथ गढ़ा मण्डला प्रदेश सौंप दें । अतः उसने दूसरा विकल्प चुनना अधिक श्रेयस्कर समझा ।

दूसरी तरफ सतारा में स्वयं छत्रपति शाहू भी इनकी शत्रुता से चिन्तित था । वह नहीं चाहता था कि मराठा शक्तियाँ आपस में टकरा कर छिन्न भिन्न हो जाये । उसने रघुजी और बालाजी बाजीराव के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करवाने के लिए प्रयत्न किया । जिसके फलस्वरूप 31 अगस्त 1743 ई.[2] को दोनों ने एक संधि पत्र पर हस्ताक्षर किया । इस समझौते के अनुसार बरार के पूर्व का समस्त प्रदेश कटक, बंगाल और लखनऊ तक रघुजी भोंसला के लिए छोड़ दिया गया । पेशवा ने यह स्वीकार किया कि वह उसमें हस्तक्षेप नहीं करेगा तथा इस रेखा के पश्चिम का समस्त प्रदेश पेशवा का हो गया साथ ही पेशवा ने 1744 ई. में रघुजी भोंसला को गढ़ा मण्डला प्रान्त भी देना स्वीकार किया ।[3] इस समझौते के फलस्वरूप गढ़ा मण्डला के लिए जो प्रतिद्वन्दिता चली आ रही

---

1. विल्स सी.यू., <u>ब्रिटिश रिलेशन्स</u>, पृ. 13
2. विल्स के अनुसार यह संधि 1744 ई. में हुई थी देखिये, ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 13
3. काले या.मा.ना. भो.इ.द्वि.वृ.पृ.64
4. अन्धारे भा.रा., बुन्देल खण्ड अण्डर दि मराठाज, पा.1, पृ. 70

थी वह कुछ समय के लिए स्थगित हो गयी ।

तदनुसार रघुजी भोंसला ने विठ्ठल बल्लाल सूबेदार को गढ़ा मण्डला पर अपना अधिकार प्राप्त करने के भेजा किन्तु वहाँ पहले से ही पेशवा की तरफ से तैनात अधिकारी विश्वास राव मोरेश्वर ने गढ़ा मण्डला का अधिकार सौंपने से इन्कार कर दिया ।[1] सम्भवत: विश्वासराव मोरेश्वर का यह तर्क था कि उन्होंने सनद द्वारा अपना अधिकार प्राप्त किया है । ऐसी स्थिति में उसे दूसरे को सौंपने का कोई औचित्य नहीं है । फलस्वरूप विठ्ठल बल्लाल सूबेदार को निराश होकर लौटना पड़ा ।[2] पेशवा के अधिकारियों की यह कार्यवाही 1797-98 ई॰ तक पुन: दोनों शक्तियों के मतभेद का कारण बनी ।

<u>विविध घटनाएँ</u> :-

रघुजी भोंसला द्वारा नारायण बाबूराव वैध[3] को लिखे गये एक पत्र में ऐसा विदित होता है कि गढ़ा मण्डला से विश्वासराव मोरेश्वर द्वारा कब्जा न दिये जाने के कारण यद्यपि विठ्ठल बल्लाल ~~ब~~ सूबेदार वापस हो गया किन्तु तब भी वह शांत न रह सका । उसने जमींदारों एवं सेना के द्वारा कई स्थानों पर उपद्रव करवाया । कटंगी के पास बुन्देलों ने भी विद्रोह किया किन्तु बाद में इस विद्रोह को दबा दिया गया ।[4]

... सरदेसाई का मत है कि गढा मण्डला प्रान्त के सम्बन्ध में रघुजी और बालाजी बाजीराव में पृथक समझौता हुआ देखिये, <u>मु॰नु॰इ॰</u> ,2,पृ॰ 227

1॰ काले या॰मा॰,ना॰भो॰इ॰पृ॰64 विदर्भ संशोधन मंडल वार्षिकी 1982 पृ॰ 202

3॰ एस॰पी॰डी॰20॰ले॰33

4॰ यह वैध रघुजी का वकील था

ऐसा प्रतीत होता है कि जहाँ एक ओर रघुजी भोसला गढ़ा मण्डला पर अपने अधिकार का दावा कर रहा था वहीं दूसरी ओर उसने गढा मण्डला के पड़ोसी राज्य देवगढ़ में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया था ।

1742 ई॰ में उसने बुरहानशाह को गद्दी पर बैठाया जो कि सिर्फ नाममात्र का शासक था । अब वास्तविक सत्ता रघुजी के हाथ में श्र चली गई थी । 1745 ई॰ में देवगढ़ के पूरे जिले, सिवनी जिले का अधिकांश भाग, बालाघाट तथा होशंगाबाद जिले का कुछ हिस्सा (सोहागपुर तहसील) रघुजी के राज्य के अधीन आ गये और आगामी कुछ वर्षों में उसने सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया ।[1] इसके साथ ही रघुजी भोंसला की शक्ति का केन्द्र नागपुर हो जाने के कारण अब उसे गढ़ा मण्डला के सन्दर्भ में अपनी कार्यप्रणाली का संचालन करना अधिक सुगम हो गया । निःसन्देह वह अपनी स्थिति का सदुपयोग करना चाहता था । जिसका लाभ उठाते हुए उसने गढ़ा मण्डला राज्य के परगना लाँजी के लाफागढ़, बाँकागढ़, संतागढ़, करवागढ, दियागढ और झंझनगढ़ को अधिकृत कर लिया ।[2] इस समय शिवराज शाह में इतना सामर्थ नहीं था कि वह रघुजी भोंसला का प्रतिरोध कर सकता । अतः वह शांत रहा ।

उल्लेखनीय है कि 1742 ई॰ के समझौते के साथ शिवराजशाह मराठों को नियमित रूप से कर देता रहा और बाद में निजाम शाह ने भी उसी का अनुसरण किया । निजामशाह के समय में परिस्थितियों का लाभ उठाकर रघुजी भोंसला ने खेरागढ़ और पसरिपा[3] पर अपना

1· <u>गढ़ा के गोंड राज्य</u>, पृ॰ 138, 140

2· पाठक ग॰द॰, <u>गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास</u>, पृ॰ 28-29
स्लीमन, ज॰ए॰सो॰बं॰,68, 1837 पृ॰ 636

3· सम्भवतः बिलासपुर जिले का पंडरिया-परताबगढ़ होना चाहिए

अधिकार कर लिया ।[1]

रघुजी भोंसला की मृत्यु :-

इसी समय अजीतसिंह, रघुजी भोंसला की सहायता से गढ़ा मण्डला के महाराजपुर के क्षेत्र पर अधिकार करना चाहता था, किन्तु वह अपने उद्देश्य में सफल न हो सका । समय से पूर्व ही निजामशाह द्वारा पकड़वा कर उसे मृत्यु दंड दे दिया गया ।[2] गढ़ा मण्डला को प्राप्त करने की कार्यवाही के दौरान ही 14 फरवरी 1755 ई० को रघुजी भोंसला की मृत्यु हो गयी । तत्पश्चात जनोजी भोंसला सेना साहब सुभा हुआ ।[3] सम्भवतः रघुजी द्वारा अधिकृत किये गये गढ़ा मण्डला के भाग से जानो जी भोंसला सन्तुष्ट नहीं हुआ था । अतः उसने रघुजी के कार्य को आगे बढ़ाते हुए गढ़ा मण्डला प्रदेश की सीमा पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया और गढ़ा मण्डला के 13 महाल अधिकृत करने का प्रयत्न किया विवश होकर निजामशाह ने अपने प्रतिनिधि द्वारा 50 हजार रूपया वार्षिक देने का वचन ? देकर उससे मुक्ति पायी । अपने वचन को कुछ वर्षों तक उसने निभाया भी ।[4]

इसी सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय होता है कि निजामशाह के लिये क्रमशः भोंसला एवं पेशवा को वार्षिक क्षतिपूर्ति एवं कर देना बहुत ही कष्ट कर हो रहा था । ऐसी स्थिति में उसने संरक्षण मांगने के लिए अपने प्रतिनिधि रघुवंश वाजपेयी को पेशवा के पास पूना भेजा समझा जाता है कि उसे अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त हुई । पाठक

1· शेजवलकर, नागपुर अफेयर्स, 1,पृ· 189-90

2· गढ़ा के गोंड राज्य, पृ· 140

3· काले या·मा·, ना·भो·इ·,पृ·65-74

4· शेजवलकर, नागपुर अफेयर्स, पृ· 189-90

पाठक ग·द·, गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास,पृ·30-31

के अनुसार उसने आग्रह करके वार्षिक कर में से 10 हजार रूपया कम करवा लिया शेष चालीस हजार के बदले में देवरी गौरी झामर और पनागर के किले पेशवा को सौंप दिये जायेंगे ।[1] ऐसा वचन पत्र पेशवा को दिया गया ।[2]

इससे पहले लिखा जा चुका है कि देवरी पर 1741 ई० में मराठों का अधिकार हो गया था । सम्भवत: किसी आवजी या महिपतराव कावडे ने देवरी को जीत कर मल्हारपंत को वहाँ देखभाल करने के लिए नियुक्त किया था ।

---

1. डा० अन्धारे ने नागपुर अफेयर्स, कलेन्डर आफ पार्शीयन कारेस्पान्डेन्स एवं हिस्टॉरिकल पेपर्स रिलेटिंग टू महादजी का सत्यापन करते हुए लिखा है कि शिवराज शाह के भाई निजामशाह ने सिंहासन हड़पने के पश्चात अपना राजदूत महिपतराव कावड़े और गोविन्द बल्लाल खेर के पास संधि करने के लिए भेजा । यह संधि सितम्बर 1742 ई० में हुई थी । इसके अनुसार मराठों को फतेहपुर, मेदली और पनागर का प्रदेश नकद राशि के बदले में प्राप्त हुआ । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उक्त प्रदेश गढ़ा मण्डला राज्य के अधीन थे ।

   यदि डा० अन्धारे के उक्त तथ्य को मान लिया जाये तो यह निश्चित है कि निजामशाह 1742 ई० में सिंहासनारूढ़ हुआ होगा । दूसरी तरफ जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि निजामशाह सितम्बर 1749 ई० में सिंहासनारूढ हुआ । तब सम्भवत: यह समझौता सितम्बर 1749 ई० में या उसके बाद कभी हुआ होगा ।

   वस्तुत: वास्तविकता क्या है इस सन्दर्भ में प्रमाणों के अभाववश कोई उचित निष्कर्ष निकालना सम्भव नहीं है ।

2. गढ़ा के गौंड राज्य, पृ० 141

1758 ई॰ में गोविन्द बल्लाल खेर को पूना से देवरी की सनद प्राप्त हुई, गोविन्द वल्लाल खेर ने गोविन्द केशव को देवरी का कब्जा लेने के लिए मल्हारपंत के पास भेजा, जिसे देवरी का मात्र आधा भाग दिया गया । अन्तत: गोविन्द खेर के हस्तक्षेप से उसकी सत्ता प्रत्यक्ष रूप से देवरी पर स्थापित हो गयी ।[1]

दूसरी तरफ गोविन्द बल्लाल खेर ने इससे पूर्व 1755 ई॰ में ही अपने दामाद विसाजी गोविन्द चान्दोरकर को सूबा सागर का प्रान्तपति नियुक्त किया था ।

विद्रोह एवं षडयन्त्र :-

दरअसल यह विद्रोह एवं षडयन्त्रों का समय था जिसका प्रभाव न केवल गढ़ा मण्डला वरन उसके आसपास के प्रदेशों पर भी प्रत्यक्ष रूप से पड़ा । प्रत्येक राजा, राजनीतिज्ञ एवं व्यक्ति आपसी स्वार्थ पूर्ति में लिप्त था । नि:सन्देह मराठो ने इस समय गढ़ा मण्डला का इतिहास कुछ और ही लिखा होता किन्तु अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों (1749-61 ई॰ तक) ने प्रतिरोध स्वरूप उन्हें अपनी ओर आकृष्ट किया । दुर्भाग्यवश 1761 ई॰ में पानीपत के युद्ध में मराठों की दु:खद पराजय ने स्थानीय मराठा शक्ति को भी झकझोर कर रख दिया । इस बीच परिस्थितियों का लाभ उठाकर सागर प्रदेश के गोंड, बुन्देले एवं लोधी सरदारोंने मराठों के विरूद्ध विद्रोह कर दिया और सागर एवं उसके आसपास के दो चार[2] स्थानों को छोड़कर शेष मराठा प्रदेश व्रिद्रोहियों का कब्जा हो गया[3] किन्तु अन्त में जानोजी

1· अन्धारे, भा·रा·,बुन्देलखंड अण्डर दि मराठाज, पा·1 पृ· 114-15

2· हटा, सागर, जैसिंहनगर, जटाशंकर, खिमलासा एवं एरण

3· अन्धारे भा·रा·बुन्देलखंड अण्डर दि मराठाज़, पा·1 पृ· 120-21

भोंसला की सहायता से विसाजी गोविन्द चान्दोरकर विद्रोहियों को विफल करने में सफल हुआ ।

इस समय निःसन्देह जानोजी भोंसला द्वारा पेशवा की सेना को सहायता देने का प्रमुख उद्देश्य गढ़ा मण्डला पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना था । सम्भवतः जून 1961 ई॰ में भोसला नागपुर एवं पेशवा पूना लौट गया । जहाँ 23 जून 1761 ई॰ को पेशवा बालाजी बाजीराव की मृत्यु हो गयी । पेशवा की मृत्यु से उत्तर की ओर बढ़ती हुई मराठा शक्ति एक बार पुनः कुछ समय के लिए ~~स्थिर~~ स्थिर हो गयी ।

बालाजी बाजीराव के पश्चात माधवराव प्रथम पेशवा हुआ तथा रघुनाथ राव उसका संरक्षक बना ।[1] इस समय तक जानोजी भोंसला का उपद्रव समाप्त नहीं हुआ था इसलिए माधवराव को पेशवा पद प्राप्त करने के साथ ही प्रथमतः जानोजी भोंसला के विद्रोही स्वभाव का सामना करना पड़ा । तात्कालीन परिस्थितियों में जानोजी भोंसला ने पेशवा के विरूद्ध निजाम का साथ दिया था ।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि आगामी 6 वर्षों तक पेशवा ने जानोजी भोंसला को दबाने का प्रयास किया । 1766 ई॰ में जानोजी भोंसला का दमन करने के लिए पेशवा स्वयं नागपुर आया । उस समय विवश होकर जानोजी भोंसला को माधवराव पेशवा से क्षमा मांगनी पड़ी, किन्तु लगभग दो वर्ष बाद ही 1768 ई॰ में जानोजी भोंसला पेशवा के विरूद्ध पुनः उठ खड़ा हुआ और रघुनाथ राव द्वारा विद्रोह किये जाने पर उसका साथ दिया । फलस्वरूप क्रोधित होकर पेशवा रघुनाथराव का दमन करता हुआ नागपुर की ओर अग्रसर हुआ ।

1॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 2, पृ॰ 491

2॰ एस॰पी॰डी॰, 20, पृ॰ 168

जहाँ पहुँचकर उसने शहर को लूटकर भोंसला के दक्षिणी प्रदेश पर अधिकार कर लिया ।[1] विवश होकर जानोजी भोंसला को 23 मार्च 1769 को पुन: पेशवा के साथ संधि करनी पड़ी ।[2]

उल्लेखनीय है कि इस संधि के पश्चात जानोजी भोंसला पेशवा के प्रति निष्ठावान बना रहा और मई 1772 ई॰ में उसकी मृत्यु हो गयी । संयोगवश कुछ माह पश्चात ही 18 नवम्बर 1772 ई॰ को माधवराव पेशवा की भी मृत्यु हो गयी । इस प्रकार मराठा शक्ति पर उसके प्रमुखों की मृत्यु के रूप में लगातार दो प्रहार हुए जिसने तत्कालीन राजनीति को अत्यधिक प्रभावित किया ।

जानोजी भोंसला के बाद नागपुर का भोंसला राज पूर्णत: आशक्त हो गया । नि:सन्देह अब वह केवल घिसट रहा था और शक्तिहीन होने के साथ ही आत्मरक्षा में असमर्थ था । अब वह केवल एक बात के लिए उत्सुक था कि राज्य किसी प्रकार परिवार के बाहर न जाये ।

=:: 0 : 0 : 0 ::=
==0==

1॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 2,पृ॰ 558

2॰ एस॰पी॰डी॰,20,पृ॰216,काले या॰मा॰ना॰भो॰इ॰,पृ॰ 119
अन्धारे भा॰रा॰,बुन्देलखंड अन्डर दि मराठाज, पा॰1,पृ॰ 189

अध्याय 4

निजामशाह के शासनकाल में ही गढ़ामण्डला राज्य की सीमा संकुचित हो गयी,साथ ही भौंसला और पेशवा दोनों की दृष्टि गढ़ा-मण्डला पर लगी थी और निजामशाह में दोनों का सामना करने की शक्ति नहीं थी । अत: उसने धन से इन शक्तियों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया किन्तु अन्तत: वह अपनी योजना में सफल न हो सका और गढ़ा मण्डला के अस्तित्व को भी सुरक्षित रखने में असमर्थ हो गया ।

1780-90 ई॰ के दशक में गढ़ामण्डला राज्य को मराठों के उस चक्रव्यूह का सामना करना पड़ा, जिसमें फंसकर गौंड वंश रूपी अभिमन्यु सदैव के लिए धराशायी हो गया और गढ़ामण्डला राज्य पर प्रत्यक्ष रूप से मराठों का अधिकार स्थापित हो गया ।

1॰ गौंड दरबार में आपसी षड़यंत्र :-

पूर्व में लिखा जा चुका है कि निजामशाह की मृत्यु के पश्चात गढ़ामण्डला षड़यंत्रों एवं गृह कलह का केन्द्र बन गया । उसके पश्चात कुछ समय तक उसका दासी पुत्र महिपाल सिंह ने राज सिंहासन को सुशोभित किया किन्तु शिवराजसिंह शाह की विधवा रानी विलासकुंवर की कूट-नीति ने शीघ्र ही उसे इस सुख से वंचित कर दिया ।[1] विलास कुंवर के प्रयत्नों के फलस्वरूप नरहरिशाह को गद्दी प्राप्त हुई, संभवत: 1776 ई॰ में वह सत्तारूढ़ हुआ ।[2] परन्तु अभी भी नरहरिशाह का मार्ग पूर्णत: निष्कंटक

1॰ गढ़ा के गौंड राज्य,पृ॰160

2॰ इसका उल्लेख पहले किया जा चुका है ।

नहीं था । सुमेरशाह उसके प्रतिद्वन्दी के रूप में विद्यमान था । जिसके कारण आगे चलकर उसे पदच्युत होना पड़ा । इसका उल्लेख इसी अध्याय में आगे किया जायेगा । सुमेरशाह ने सिंहासन प्राप्त करने के लिए नरहरिशाह के विरूद्ध नागपुर के मुधोजी भोंसला से सहायता की याचना की ।[1]

उल्लेखनीय है कि इस समय नागपुर में मुधोजी भोंसला "सेना-धुरन्धर" की पदवी से सम्भानित तथा जानोजी भोंसले के उत्तराधिकारी रघुजी भोंसला द्वितीय जो "सेना साहब सुवा" था, का संरक्षक था । उस जानोजी भोंसला और पेशवा के मध्य 1769 ई॰ में हुई संधि को ठुकराते हुए 1776 ई॰ में सुमेरशाह के अनुरोध को स्वीकार कर लिया और गढ़ा-मण्डला पर आक्रमण करने के लिए एक सेना भेजी, परन्तु विलासकुंवर की कूटनीति एवं दूरदर्शिता के फलस्वरूप नरहरिशाह के ऊपर से संकट टल गया। दरअसल विलासकुंअर ने 3 लाख 50 हजार रूपये देने का वचन देकर भोसला की सेना से समझौता कर लिया । अत: नागपुर की सेना वापस लौट गयी । बाद में नरहरिशाह ने समझौते की राशि देने से इन्कार कर दिया ।[2]

इस तरह भोंसला की सेना के वापस लौट जाने के पश्चात निराश होकर सुमेरशाह ने सागर की तरफ प्रस्थान किया । जहां तत्कालीन पेशवा का प्रतिनिधि विसाजी गोविन्द चान्दोरकर सूबेदार था । सुमेर शाह ने ने अपनी सहायता के लिए उससे सम्पर्क स्थापित किया । तदन्नन्तर विसाजी चान्दोरकर ने नरहरिशाह को सुमेरशाह की आंकाक्षा के संबंध में पत्र लिखा । दरअसल विसाजी को इस मामले की आड़ में धन प्राप्त करने का एक उत्तम स्त्रोत दिखाई पड़ा ।[3]

1॰ स्लीमन, ज॰ए॰सो॰बं॰, 68, 1837, पृ॰64।

2॰ वही

3॰ गढ़ा के गौड़ राज्य, पृ॰16।

विसाजी चान्दोरकर के पत्र से चिंतित होकर नरहरिशाह ने उस के पास अपना प्रतिनिधि भेजकर यह अनुरोध किया कि वह सुमेरशाह की सहायता न करे । यद्यपि विसाजी इसके लिए सहर्ष तैयार हो गया किन्तु इसके बदले में उसने 4 लाख 25 हजार [1] रूपये की मांग की । स्वाभाविक था कि नरहरिशाह की स्थिति इस समय इतनी सम्पन्न नहीं थी अतः उसने रूपयों का भुगतान करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की । [2] फलस्वरूप विसाजी ने पूर्णरूपेण इस अवसर का लाभ उठाने का प्रयत्न किया ।

2. विसाजी गोविन्द चान्दोरकर का आक्रमण :

उल्लेखनीय है कि नरहरिशाह ने अपनी असमर्थता व्यक्त कर विसाजी चान्दोरकर को गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने का अवसर प्रदान किया । इस तरह 1780 ई. में विसाजी चान्दोरकर द्वारा किया गया आक्रमण यद्यपि एक सामान्य घटना लगती है परन्तु मराठों की विगत घटनाओं पर यदि दृष्टिपात की जावे, तो विदित होता है कि यह कोई सामान्य घटना नहीं वरन् भोंसला एवं पेशवा की आपसी प्रतिद्वन्दिता का ही एक अंश एवं अवसर का लाभ उठाने की एक प्रक्रिया है ।

---

1. उपरोक्त, स्लीमैन ने इसे 4 लाख 50 हजार रूपये सुमेरशाह को अग्रिम देने का उल्लेख किया है, देखिए ज.ए.सो.बं., पृ. 641
2. पाठक, ग.द., गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास, पृ. 32,

स्लीमन, ज.ए.सो.बं., पृ. 641

दूसरी तरफ प्रथम मराठा युद्ध में पेशवा को मुधोजी भोंसला की सहायता की आवश्यकता थी जबकि स्वयं मुधोजी भोंसला भी गढ़ा मण्डला को हस्तगत करना चाहता था। अत: मुधोजी को गढ़ा मण्डला का लोभ दिखाकर पेशवा ने उससे समझौता करने का प्रयत्न किया।[1] उसकी शर्त थी कि यदि भोंसला बंगाल में अंग्रेजों को पराजित करने में उसकी मदद करें तो उसे गढ़ा मण्डला प्रान्त दे दिया जायेगा। मुधोजी भोंसला ने इस कार्य के लिए अपने महत्वाकांक्षी पुत्र चिमणा जी बापू[2] को नियुक्त किया। फलस्वरूप 1779 ई.[3] में पेशवा की ओर से चिमणा जी बापू को खण्डेराव की पदवी सहित गढ़ा मण्डला की सनद प्राप्त हुई। तदनुसार नागपुर से 11 अगस्त, 1799 ई. को चिमणा जी बापू अपने 40 हजार सवारों सहित उक्त अभियान पर रवाना हुआ।[4]

चिमणा जी बापू को गढ़ा मण्डला की सनद दिये जाने का समाचार सुनकर विसाजी चान्दोरकर सशंकित हो उठा। उसने चिमणा जी बापू की अनुपस्थिति का लाभ उठाने का प्रयास किया। सौभाग्यवश उसी समय गढ़ा-

---

1. काले, पा.मा., ना.भो.इ., पृ. 140, 168, 69.
2. एक अन्य चिमणा जी, पेशवा बाजीराव का भाई था, जो चिमणा जी अप्पा के नाम से प्रसिद्ध था।
3. डा. अन्धारे के अनुसार यह सनद चिमणा जी बापू 1788 ई. में प्राप्त हुई, देखिए बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा.पृ. 67
4. काले, पा.मा., ना.भो.इ., पृ. 168669

गढ़ा मण्डला राज्य 17..-..

पेशवा के प्रदेश

इटावा
धमोनी
सागर
राहतगढ़
गौरझामर
देवरी
रायसेन
बिलहरी
कटंगी
गढ़ा
नरईं
मण्डला
रामनगर
रामगढ़
रीवा राज्य
गोंड राज्य
उ०
हिरन नदी
नर्मदा नदी
शक्कर नदी
चौरागढ़
फतेहपुर
घुसौर
परताबगढ़
भोंसला का प्रदेश
पेंच नदी
चौरई
बंजर नदी
लखनादौन
वेन गंगा नदी
डोंगरताल
लांजी
बैरागढ़

संकेत

	गढ़ा मण्डला राज्य की सीमा
	पेशवा को दिया गया प्रदेश
	रघुजी भोंसला द्वारा अधिकृत प्रदेश
	निजामशाह के समय से पूर्व भोंसला द्वारा अधिकृत प्रदेश

स्केल
0 50 100 किं०मी०

मण्डला के उत्तराधिकार को लेकर षडयंत्र आरम्भ हो गया । ऐसी स्थिति में सुमेरशाह का आमंत्रण तुरन्त स्वीकार कर उसने नरहरिशाह के विरुद्ध कार्यवाही आरम्भ कर दी ।

इस बीच भौसला और पेशवा के मध्य गढ़ामण्डला का प्रकरण विधिवत फलीभूत होता रहा । नागपुर स्थित सदाशिवराम ने चिमणाजी बापू और मुधोजी भोसला को क्रमशः मण्डला की व्यवस्था एवं सनद प्रदान की ।[1] जिस के फलस्वरूप दिवाकर पंत को 12 हजार । रुपया पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया गया ।[2]

गढ़ा एवं मण्डला पर अधिकार

इधर विसाजी चान्दोरकर ने गढ़ामण्डला पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया, सम्भवतः यह आक्रमण अप्रेल 1780 ई॰ से पूर्व किया गया होगा । जैसा कि अप्रेल 1780 ई॰ में पेशवा को लिखा गया एक पत्र से विदित होता है कि विसाजी गोविन्द चान्दोरकर ने अपने सेनापति मोरोविश्वनाथ डिंग-नकर के साथ गढ़ामण्डला पर आक्रमण किया । तब शायद गढ़ा तक पहुंचने के लिए उसे मार्ग में तेनगढ़ के जमींदार चन्द्रहंस के अतिरिक्त श्रीनगर के शहा-दत खां एवं मानगढ़ के जागीरदार का सामना करना पड़ा था ।[3] किन्तु वे सब विसाजी चान्दोरकर की प्रगति को रोक न सके ।

सर्वप्रथम उसने गढ़ा के किले पर विजय प्राप्त की । तत्पश्चात शीघ्र ही मण्डला का किला घेर लिया । उस समय मण्डला किले में निजाम शाह

---

1. शेजवलकर, ॰नागपुर अफेयर्स, । पत्रक्र॰118, पृ॰125, 26
2. वही, 1, 99, पृ, 105
3. स्लीमन, ॰ज॰ए॰सो॰बं॰, पृ॰642
4. अन्धारे भा॰रा॰, ॰<u>बुन्देलखण्ड, अण्डरदि मराठाज</u>, पृ॰68

की पत्नी एवं गंगागीर [1] थे । विसाजी चान्दोरकर के सैनिकों ने किले में प्रवेश कर नरहरिशाह को बन्दी बना लिया और उसके स्थान पर सुमेर शाह को गढ़ा मण्डला के सिंहासन पर बैठाया गया किन्तु इस सहयोग के बदले में उसने सुमेरशाह से एक समझौता किया, जिसके अनुसार सुमेरशाह ने उसे 20 लाख रुपया देना स्वीकार किया, जिसमें 5 लाख रुपया प्रदेश की कर वसूली से तथा 5 लाख रूपये क्षतिपूर्ति के रूप में । इस तरह 10 लाख रूपये तुरन्त वसूल किये गये तथा 2 लाख रुपयों के बदले में प्राप्त हुए हाथी, घोड़े, ऊंट एवं जवाहरात इत्यादि को शामिल कर लिया गया । शेष 8 लाख के भुगतान के लिए किसी व्यक्ति को जिम्मेदारी सौंपी गयी ।[2]

अन्यत्र हुए एक उल्लेख से विदित होता है कि विसाजी चान्दोरकर ने मण्डला में सिक्के ढलवाने के लिए एक टकसाल खुलवाया था ।[3]

1· शेजवलकर, ·ना·अ·, I, 118, पृ·126

इसके विपरीत स्लीमन लिखते है कि सादत खां और मानगढ़ के जमींदार के साथ गंगागीर ने पाटन के कछार में विसाजी चांदो-रकर को रोकने का प्रयत्न किया, ए·सो·व·, पृ·642·

2· शेजवलकर, ·ना·अ·, I, 118, पृ·126, II, 3, पृ·1

स्लीमन के अनुसार सरकार पर 30 लाख रुपये जुर्माना किया गया तथा इसके लिए एक साख दी गयी, जिसमें से 13 लाख रूपये माल से नकद एवं आभूषणों के रूप में वसूल किया गया, 14 लाख रुपये की किस्त बन्दी हुई तथा 3 लाख रुपये के बदले में नरहरिशाह, पुरुषोत्तम बाज-पेयी एवं गंगागीर का शिष्य शिवगीर गोसाई, [illegible] को बन्धक बना लिया गया साथ ही सिहोरा का परगना पेशवा को नजराना के रूप में प्रदान किया गया, ज·ए·सो·बं·पृ·642

3· <u>गढ़ा के गौंड राज्य</u>, पृ·161

इस प्रकार मण्डला की व्यवस्था कर विसाजी वापस चला गया परन्तु अपनी वापसी से पूर्व शहादत खां एवं गंगागीर को पदच्युत कर उनके स्थान पर दादो महाजनी[1] को मंत्री नियुक्त किया और उसे श्रीनगर की जागीर प्रदान की ।[2] नरहरिशाह को बन्दी बनाकर अपने साथ ले गया ।

3. मुधोजी भोंसला की नाराजी :

गढ़ा मण्डला पर विसाजी चान्दोरकर के आक्रमण एवं हस्तक्षेप का समाचार ज्यों ही मुधोजी भोंसला ने सुना, वह स्तम्भित रह गया । तदनंतर उसने पेशवा से अपना रोष प्रकट किया । विदित है कि भोंसला गढ़ा मण्डला का एक प्रमुख दावेदार था, ऐसी स्थिति में स्वाभाविक है कि विसाजी चान्दोरकर द्वारा गढ़ा मण्डला राज्य पर अनाधिकृत कब्जा किया जाना उसे सहन नहीं होगा । विरोध

---

1. वह विसाजी का भाई था तथा पूरा नाम दादोनारायण महाजनी था ।
2. स्लीमन, ए.सो.बं., पृ. 642
डा. सुरेश मिश्र के अनुसार विसाजी ने सागर वापस होने से पूर्व दादो पंडित के अतिरिक्त लाल शाह नामक एक दूसरा अधिकारी भी नियुक्त किया था । (गढ़ा के गौंड़ राज्य, पृ. 163) यह उचित प्रतीत नहीं होता है । दरअसल नागपुर स्थित पेशवा के दूत सदाशिवराम ने अपने एक पत्र में लालशाह का उल्लेख किया है । परन्तु यह उल्लेख सुमेरशाह के नाम के स्थान पर सम्बोधन स्वरूप प्रयुक्त किया गया है । यहां लालशाह से लेखक का अभिप्राय सुमेरशाह होना चाहिए । (शेजवलकर, ना.व., 11, 3, पृ.1).

स्वरूप उसने तुरन्त अपने दीवान दिवाकर पन्त चोर घोडे द्वारा नाना फडनवीस को पत्र भेजा कि गढ़ा मण्डला की व्यवस्था मुझे दिये जाने के बावजूद भी विसाजी फौज लेकर उस प्रदेश का कर वसूल करने आया, ऐसा क्यों ?[1] इसके साथ ही दिवाकर पन्त ने मण्डला से वसूल की गयी खण्डणी से एक हिस्सा पाने की मांग की । उल्लेखनीय है कि गढ़ा मण्डला राज्य का आधा भाग भोंसला का था, शेष आधे भाग के लिए पेशवा ने उसे सनद प्रदान की थी ।[2] प्रत्युत्तर में मुधोजी भोंसला को पेशवा ने सूचित किया कि विसाजी के पास पत्र लेकर हमारा आदमी जा रहा है । इसमें संभव नहीं कि अब विसाजी मण्डला छोड़कर चले जावेंगे ।[3] किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मुधोजी भोंसला को इस पत्र पर विश्वास नहीं हुआ क्योंकि इसके बाद भी विसाजी चान्दोरकर मण्डला में टिका रहा । अत: मुधोजी ने सदाशिवराज से अपना संशय व्यक्त किया कि कहीं ऐसा तो नहीं कि पेशवा एक तरफ हमें आश्वासन दे रहे है और दूसरी तरफ विसाजी को अपना कार्य पूर्ण करने का प्रोत्साहन दे रहे हों, अत: स्पष्ट पता करो कि तत्यता क्या है ?[4]

एक अन्य पत्र[5] से ऐसा ज्ञात होता है कि भोंसला, सदाशिवराम से बार बार अपने संशय का स्पष्टीकरण मांगता रहा । अत: पेशवा का उत्तर आने से पूर्व स्वयं सदाशिवराम ने उत्तर दिया कि " सरकार की ओर से आपको व्यवस्था का अधिकार प्राप्त है, उसमें परिवर्तन करने की ऐसा आज्ञा विसाजी गोविन्द को नहीं है । शायद आपको व्यवस्था दिये जाने के संबंध में विसाजी

---

1. शेजवलकर, ना.अ., 1, 118, पृ. 125-26
2. केलेण्डर आफ पर्शियन कारेस्पान्डेन्स, वी, 1908, पृ. 455, शेजवलकर, ना.अ., 1, 204, पृ. 229-30
3. शेजवलकर, ना.अ., 11, 3, पृ.1 तथा 1, 204, पृ. 229-30
4. वही, 1, 118, पृ. 126
5. 15 मई, 1780 ई. का पत्र, वही, 11, 3, पृ. 1.

की जानकारी नहीं होगी । दरअसल पहले के अधिकारी ने विसाजी के अधीन महाल को हानि पहुंचाई थी । इसलिए विसाजी ने उसके विरूद्ध कार्यवाही की होगी । आपको सनद सहित अधिकार प्राप्त होगा । आप निष्ठापूर्वक सरकार की सेवा करते हैं,इसलिए सरकार की ओर से अनावश्यक परिवर्तन नहीं होगा ।" इसके साथ ही सदाशिवराम ने पेशवा से यह अनुरोध किया कि वह क्रमश: विसाजी,मुधोजी और दिवाकरपन्त तथा चिमणाजी बापू को अलग अलग तीन पत्र लिख भेजें ।[1]

नि:सन्देह मुधोजी भोसला अब तक सन्तुष्ट नहीं हुआ था । उसी समय पेशवा का उत्तर सदाशिवराम को प्राप्त हुआ । जिसमें लिखा था कि मंडला की व्यवस्था सेना बहादुर को दी गयी है । उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए किन्तु लगभग 2 वर्षों से मण्डला के राजा और विसाजी गोविन्द में मनमुटाव चल रहा है इसलिए विसाजी ने वहां का बन्दोबस्त किया । इसके लिए किसी प्रकार का सन्देह नहीं करना चाहिए ।[2]

सदाशिवराम ने पेशवा के पत्र से भोसला के दीवान दिवाकर पंत को अवगत कराया तथापि दिवाकरपंत का कहना था कि पेशवा के पत्र का विसाजी पंत द्वारा उल्लंघन किया जाना वास्तव में समझ से परे है,उसेने मल्हारराव बोरपे[3] से स्पष्टीकरण मांगने के साथ ही मण्डला से आये एक गृहस्थ का हवाला देते हुए कहा कि मण्डला से 22 लाख[4] रूपयों का कर लिया गया है । जिसमें से 13 लाख रूपये पहले वसूल हो गये हैं,शेष 9 लाख रूपये लेकर विसाजी सागर जाने वाला है" । अत: दिवाकर पन्त ने विसाजी

---

1. वहीं
2. शेजवलकर, ना॰अ॰, 1, 204पृ॰229
3. गढ़ा के गौड़ राज्य,पृ॰166,नागपुर में स्थित पेशवा का संवाददाता
4. यह 20 लाख रूपया होना चाहिए,जैसा कि सुमेरशाह का विसाजी से हुई संधि का उल्लेख किया जा चुका है ।

द्वारा मण्डला से वसूल की गयी खण्डगी में से आधा हिस्सा दिलाये जाने की मांग की[1] जैसा कि पहले ही लिखा जा चुका है ।

4· भोंसला की अंग्रेजों से संधि :-

उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त कार्यवाही के बावजूद भी मुधोजी भोंसला गढ़ामण्डला के संदर्भ में सन्तुष्ट नहीं हुआ । फलस्वरूप उसका झुकाव अंग्रेजों की ओर बढ़ने लगा । तथापित इसके लिए केवल भोंसला को ही दोषी नहीं कहा जा सकता है । दरअसल तत्कालीन परिस्थितियां ही ऐसी निर्मित हो चुकी थी । एक तरफ विसाजी चान्दोरकर का गढ़ा मण्डला में हस्तक्षेप तथा दूसरी तरफ पेशवा द्वारा गढ़ामण्डला का वास्तविक अधिकार सौंपने में विलम्ब किया जाना मुधोजी भोंसला की अभिलाषाओं पर तुषारापात सा था ।

सम्भवतः इस विलम्ब का कारण पेशवा, भोंसला को बंगाल के अभियान के लिए उत्तरदायी मानता था, किन्तु बंगाल अभियान में मुधोजी भोंसला की तटस्थता का प्रमुख कारण विसाजी की अनाधिकृत अतिक्रमण की कार्यवाही तथा इस अभियान के लिए भेजी गयी सेना के लिए पेशवा द्वारा समुचित धन न दिया जाना भी था ।[2] स्वाभाविक था कि ऐसी स्थिति में मुधोजी भोंसला अन्यत्र अपनी प्रतिष्ठा बनाने का प्रयत्न करता । इसी बीच राजाराम पंडित[3] ने अंग्रेजों से संधि वार्ता आरंभ की । उस समय स्वयं वारेन हेस्टिंग्स भी भोंसला से मित्रता का आंकाक्षी था ।

1· सी·पी·सी·, 5, 1908, पृ·455, शेजवलकर, ना·अ·1, 204 पृ·229-30

2· गढ़ा के गोंड राजा, पृ·166

3· भोंसला का प्रतिनिधि एवं कटक का सूबेदार

वह यह भलीभांति जानता था कि हैदर अली और फ्रांसिसियों से युद्ध के लिए अंग्रेजी सेना को उड़ीसा में से होकर जाना पड़ेगा जो कि भोसला के अधीन है और मुधोजी भोसला इसके लिए कदापि अनुमति नहीं देगा । क्योंकि बंगाल और बिहार की 12 लाख रूपयों की सरदेशमुखी व चौथ अंग्रेजों ने उसे नहीं दी थी । अत: वारेन हेस्टिंग्स किसी भी प्रकार से उससे मित्रता करना चाहता था ।[1]

वस्तुत: राजाराम पंडित के प्रस्ताव का अंग्रेजों ने सहर्ष स्वागत किया जिसके परिणाम स्वरूप 6 अप्रेल 1781 ई॰ को मुधोजी भोसला एवं अंग्रेजों के मध्य एक संधिपत्र पर हस्ताक्षर हुए, जिसके अनुसार यह तय हुआ [2] कि

1· 13 लाख रूपये सेना बहादुर की सहायता के लिए अंग्रेजों के द्वारा तुरन्त भेजे जाए ।

2· सेना बहादुर शीघ्र ही उड़ीसा छोड़कर गढ़ामण्डला पर आक्रमण करने के लिए रवाना हो जाए और उत्तर भारत में स्थित अंग्रेज अधिकारी एक सेना लेकर गढ़ामण्डला पर अधिकार करने में सेना बहादुर की सहायता करें ।

1· भोसला का प्रतिनिधि एवं कटक का सूबेदार

1· सरकार, ·पी·आर·सी·, 5, पृ·3

2· सं·फोरस्टर, ·वारेन हेस्टिंग्स सिलेक्शन्स फ्राम दि स्टेट पेपर्स आफ दि गवर्नर्स जनरल आफ इंडिया, 2, पृ·253-54, एचिसन ई·यू·, ·ए कोलेक्शन्स आफ ट्रीटीज, एंगेजमेंट एंड सनदस, 1, 157, पृ·414 विल्स सी यू·, ·ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ·78 पर 6 मार्च लिखा हुआ है जो कि मुद्रण त्रुटि है, काले या·भा·, ·ना·भो·इ·पृ·182

3· अंग्रेज गढ़ा मण्डला की विजय के फलस्वरूप वहां से 10 या 15 लाख रूपये प्राप्त करने में मराठों की सहायता करेंगे ।

4· सेना बहादुर के दो हजार घुड़सवार हैदर अली के विरूद्ध तथा कर्नल पियर्स की सहायता के लिए जायेंगे ।

इस संधि के फलस्वरूप मुधोजी भोसला गढ़ामण्डला प्राप्त करने में अपनी विजय सुनिश्चित समझने लगा परन्तु फिर भी भोसला गढ़ा मण्डला को प्राप्त न कर सका और पेशवा से उसका मतभेद उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया ।

5· <u>सुमेरशाह का विद्रोह और दमन</u>

गढ़ा मण्डला को लेकर एक तरफ जहां नागपुर और पूना वैधानिक रणनीति का केन्द्र बना हुआ था और कार्यप्रणाली शनै-शनै: विकास के पथ पर अग्रसर थी वहीं दूसरी तरफ विसाजी चान्दोरकर स्वयं गढ़ा मण्डला की भूमि पर उपस्थित होकर सत्ता रूपी व्यूह की बाने बुन रहा था ।

यद्यपि लगभग अप्रैल 1780 ई· में विसाजी चान्दोरकर की सहायता से सुमेरशाह सिंहासनारूढ़ हुआ तथापि जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि नरहरिशाह, विलास कुंवर की सहायता से सत्तारूढ़ हुआ था । अत: विलास-कुंवर की से वह पूर्णरूपेण प्रभावित था । विलासकुंवर की आयु इस समय लगभग 56 वर्ष थी, फिर भी वह एक अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी कूटनीतिज्ञ एवं सत्ता की राजनीति में अत्यन्त सक्रिय महिला थी । जिसने लगभग 31 वर्षों तक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से गढ़ामण्डला के इतिहास को प्रभावित किया ।

दूसरा गंगागीर गोसाई था जो नरहरिशाह के शासन काल में सर्वाधिक प्रमुख व्यक्ति समझा जाता था । जिसने गढ़ामण्डला के गोंड राज्य के

1· <u>गढ़ा के गोंड राज्य</u>, पृ· 163

अंतिम दिनों में सक्रिय भूमिका निभाई थी । सम्भवत: गंगागीर गोसाई को भी बन्दी बना लिया गया था । हम आगे देखेंगे कि नरहरिशाह के साथ गंगागीर को भी कैद से मुक्त किये जाने का उल्लेख मिलता है ।

सुमेरशाह के समय में गंगागीर गोसाई शहादत खां सहित प्रभावहीन हो गया था । सत्तारूढ होने के उपरान्त सुमेरशाह विलासकुंवर की ओर से सर्वाधिक सशंकित था शायद इस भय से कि कहीं पुन: वह मराठों की सहायता से जो सिहांसनच्युत करने का प्रयत्न न करें । ऐसा होना भी स्वाभाविक था अत: सुमेरशाह ने अपने एक गुप्तचर की सहायता से उसकी हत्या करवा दी ।[1] विलासकुंवर की हत्या के साथ ही एक ऐसे व्यक्तित्व का अन्त हो गया जिस ने 1749 ई॰ से गौंड राजवंश के इतिहास में सक्रिय भूमिका निभाई थी । दुर्जनशाह और नरहरिशाह के समय में वह प्रमुख सूत्रधार थी ।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि विसाजी की गुलामी अधिक दिनों तक सुमेरशाह को रास न आयी । वह अपने कठपुतलीपन से मुक्ति पाना चाहने लगा था क्योंकि वह एक नाममात्र का शासक था तथा सत्ता विसाजी चान्दोरकर के हाथ में थी साथ ही विसाजी संधि के अनुसार शेष राशि वसूलने के लिए पूरे राज्य में अनेक स्थानों पर अपनी चौकिया स्थापित कर चुका था ।[3] जिसका प्रतिरोध करने में सुमेरशाह असमर्थ था । वस्तुत: विभिन्न जमींदारों के साथ मिलकर उसने प्रतिरोध करने की योजना बनाई और विद्रोहस्वरूप अपने प्रमुख जमींदारों के साथ सेना सहित मानगढ में जा डटा[4] इसमें शहादतखां और

1· स्लीमन, ·ज·ए·सो·बं·, पृ·642

2· गढा के गौड राज्य, पृ·164

3· शेजवलकर, ·ना·अ·, 1, 204, पृ·229-30

4· स्लीमन, ·ज·ए·सो·बं·, पृ·642

चन्द्रहंस उसके प्रमुख सहयोगी थे ।

एक उल्लेख यह भी प्राप्त होता है कि सुमेरशाह को अपनी भाभियों (नरहरिशाह की पत्नियां) से विद्रोह के लिए पत्र प्राप्त हुआ था जिसमें उन्होंने नरहरिशाह की रक्षा तथा यथासंभव विसाजी के विरुद्ध उचित कार्यवाही करने का अनुरोध किया था ।[1]

संभवतः विसाजी को इसका आभास था । अतः वह पहले से ही प्रतिरोध की तैयारी कर चुका था । युद्ध प्रारम्भ होते ही जागीरदार चन्द्रहंस भाग गया । शहादत खां की सेना में भगदड़ मच गयी और वह चौरागढ़ की ओर भाग गया । स्वयं सुमेरशाह पराजित होकर वापस मण्डला भाग गया । विसाजी चान्दोरकर आगे बढ़ कर गढ़ा पहुंचा जहां उसने सुमेरशाह को बुलवाया और तिलवारा में उसे धोखा देकर बन्दी बना लिया जहां से उसे जटाशंकर के किले[2] में भेज दिया गया । इस तरह सुमेरशाह कुल लगभग ढाई वर्ष ही शासन करसका ।

---

1. गढ़ा के गौंड राज्य, परिशिष्ट दो, प.क्र.1, पृ.207, सुमेरशाह को लिखा गया 1780 ई. का पत्र.
   स्लीमन के अनुसार विसाजी ने विलास कुंवर की हत्या के लिए सुमेरशाह को जिम्मेदार ठहराया और उसे सिहांसन से अलग करने एवं बदला लेने की तैयारी करने लगा, ज.ए.सो.बं., पृ.642
2. स्लीमन, ज.ए.सो.बं. पृ. 642 , के अनुसार वह गौरी झामर के किले में कैद हुआ

तदोपरान्त गढ़ा मण्डला के सिंहासन पर विसाजी ने पिछली शेष राशि चुकाने के शर्त के साथ पुनः नरहरिशाह को बैठाया तथा गंगागीर गोसाई को नरहरिशाह के साथ मुक्त कर क्षतिपूर्ति के भुगतान के लिए उत्तरदायी बनाया साथ ही मोरोजी विश्वनाथ[1] को किले की निगरानी करने के लिए नियुक्त किया ।

इस प्रकार एक बार पुनः मण्डला के किले की व्यवस्था करके विसाजी वापस गढ़ा लौट गया ।[2]

6. <u>नरहरिशाह का षड़यंत्र एवं विसाजी चान्दोरकर की</u> मृत्यु :-

यद्यपि सुमेरशाह को कैद करके विसाजी ने नरहरिशाह को सिंहासन प्रदान किया और उसके साथ ही गंगागीर गोसाई को भी मुक्त कर उसे क्षति-पूर्ति के भुगतान हेतु उत्तरदायी बनाया गया किन्तु किले की व्यवस्था और निग-रानी के लिए मोरोजी को नियुक्त किया जाना इस बात का द्योतक है कि कि वास्तविक सत्ता मराठों ने अपने हाथ में ले ली थी । यह बात और थी कि प्रत्यक्ष रूप में नरहरिशाह वहां का शासक था किन्तु वह भी सुमेरशाह की तरह मात्र कठपुतली मात्र रह गया था ।जिसे मराठे अपनी अंगुली की डोर से नचाना जानते थे ।

सम्भवतः नरहरिशाह भी इस अपमान जनक जीवन को सहन न कर सका और गंगागीर गोसाई के प्रोत्साहन एवं सहयोग से मराठों से मुक्त होने की योजना बनाने लगा । जिसके लिए जो भगवंतगीर,सहादतखां,लक्ष्मण सिंह पासवान इस और अजीत सिंह लोधी का सहयोग प्राप्त हुआ ।[3] संयोगवश इस समय विसाजी की सेना खेर बन्धुओं [4] की सहायता के लिए काल्पी जा चुकी थी । स्वयं विसाजी

---

1. पूरा नाम मोरो विश्वनाथ डिंगनकर था तथा पहले वह पाटन का कमाविशदार एवं बाद में गढ़ा का सूबेदार नियुक्त हुआ ।
2. <u>गढ़ा के गौड़ राज्य</u>,पृ. 164
3. पेशवलकर,ना.अ.,1,175 एवं 196,पृ.186 एवं 210
4. बालाजी गोविन्द एवं गंगाधर गोविन्द खेर,इन्हें अंग्रेजों के विरुद्ध

चान्दोरकर दादो नारायण के साथ गढ़ा में था तथा एक अन्य सेना बापू नारायण देसाई के नेतृत्व में नर्मदा के उत्तरीप्रदेश की व्यवस्था करने में व्यस्त थी ।[1] अतः अवसर का लाभ उठाकर नरहरिशाह ने अगस्त 1782 ई॰ में विद्रोह कर दिया और लगभग 5000 गौंड सैनिकों के साथ चल पड़ा ।[2]

शायद विसाजी को नरहरिशाह और गंगागीर महन्त के विद्रोह की आशंका नहीं रही होगी और इसी असावधानी ने उसे मृत्यु के गर्त में धकेल दिया । 23 अगस्त 1782 ई॰ को गंगागीर गोसाई की सेना ने अचानक विसाजी चान्दोरकर पर आक्रमण कर दिया । इस समय विसाजी का भाई दादोनारायण भी उसके साथ था यद्यपि विसाजी ने सेना की एक छोटी टुकड़ी के साथ प्रतिरोध करने का प्रयास किया, परन्तु अधिक समय तक सफल न हो सका और अपने भाई दादो नारायण के साथ मारा गया । उसके लगभग चार सौ सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया गया । सम्भवतः कुछ घुड़सवार भी मारे गये तथा कुछ जान बचाकर भाग खड़े हुए ।[3]

ऐसा प्रतीत होता है कि इस युद्ध में विसाजी के पक्ष का एक भी पैदल सैनिक जीवित नहीं बचा किन्तु इसमें नरहरिशाह या गंगागीर गोसाई को कितनी हानि हुई, इसका विवरण प्राप्त नहीं हुआ है । तदोपरान्त गंगागीर गोसाई ने विसाजी सहित तीन[4] व्यक्तियों का शव (सिर व धड़ के रूप में) अपने शिविर में लाकर भगवंतगीर को सौंप दिया ।

1• स्लीमन, •ज•ए•सो•बं•पृ•643
अन्धारे भा•रा•, •संशोधन शिपंले, पृ•50

2• डा• सुरेश मिश्र ने नवम्बर 1782 ई• और 7000 सैनिकों का उल्लेख किया है (गढ़ा के गौंड राज्य, पृ• 168) इसके विपरीत स्लीमन ने केवल 500 गोसाई घुड़सवारों का उल्लेख किया है, ज•ए•सो•बं•पृ•643

3• शेजवलकर, ना•अ•1, 196, पृ•210 अन्धारे भा•रा•, ;संशोधन शिपंले पृ•50
स्लीमन, ज•ए•सो•बं•पृ•643

4• डा• अन्धारे ने केवल दो ही शव का उल्लेख किया है, संशोधन शिपंले, पृ•50

उल्लेखनीय है कि गंगागीर गोसाई द्वारा लाये गये तीन शवों में से दो शव क्रमशः विसाजी चान्दोरकर एवं दादोनारायण के थे, जिसकी पुष्टि मल्हारजी वोरपे ने की जो स्वयं उस समय गंगागीर के शिविर में उपस्थित था ।[1] परन्तु तीसरा शव किसका था ? यह स्पष्ट नहीं हो पाया ।

निःसन्देह इस युद्ध में मराठों को भारी नुक्सान उठाना पड़ा, साथ ही विसाजी की मृत्यु से मराठे नेतृत्वहीन हो गये । विसाजी[2] एवं दादो नारायण के शवों को गंगागीर गोसाई ने अग्नि देने से भी मना कर दिया था परन्तु बाद में एक ही चिता पर दोनों का दाहसंस्कार कर दिया गया ।[3]उसी समय गढ़ा में

1· शेजवलकर, ना·अ·, 1, 196, पृ·210

2· विसाजी चान्दोरकर की कोई संतान नहीं थी, उसकी पत्नी भगीरथी बाई ने अपने चचेरे देवर गणेश विट्ठल चान्दोरकर के द्वितीय पुत्र रंगनाथ उर्फ गोविन्द बाबू राव को गोद लिया था किन्तु गणेश बिट्ठल काशी में रहता था अतः रंगनाथ का छोटा भाई विनायक राव चान्दोरकर सागर का अंतिम सूबेदार हुआ {संशोधन शिंदे, पृ·51} संभवतः बाद में रंगनाथ ने विनायक राव को अपना उत्तराधिकारी बना दिया था । जिसकी मृत्यु 1826 ई· में हुई 1818 ई में सागर, दमोह क्षेत्र पर अंग्रेजों का अधिकार होने पर उसे 46 हजार रूपये पेंशन दिया जाने लगा । इसी समय रघुनाथ राव की विधवा राधा बाई रूक्माबाई नामक दो विधवाओं को भी ढाई लाख रूपये पेंशन मिलने का उल्लेख प्राप्त होता है । {गढ़ा के गौड़ राज्य पृ·177} पट·लि·63 वि·सं·मं·वार्षिकी, 1964, पृ·26·

3· शेजवलकर, ना·अ·, 1, 196, पृ·210

गंगागीर गोसाई ने एक सार्वजनिक चेतावनी घोषित कीथा " जो लोग मराठों को मदद या आश्रय देगें वे अपराधी माने जायेंगे और उन्हें सजा दी जावेगी ।[1]

संभवत: इस सम्पूर्ण कार्यवाही में मल्लाजी बोरपे भेष बदलकर गंगागीर के पास रहा जिसे अन्त तक वह पहचान न सका और जब वह भगवा वस्त्र में वहां से जाने लगा तो गंगागीर ने उसके साथ अपना एक शिष्य भी भेजा जो उसे नर्मदा पार करवा सके ताकि कोई उसका वध न करें ।[2]

विसाजी चान्दोरकर और उसकी मृत्यु के बाद नरहरिशाह और उसके सहयोगियों का मनोबल बढ़ना स्वाभाविक ही था ।

<u>मोरोजी विश्वनाथ की वापसी</u> :-

जिस समय गढ़ा में उक्त घटनाएं घट रही थी उस समय मोरोजी विश्वनाथ मण्डला में विद्यमान था । अत: कवर्धा के जमींदार महाबली सिंह[3] ने मोरोजी को घेर लिया । इसके अतिरिक्त अन्य सरदारों ने भी मण्डला पहुंचकर उसकी रसद रोक दी । अन्त में विवश होकर मोरोजी ने सागर जाने के लिए अनुमति देने का अनुरोध किया । नरहरिशाह के समर्थकों ने अपनी स्थिति सुदृढ़ समझ कर उसे अनुमति प्रदान कर दी । फलस्वरूप मोरोजी सागर चला गया । दूसरी तरफ सिवनी छपारा के जमींदार मुहम्मद अमीन खां ने भी मराठों के विरुद्ध शस्त्र उठाकर विद्रोह कर दिया । फलस्वरूप बपई और श्रीनगर की मराठा चौकियों को उठाकर सिंहपुर ले जाया गया ।[4] इसके साथ ही लगभग प्रत्येक प्रमुख स्थानों पर मराठा सत्ता को चुनौती दी जाने लगी ।

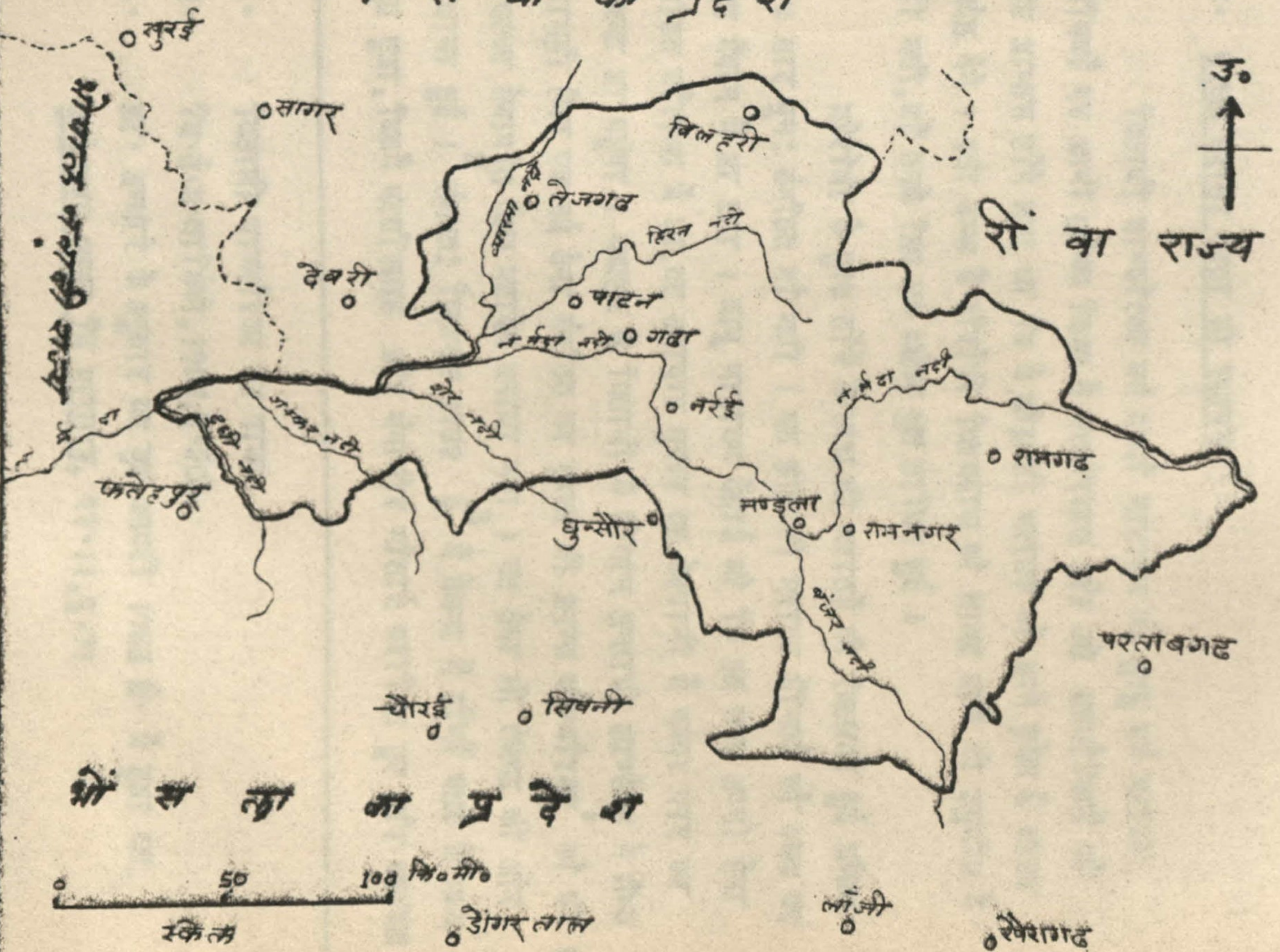
1• अन्धारे भा•रा•, बुन्देलखंड अण्डर दी मराठाज, पा•11, पृ•69

2• शेजवलकर, ना•अ•1, 196, पृ•210

3• यह महाबली सिंह पंडरिया के जमींदार का वंशज था, जिसे रघुजी भोसला प्रथम ने एक सैनिक सहायता के फलस्वरूप कवर्धा का प्रदेश जागीर में दिया था ।

4• स्लीमन,, ज•ए•सो•बं•, पृ•643

शेजवलकर, ना•अ•1, 196, पृ•210


गढ़ा मण्डला राज्य 1780 ई०
पेशवा का प्रदेश
शींवा राज्य
उ०
भोंसला का प्रदेश
भोपाल नवाबी राज्य
सुरई
सागर
देवरी
बिलहरी
तेजगढ़
हिरन नदी
पाटन
गढ़ा
नर्मदा नदी
नरई
रामगढ़
मण्डला
रामनगर
धुन्सौर
फतेहपुर
परताबगढ़
चौरई
सिवनी
डोंगरताल
लाँजी
रैरागढ़
0
50
100 कि० मी०
स्केल

इस तरह विसाजी की मृत्यु के साथ गढा मण्डला के इतिहास में एक ऐसे चरित्र का अन्त हो गया, जिसने वहां मराठा साम्राज्य की वास्तविक नींव रखी थी ।

7· प्रत्यक्ष मराठा सत्ता की स्थापना :-

विसाजी चान्दोरकर एवं दादो नारायण की मृत्यु एवं मराठा सैनिकों पर अपनी क्षणिक विजय से नरहरिशाह और उसे सहयोगियों को यह आभास होने लगा था कि वे शीघ्र ही मराठों को अपने प्रदेश से बाहर खदेड देंगे । इसी दम्भ में मोरोजी विश्वनाथ को सागर जाने की अनुमति दे दी गयी, जो उनके लिए एक भयंकर भूल साबित हुई ।

मोरोजी के मुक्त होने के साथ ही मराठों की बिखरती हुई शक्ति एक बार पुनः संगठित हो गयी । यह शीघ्र ही मराठा सैनिकों को एकत्र कर युद्ध मैदान में आ डटा । बापू नारायण देसाई जो कि इस समय अपनी सेना सहित चौरागढ में था, यह समाचार सुनकर वह केरपानी में नर्मदा पार कर तेजगढ आ पहुंचा । जबलपुर से विसाजी के दीवान अन्ताजी खाण्डेकर ने सैन्य सामग्री लेकर एक नई सेना संगठित कर कृष्णा जी अनन्त चान्दोरकर[1] को दी । जिसका सेनापति केशव महादेव बनाया गया । यह सेना भी तेजगढ की ओर रवाना हुई ।[2] संभवतः दिसम्बर 1782 ई[3] में तेजगढ में दोनों पक्षों के मध्य युद्ध हुआ, जिसमें नरहरिशाह और गंगागीर गोसाई पराजित हुए और शहादत

1· विसाजी चान्दोरकर का काका

2· वि·सं·म·वार्षिकी, 1982, पृ·203

3· डा· अन्धारे के अनुसार यह युद्ध जनवरी 1783 ई· में हुआ था, <u>बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज</u>, पा·11, पृ·71

खां मारा गया ।[1] यह स्थानीय सेना के लिए एक अपूर्णीय क्षति थी । नगरहीर-शाह और गंगागीर ने भाग कर तेजगढ़ के दुर्ग में शरण ली किन्तु बापू नारायण और केशव पंत[2] ने उनका पीछा कर उसे घेर लिया । यह घेरा लगभग 12 दिनों तक पड़ा रहा । इसी बीच किसी गुप्त मार्ग से एक रात्रि में गंगागीर गोसाईं वहां से भागने में सफल हो गये।[3] इस पलायन में उसके साथ नरहरिशाह, लक्ष्मण-सिंह पासवान एवं कुछ अन्य साथी भी थे । उसके भागने का समाचार मराठा सेना में जंगल की आग की तरह फैल गयी । अत: तुरन्त पलायनकारियों का पीछा किया गया किन्तु तब तक गंगागीर गोसाईं अत्यधिक दूर जा चुका था ।

उल्लेखनीय है कि मार्ग में मराठों को शहादत खां के भाई करामत खां या कुरमत खां की सेना का सामना करना पड़ा, लगभग चार घंटे के घमासान युद्ध के बाद करामत खां पराजित हुआ किन्तु इस युद्ध में अनेक सैनिक मारे गये ।

दूसरी तरफ मराठा सेना के उलझ जाने का पूर्ण लाभ गंगागीर गोसाईं और उसके साथियों ने उठाया जिसे जिस तरफ मार्ग मिला वह उसी तरफ भाग निकला । ऐसा प्र तीत होता है कि उनका यह उद्देश्य मराठा सैनिक शक्ति धार को विभाजित करना रहा होगा । गंगागीर गोसाईं नर्मदा पार कर छपारा के निकट लखनादौन में ठहरा किन्तु शीघ्र ही सिवनी के लोगों से मराठों को यह सूचना प्राप्त हो गयी । अत: गंगागीर वहां से रेवामुकुन्दपुर (रीवा) की ओर चला गया तथा नरहरिशाह और लक्ष्मणसिंह पासवान अपनी कुमुक सहित चौरा-गढ़ चले गये जहां वे पुन: मराठों का सामना करने की तैयारी में संलग्न हो गये ।

---

1. शेजवलकर, ना॰अ॰, I, 175, पृ॰186
2. यह विसाजी चान्दोरकर के खानदान का होना चाहिए, इसका पूरा नाम केशव नारायण महादेव चान्दोरकर था ।
3. शेजवलकर, ना॰अ॰175, पृ॰; 186

इसी अभियान के एक अन्य परिक्षेत्र में बापू नारायण एवं केशवपन्त ने तेजगढ़ के जमींदार अजीत सिंह लोधी से एक संधि कर गढ़ा की ओर प्रस्थान किया । इस संधि के अनुसार अजीत सिंह लोधी को तेजगढ़ का प्रदेश वापस कर दिया गया तथा टप्पा, पितेहरा, मुहारतडा एवं केसली उसे प्रदान किये गये ।[1,2] इसी मार्ग में मोरो विश्वनाथ भी अपनी सेना सहित आकर उनसे मिल गया । इनकी सम्मिलित सेना ने स्थानीय गौंड राणा की सेना को पराजित कर दिया । तत्पश्चात मोरो विश्वनाथ स्वयं मण्डला की व्यवस्था करने चला गया और पुन: राहतगढ़ के पठान के साथ वापस गढ़ा लौट गया ।

इसी संदर्भ में प्राप्त उल्लेखों से विदित होता है कि काल्पी स्थित बालाजी गोविन्द खेर ने भी शिवाजी की मृत्यु का समाचार पाकर अपने पुत्र रघुनाथ राव उर्फ आबा साहब के सेनापतित्व में मराठों की सहायता के लिए एक सेना भेजी ।[3] इसके साथ ही सागर सूबा का प्रबंध करने में आबा साहब के सहयोग के लिए लक्ष्मी नारायण भट्ट, राम चन्द्र कृष्ण एवं लक्ष्मण कृष्ण लघाटे, वासुदेव गणेश वारूणकर, प्रभु चिटनीश, केशव शिवाजी इत्यादि भी साथ आये ।[4] जहां से रघुनाथ बल्लाल ने अपनी शक्ति गोंडों के विरुद्ध लगाई ।

---

1. शेजवलकर, ·, ना·अ·, 1, 175, पृ, 186, अंधारे भा·रा·
   बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा·11, पृ·72, गढ़ा के गौंड राज्य पृ·170
2. उक्त स्थान रहली के निकटस्थ सागर जिले में स्थित है ।
3. चन्द्रचूण रिकार्ड, 41, पृ·46
   शेजवलकर; ना·अ·पा·11, 392, पृ·219
4. गोविन्द पन्त बुन्देलांची कैफियत, पृ·24

विल्हेरी उस समय नागू गोसाई[1] की व्यवस्था में थी । जहां वह एक सैनिक टुकड़ी के साथ रहता था । उसने अपने कुछ सैनिकों एवं समर्थकों के साथ मराठा सैनिकों को घेर लिया । स्वयं गंगागीर गोसाई भी आकर उनसे मिल गया । 15 दिन वहां रहकर वह सेना एवं पैसा लाने के लिए पुनः रेवामुकुन्दपुर {रीवा} चला गया । इधर मोरोविश्वनाथ एवं केशवपंत की संयुक्त सेना का सामना गंगागीर गोसाई के शिष्यों ने किया । संभवतः चार घड़ी तक घमासान युद्ध हुआ, जिसमें लगभग दो तीन सौ लोग मारे गये । इस युद्ध में गंगागीर गोसाई का एक शिष्य भी मारा गया । अन्त में गोसाई के सैनिक पराजित होकर चौरा-गढ़ की ओर भाग गये । विल्हेटी पर मोरो विश्वनाथ का अधिकार हो गया समझा जाता है कि विल्हेटी का का जागीरदार पद्मसिंह मराठों से मिल गया था ।[2]

शेजवलकर एवं स्लीमेन के वृतान्तों से यह विदित होता है कि इस युद्ध में स्वयं गंगागीर गोसाई ने भी भाग लिया था जबकि पहले ही लिखा जा चुका है कि गंगागीर गोसाई सेना एवं पैसा लाने के लिए रेवामुकुन्दपुर गया था । ऐसी स्थिति में वह कब विल्हेटी वापस आकर सेना में संलग्न हुआ । इसका उल्लेख कहीं प्राप्त नहीं होता है । वस्तुतः विल्हेटी के युद्ध का निर्णय मराठों के पक्ष में है जिसके फलस्वरूप चौरागढ़ को छोड़कर लगभग सम्पूर्ण गढ़ामण्डला प्रदेश पर सागर के मराठों का अधिकार स्थापित हो गया ।

---

1. गंगागीर गोसाई का शिष्य

2. स्लीमेन ज॰ए॰सो॰बं॰, पृ॰644

3. शेजवलकर, ॰ना॰अ॰, म, 175, पृ॰186

4. स्लीमेन, ॰ज॰ए॰सो॰व॰पृ॰644

गंगागीर गोसाई अपनी सेना सहित चौरागढ़ पहुंचा, जहां नरहरिशाह, लक्ष्मणसिंह पासवान और देवगीर गोसाई[1] पहले से ही थे, शीघ्र ही रघुनाथ राव बल्लाल ने सागर से अंताणीराम खाण्डेकर को नरहरिशाह और गंगागीर का दमन करने के लिए चौरागढ़ भेजा। लगभग चार हजार सैनिकों की सेना लेकर वह फरवरी 1783 ई॰ में चौरागढ़ पहुंचा[2] सम्भवत: विद्रोहियों के उपद्रव को देखते हुए स्वयं रघुनाथराव बल्लाल ने भी चौरागढ़ पर आक्रमण किया किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई।

इस बीच गंगागीर गोसाई ने छपारा के जमींदार अमीनखां को मुधोजी भोसले के पास भेजकर यह आग्रह किया कि वह मोरोविश्वनाथ की मदद न करें जिसके लिए वह उसे {भोसले को} कुछ धन देने के लिए तैयार था किन्तु उसे[3] अपने उद्देश्य में सफलता न मिल सकी।

इधर चौरागढ़ और उसके आसपास के परिक्षेत्र पर गौड़ों का उपद्रव चालू था अत: स्वयं मोरोविश्वनाथ ने वहां जाकर विद्रोहियों का दमन कर चौरागढ़ किले को घेर लिया। यद्यपि यह किला अभेद्य समझा जाता था तथापि मोरोपंत विश्वनाथ ने मई जून 1784 ई॰ में बापूनारायण देसाई केशवपंत एवं अन्य प्रमुख सरदारों के सहयोग से किले पर अधिकार कर लिया।[4] नरहरिशाह, गंगागीर गोसाई एवं लक्ष्मण सिंह पासवान को गिरफ्तार कर मण्डला लाया गया जहां से नरहरिशाह को बन्दी के रूप में कुरई के किले में भेज दिया गया। सम्भवत: उसके साथ उसके परिवार के सदस्य भी थे, वहीं पर 1789 ई॰ में नरहरिशाह की मृत्यु हो गयी।

---

1. यह गंगागीर गोसाई का पुत्र था
2. खरेजवलकर, ना॰अ॰, I, 177 पृ॰188-89, II, 219, पृ॰115
   222, पृ॰116 एवं 393, पृ॰219
3. उपरोक्त, I, 177, पृ॰188-89
4. खरेजवलकर, ना॰अ॰, II, 244, पृ॰134, 62, पृ॰31, एवं 252, पृ॰140

दूसरी तरफ गंगागीर गोसाई जो इस सम्पूर्ण कार्यवाही का सर्वाधिक सक्रिय व्यक्ति था उसने सम्भवतः हाथी के पैरों के तले कुचलवा दिया गया[1] अथवा ऊंट के गले में लटका दिया गया ताकि घुटनों की ठोकर से उसकी मृत्यु हो सके[2] वास्तुतः उसे अत्यन्त दुखद मृत्यु प्रदान की गयी ।

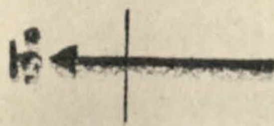
देवगीर गोसाई और लक्ष्मणसिंह पासवान के अन्त के संदर्भ में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है परन्तु यदिकिगत घटनाओं एवं उनके परिणामों का अवलोकन किया जाए तो उन्हें मुक्त करने का कोई उचित कारण प्रतीत नहीं होता है ऐसी स्थिति में निश्चित ही उन्हें भी मृत्यु दंड ही दिया गया होगा ।

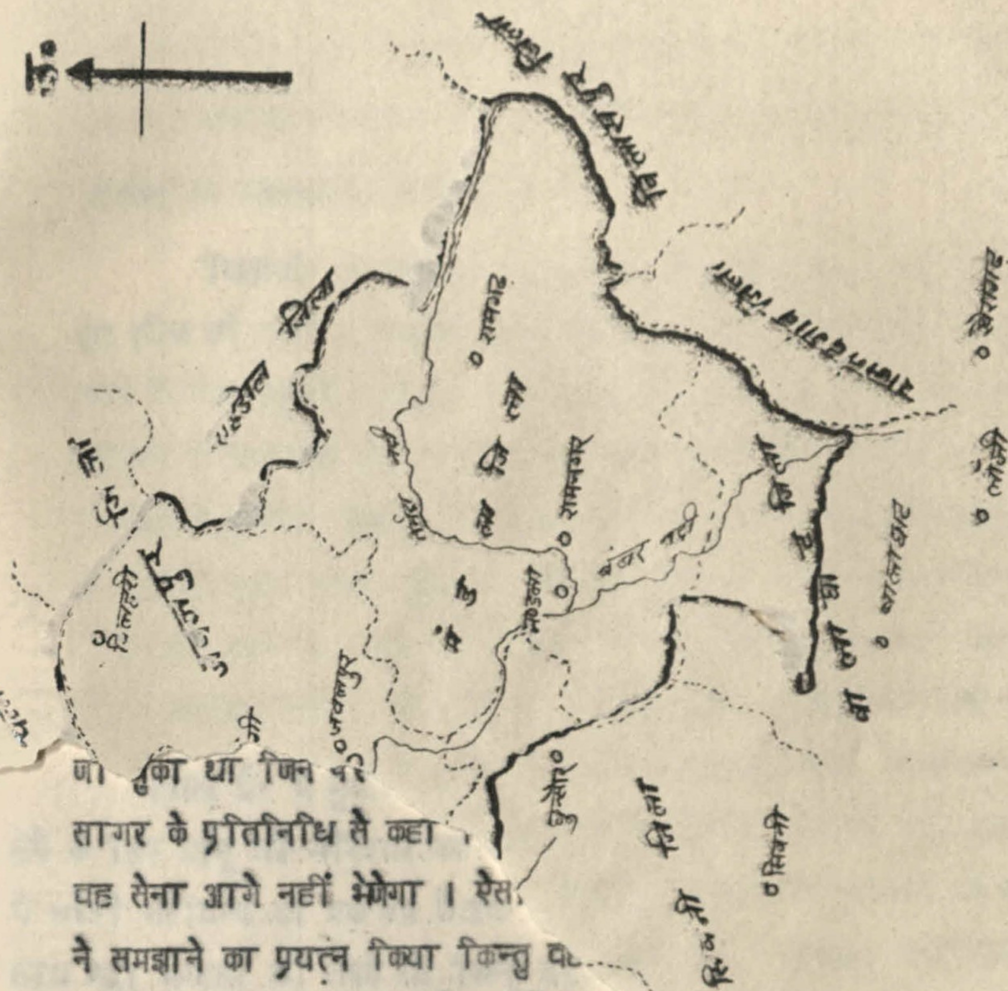
इस प्रकार नरहरि शाह और गंगागीरगोसाई को बंदी बनाये जाने के साथ ही सम्पूर्ण गढ़ामण्डला राज्य पर प्रत्यक्ष रूप में मराठों की सत्ता स्थापित हो गयी । रघुनाथ राव ने मोरो विश्वनाथ डिंगनकर को गढ़ा मण्डला के प्रमुख अधिकारी के रूप में नियुक्त किया ।[3]

B• <u>भोंसला की बेचैनी एवं अन्य घटनाएं</u> :-

एक तरफ जहां सागर के मराठे तेजगढ़, गढ़ा, मण्डला और चौरागढ़ में अपना अधिकार स्थापित करने में सक्रिय थे, वहीं दूसरी ओर गढ़ामण्डला के प्रतिनागपुर के भोंसला भी बैचेन थे । पहले लिखा जा चुका है कि गढ़ामण्डला

1• पाठक, ग• द• <u>गढ़ामण्डला का पुरातन इतिहास</u>, पृ•32
1• अग्रवाल, रा•भ•, <u>गढ़ा मण्डला के गोंड राजा</u>, पृ•110
2• स्लीमैन, ;ए•सो•बं•पृ•644
3• अन्धारे, भा•रा•, <u>बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज</u>, पा•11, पृ•73





ना चुका था जिन पर

सागर के प्रतिनिधि से कहा

यह सेना आगे नहीं भेजेगा । ऐस

ने समझाने का प्रयत्न किया किन्तु व

उसकी मांग पूना प्रेषित करते हुए पेशवा से

मई 1783 ई.[4] में गढ़ामण्डला राज्य में नर्मदा के

दे दिया ।

रघुजी भोसला लि ... म के पत्र



वर्तमान मध्य प्रदेश में गढ़ा मण्डला राज्य की स्थिति.

के प्रश्न को लेकर ही 1781 ई. में मुधोजी भोसला ने अंग्रेजों से एक संधि की थी । स्वाभाविक था कि गढ़ामण्डला में सागर वालों की उक्त कार्यवाही भोसला की सहनशक्ति के विपरीत थी ।

विसाजी चान्दोरकर की मृत्यु के बादसागर के मराठों की स्थिति कुछ क्षीण हो गयी । इसलिए मोरोविश्वनाथ ने मुधोजी भोसला से सहायता करने के लिए अनुरोध किया ।[1] गंगागीरगोसाई भी मु•अमीन खां को मुधोजी भोसला के पास भेज चुका था कि वह सागर वालों की सहायता न करें । ऐसी स्थिति में मुधोजी भोसला को सागर वालों से अपनी मांग पूरी करवाने के लिए एक अच्छा अवसर प्राप्त हुआ । जिसका लाभ वह तत्परित उठा लेना चाहता था अत: उसने अपने 16 महाल दिये जाने का जिक्र किया । सम्भवत: यह 13 महाल होना चाहिए क्योंकि तीन महाल[2] का स्वामित्व भोसलों को पहले ही दिया जा चुका था जिन पर वे सुचारू रूप से शासन कर रहे थे ।[3] इसके साथ ही उसने सागर के प्रतिनिधि से कहा कि जब तक उसकी सेना का खर्च नहीं दिया जाएगा वह सेना आगे नहीं भेजेगा । ऐसा विदित होता है कि तत्काल उसे सदाशिवराम ने समझाने का प्रयत्न किया किन्तु वह अटल रहा । अन्तत: सदाशिवराम ने उसकी मांग पूना प्रेषित करते हुए पेशवा से यह आग्रह किया कि उसे स्वीकार कर नई 1783 ई• में गढ़ामण्डला राज्य में नर्मदा के दक्षिण के 16 महाल भोसला को दे दिया ।[4]

रघुजी भोसला द्वितीय एवं सदाशिवराम के पत्रों से विदित होता है कि

1• शेजवलकर,,ना•अ•,1,177,पृ•188–89

2• ये महाल लांजी,खेरागढ,और पसरिया थे

3• शेजवलकर, ना•अ•1,177,पृ•188–89

4• वही,1,180,पृ•193

रघुजी भोंसला द्वितीय के द्वारा बिट्ठल बल्लाल सूबेदार के नेतृत्व में लगभग दो हजार घुड़सवार की सेना चौरागढ़ भेजने की योजना बनाई गयी तथा मण्डला प्रान्त में उपद्रव कर रहे लोगों को अर्थदंड देने का उत्तरदायित्व ने उसने स्वीकार किया ।[1] किन्तु इसे क्रियान्वित बब किया गया या नहीं इस संबंध में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है ।

इसके विपरीत भोसला को गढ़ामण्डला दिये जाने के संबंध में दो बार सनद की अनुमति दी गयी किन्तु दोनों ही बार उसे निरस्त कर दिया गया ।[2] अत: गढ़ा मण्डला के प्रति मुधोजी भोसला की बेचैनी बढ़ती गयी ।

तत्पश्चात मुधोजी ने पूना जाने का निश्चय किया ताकि वह पेशवा का विश्वास पाप्त कर सके । फलस्वरूप सितम्बर 1785 ई॰ में मुधोजी भोसला के अनुकुल एक संधि पत्र पर हस्ताक्षर हुए इसके अनुसार अभी तक स्थगित हुई मण्डला की सनद उसे प्रदान की गयी तथा बदले में मुधोजी ने 27 लाख रूपये देने का वचन दिया[3]

1786 ई॰ में मुधोजी भोसला ने सनद के मुताबिक गढ़ामण्डला का अधिकार लेने के लिए बापू जी मोरेश्वर को भेजा । दूसरी तरफ स्वयं पेशवा नाना फड़नवीस ने मोरो गोविन्द को एक पत्र के साथ बालाजी गोविन्द के पास भेजा । इस पत्र के साथ गढ़ा मण्डला की सनदे थी किन्तु तत्काल सत्ता हस्तान्तरण के प्रश्न पर विचार फ्नहींकिया गया क्योंकि बालाजी गोविन्द और खण्डेराव हरी कालिंजर की योजना में व्यस्त थे । सागर के दीवान लक्ष्मीनारायण भट्ट ने पन्ना में मोरो गोविन्द और बापू जी मोरेश्वर से भेंट की और कहा कि 31 लाख[4] रूपये खर्च

---

1 शेजवलकर, ना॰अ॰, 1, 14, पृ, 13 एवं 11, 48, पृ॰20

2॰ वहीं, 1, 331, पृ॰449

3॰ जेकिन्सआर, ॰रिपोर्ट आन दि टेरीटोरीज आफ दि राजा आफ नागपुर, पृ॰61

4॰ विल्स ने इसे 40 लाख रूपया बताया है॥ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ॰100-101

करने के पश्चात हमें मण्डला प्राप्त हुआ है तब 31 लाख रुपये मिलने के बाद ही गढ़ामण्डला दिया जा सकेगा । तत्पश्चात मोरोगोविन्द ने उसे एकान्त में ले जाकर समझाया कि "मुधोजी भोसला पूणा में तीन लाख रुपया जमा कर चुके है, शेष राशि के लिए भी चर्चा हो चुकी है और गढ़ा मण्डला की यह सनद पेशवा नाना फड़नवीस और तात्या(हरीपंत फड़के) की अनुमति से ही यहां लाई गयी है । अतः इस विषय पर आपको आपत्ति उठाने का कोई कारण नहीं है ।"तब लक्ष्मी नारायण भट्ट ने उत्तर दिया "12 दिन में हम मण्डला और चौरागढ़ के उत्तर व दक्षिण के सम्पूर्ण प्रान्त को छोड़ देंगे ।"[1]

मुधोजी भोसला जो कि पहले से ही खिन्न था, इस सूचना के प्राप्त होने से अत्यधिक क्रोधित हुआ ,उसे लगा कि बिना सेना के सहयोग से वह गढ़ामण्डला पर अधिकार स्थापित नहीं कर सकता,अतः उसी समय 27 जून 1786 ई. को को बरार प्रान्त के सूबेदार बिट्ठल बल्लाल को सेना सहित गढ़ामण्डला राज्य की तरफ भेजने का निश्चय किया ताकि वह मण्डला जाकर वहां का बन्दोबस्त कर सके[2] किन्तु उसने इसे क्रियान्वित नहीं किया ।

इस बीच परिस्थितियां पुनः परिवर्तित होती हुई प्रतीत होने लगी गढ़ामण्डला के चार महाल और चौरागढ़ को छोड़कर शेष राज्य पर अधिकार छोड़ने की सहमति देते हुए बालाजी गोविन्द ने नाना फड़नवीस को लिखा कि "गढ़ामण्डला अत्यधिक परिश्रम से प्राप्त हुआ है तथा उसके लिए विसाजी गोविन्द को स्वयं की बलि देनी पड़ी है ऐसी स्थिति में इस स्थान से थोड़े समय के लिए अधिकार छोड़ने का कोई कारण नहीं है,पहले यह आवश्यक है कि प्रान्त की सीमा निश्चित कर दी जाए ।[3]

---

1. शेजवलकर, ना.अ., 11, 125, पृ, 61
2. वही, 11, 124, पृ, 60-61, 126, पृ. 61-62
3. वही, 11, 127, पृ. 62

संयोगवश 1786 ई॰ में ही बदामी में पेशवा नाना फड़नवीस और कान्होजी भोसला के मध्य कुछ मतभेद हो गया अतः पेशवा ने तुरन्त अपने कर्मचारियों को सूचित किया कि गढ़ामण्डला का अधिकार आगामी चार दिन तक किसी को हस्तान्तरित न की जाए ।[1]

फलस्वरूप गढ़ामण्डला का अधिकार बापूजी मोरेश्वर को नहीं दिया गया और मोरोगोविन्द 29 जनवरी 1788 ई॰ को श्रीनगर चला गया । जहां से काल्पी जाकर बालाजी गोविन्द के साथ तीर्थाटन के लिए चला गया ।

इधर नागपुर में गढ़ामण्डला प्रकरण को लेकर मुधोजी भोसला की बेचैनी दिन प्रतिदिन उग्र होती जा रही थी । इस सन्दर्भ में उसने कई पत्र पूना लिखवाये ।[2] उसे पूना से सम्मानजनक उत्तर प्राप्त हुआ अथवा नहीं यह अज्ञात है ।

दुर्भाग्यवश जब गढ़ामण्डला प्रकरण अपने तीव्रतम विकास की ओर बढ़ रहा था तब ही 19 मई 1788[3] ई॰ को नागपुर में मुधोजी भोसला की मृत्यु होगयी । तदोपरान्त गढ़ामण्डला की कार्य वाही करने का उत्तरदायित्व प्रयत्क्ष रूप से रघुजी भोसला द्वितीय का हो गया । अतः उसने शासन सूत्र स्वयं अपने हाथ में ले लिया ।

बालाजी गोविन्द ने 14 मार्च 1789 ई॰ को तीर्थाटन से लौटकर यह सूचित किया कि पूना से पेश्वा की नवीन सनद आने पर ही गढ़ा मण्डला का अधिकार हस्तान्तरित किया जाएगा ।[4] उल्लेखनीय है कि सागर के दीवान लक्ष्मीनारायण भट्ट ने बताया था कि गढ़ामण्डला का राज्य पेशवा के द्वारा

---

1. वही, 11, 129, पृ॰63
2. शेजवलकर, ना॰अ॰, 1, 229, पृ॰299 तथा इसी का पूरक पद्य पृ॰256
3. काले या मा॰ना॰भो.इ॰पृ॰142, पृ याग्दत्त शुक्ल <u>मध्यप्रदेश का इतिहास</u> पृ॰140 पर 9 मई 1787 लिखा हुआ है
4. वि॰सं॰मं॰वार्षिकी, 1982, पृ॰207

बालाजी गोविन्द खेर को दिया गया है, इसलिए भविष्य में गढ़ामण्डला के संबंध में पेशवा के ही निर्देशों का पालन किया जाएगा ।[1]

वस्तुत रघुजी भोसला द्वितीय पेशवा के साथ पूना गये और अप्रेल 24, 1789 ई॰ को 25 लाख रूपये दिये जाने के शर्त के साथ गढ़ामण्डला राज्य की नवीन सनद प्राप्त की जिसके फलस्वरूप मई 1790 ई॰ में रघुजी भोसला द्वितीय ने बालाजी मल्लर, सिम्बकजी भोसले एवं देवा जी डोंगरदेव को गढ़ामण्डला पर अधिकार प्राप्त करने के लिए सागर भेजा जहां इन लोगों ने बालाजी गोविन्द से मुलाकात की । किन्तु इस मुलाकात में भोसला के प्रतिनिधियों द्वारा अभद्र वार्तालाप एवं दुर्व्यवहार के कारण बालाजी गोविन्द ने रूष्ट होकर उन्हें भगा भगा दिया ।[2]

इस तरह एक बार रघुजी पुन: रघुजी भोसला द्वितीय को गढ़ा मण्डला दिये जाने का प्रकरण निरस्त हो गया ।

9॰ <u>प्रदेश की आन्तरिक स्थिति</u>

यद्यपि गढ़ामण्डला में अब तक मराठों की सत्ता पूर्णत: स्थापित हो गयी थी तथापि प्रदेश की आन्तरिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी ।

कई अवसरों एवं परिस्थितियों में पूर्वजो कीकहावतें हमारे दैनिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित करती है । यह सत्य के इतने निकट होती है कि उन्हें नकारना बहुत ही कठिन होता है "बिन धरनी घर भूत का डेरा" ऐसी ही कहावत है जो तत्कालीन गढ़ामण्डला की वस्तुस्थिति में पूर्ण त: चरितार्थ होती है । नि:सन्देह जब इस समय गढ़ामण्डला राज्य की स्थिति बिल्कुल ऐसी ही थी

1॰ शेजवलकर ना॰अ॰11, 110, पृ॰53

2॰ शेजवलकर ना॰अ॰1, 283, पृ॰327, 289, पृ॰344, सी॰पी॰सी॰———
1225, पृ॰511

गोडों एवं मराठों के मध्य वर्षों तक चलने वाले संघर्ष ने राज्य कीआर्थिक स्थिति को पूर्णत: खोखला बना दिया था ।

असन्तोष

मराठा प्रथम कार्यकर्ता (व्यवस्थापक) के नाम पर मोरोविश्वनाथ को नियुक्त किया गया, किन्तु वह प्रजा के असंतोष को शांत न कर सका । सम्पूर्ण राज्य में अराजकता और असंतोष व्याप्त था । स्थान स्थान पर उपद्रव एवं षडयंत्रों का बाजार गर्म था । लोग एक दूसरे को लूटकर अपना पेट भरने में व्यस्त थे । वास्तव में गढा मण्डला राज्य को प्राप्त करने की आपसी स्पर्धा ने मात्र एक व्यवस्था का लेबल लगाकर सम्पूर्ण राज्य को दंगों और झगडों की लूट में विनष्ट होने के लिए छोड़ दिया था ।

उपद्रव एवं लूटमार :

1788 ई॰ में मलहार जी बोरपे के एक पत्र से विदित होता है कि करेला निवासियों में आपस में एक दूसरे के विरूद्ध फौजदारी की कार्यवाही चल रही थी, जिसने धीरे धीरे एक युद्ध का रूप धारण कर लिया, तब मोरो विश्वनाथ ने चार सौ घुडसवार सैनिकों को रसद एवं युद्ध सामग्री के साथ छपारा के अमीन खां के पास भेजा तथा उसे ताकीद की कि वह (अमीन खां) स्वयं सेना का नेतृत्व करें एवं उक्त गांव के झगड़े को मस समाप्त कर वहां व्यवस्था बनाये रखे किन्तु उक्त अवसर पर अमीन खां ने पूर्णत: उदासीनता का परिचय दिया शायद उसने मोरोपंत की सेना को घटना स्थल पर भेजना उचित नहीं समझा । इस सन्दर्भ में उसने आगे क्या कार्यवाही की यह ज्ञात नहीं हो सका ।

1· शेजवलकर, ना·अ·, 11, 299, पृ·169, दिनांक 1 सफर= 1 नवम्बर 1788 ई. मूल पत्र में तिथि अक्टूबर मध्य 1788 ई लिखा है । यह त्रुटिपूर्ण है । सम्भवत: यह त्रुटि गणना वश हुई है क्योंकि 1 सफर 1203 हिजरी सन्,= 1 नवम्बर 1788 ई· को होती है ।

एक अन्य विवरण से ज्ञात होता है कि मण्डला के जमींदार एवं उसके कारकून[1] पड़ोसी जमींदारों के क्षेत्र में प्रवेश कर सीमावर्ती गांवों को लूटकर आग लगा देते थे। मण्डला के लुटेरों को वहां से मराठा अधिकारियों का पूर्ण सहयोग प्राप्त था क्योंकि स्वयं मराठों के नीजी कर्मचारी जमींदार के साथ जा कर लाबी या समीपवर्ती क्षेत्रों में लूटपाट करवाते थे।[2]

इसी क्रम में आगे हमें दिनकर बिट्ठल को लिखे गये एक पत्र से विदित होता है कि खतोली के जमींदार ने खेरागढ़ पर आक्रमणकर वहां की मवेशियों को पकड़ ले गया तथा उसके कर्मचारी प्र ति दिन लांजी और समीपवर्ती गांवों में उपद्रव करते थे।[3] फलस्वरूप लांजी के पटेलों ने अपने सात आठ सौ घुड़सवारों के साथ ताल्लुका मद्दू व उसके निकटवर्ती 7-8 गांवों को लूटकर उन्हें आग लगाकर जला दिया।[4]

इसी संदर्भ में लांजी के ही राम जी पाटिल नामक व्यक्ति का उल्लेख भी प्राप्त होता है जो मण्डला परगना में उपद्रव करवाने में प्रसिद्ध था। वह लुटेरों एवं उपद्रव कारियों का संरक्षक समझा जाता था तथा समीपस्थ गांवों मारपीट एवं लूटखसोट करवाना ही उसका प्रमुख व्यवसाय था। वह स्थानीय अधिकारियों पर भी प्रभाव शाली था।[5]

---

1. कर्मचारी
2. पेजवलकर, ना॰अ॰ ।।, 151, पृ, 74-75 (4 जून 1790 ई॰)
   150, पृ॰ 74, 155, पृ॰ 77
3. गोंदा पटेल एवं धोकल पटेल
4. पेजवलकर, ना॰अ॰ ।।, 150, पृ॰ 74
5. वही, ।, 288, पृ॰ 341

अध्याय 5

इसे नागपुर के भौंसलों के लिए दुर्दिन ही कहा जा सकता है। जैसा कि पिछले अध्याय में लिखा जा चुका है कि गढा मण्डला को प्राप्त करने का अथक प्रयास करते हुए भी मुधोजी भौंसला सफल न हो सका और 19 मई 1788 ई॰ को हुई उसकी मृत्यु के साथ ही उसकी अभिलाषा अधूरी रह गयी। वह मराठा संघ का एक प्रभावशाली सदस्य था। जबकि भौंसला परिवार का एक और प्रमुख सदस्य मुधोजी का छोटा भाई बिम्बाजी भौंसला की मृत्यु क भी लगभग 6 माह पूर्व 7 दिसम्बर 1787 ई॰[1] को हो चुकी थी जो छत्तीसगढ प्रान्त का प्रमुख एवं रतनपुर में रहता था। इस प्रकार प्रमुख सदस्यों की मृत्यु से नागपुर का भौंसला परिवार लगभग टूट-सा गया।

तदनंतर रघुजी भौंसला द्वितीय ने स्वतन्त्र रूप से उत्तरदायित्व ग्रहण किया और नागपुर राज्य का संचालन करने लगा।

1· चिमणाबापू एवं रघुजी भौंसला द्वितीय :

गढा मण्डला के सन्दर्भ में यदि चिमणाबापू का उल्लेख न किया जाये तो संभवत: यह इतिहास अधूरा रह जायेगा।

यह उल्लेखनीय है कि मूलत: गढा मण्डला को गौंड शासकों से रघुजी भौंसला प्रथम ने जीता था किन्तु 1742 ई॰ में पेशवा ने आक्रमण कर गौंड राजा को अपना करद बना कर गढा मण्डला पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था।[2] कालान्तर में, 1779 ई॰

1· काले या·मा·, ना·भो·इ· पृ· 142
2· विल्स· ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ· 141

में नाना फड़नवीस ने चिमणाबापू के नाम से ही गढ़ा मण्डला की सनद मुधोजी भोंसला को प्रदान की थी । यह बात और है कि उक्त सनद पर अमल नहीं किया जा सका । परन्तु चिमणाबापू ने स्वयं ही, गढ़ा मण्डला हस्तगत करने का भरसक प्रयत्न किया ।

यद्यपि सेना साहब सूबा होने के कारण गढ़ा मण्डला का अधिकार रघुजी भोंसला द्वितीय को ही प्राप्त होता तथापि उसका वास्तविक अधिकारी चिमणाबापू ही था, क्योंकि सनद उसी के नाम से प्रदान की गयी थी ।

चिमणाबापू को बिम्बाजी भोंसला ने दत्तक पुत्र बनाकर अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था तथा उसे रतनपुर का प्रांत प्रदान किया था । सम्भवत: चिमणाबापू रतनपुर गया ही नहीं ।[1] उसका समय अधिकांशत: बंगाल, बिहार और उड़ीसा के अभियानों एवं नागपुर में व्यतीत हुआ था ।

दरअसल नागपुर के भोंसला परिवार में रघुजी भोंसला प्रथम के चार पुत्रों[2] में केवल एक मुधोजी भोंसला की वंशवृद्धि हुई ।[3] जिसमें रघुजी भोंसला द्वितीय ज्येष्ठ था, जिसे जनोजी भोंसला ने अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था तथा उसके अनुज चिमणाबापू को बिम्बाजी भोंसला ने ।

संयोगवश शीघ्र ही रघुजी भोंसला द्वितीय को नागपुर का सिंहासन प्राप्त हुआ और अपने पिता मुधोजी भोंसला की मृत्यु के पश्चात वह सम्पूर्ण राज्य पर स्वतंत्र रूप से शासन करने लगा ।

---

1. शुक्ल प्र॰द॰, मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ॰140
2. जनोजी भोंसला, मुधोजी भोंसला, साबाजी भोंसला तथा बिम्बाजी भोंसला
3. शुक्ल प्र॰द॰ मध्य प्रदेश का इतिहास _ पृ॰ 125

अपने स्वतंत्र शासन के प्रथम वर्ष में रघुजी भोंसला द्वितीय ने चिमणाबापू को दारन्हा, गिरोली, महागांव, रवडी, धामनी, माहूर और भाग आदि परगने उसके व्यक्तिगत खर्च हेतु दिये ।[1]

चिमणाबापू की मृत्यु :-

उल्लेखनीय है कि चिमणाबपू रतनपुर न जाकर नागपुर में ही रहना चाहता था । उसकी हार्दिक अभिलाषा गढा मण्डला प्राप्त कर उस पर शासन करने की थी, किन्तु दैवयोग से मुधोजी भोंसला की मृत्यु के लगभग एक वर्ष पश्चात 16 अगस्त 1789 ई॰ को उसकी {चिमणाबापू की} मृत्यु हो गयी ।[2] चिमणाबापू की मृत्यु के संबंध में सर्वसाधारण की यह धारणा थी कि उसमें रघुजी भोंसला द्वितीय का प्रमुख हाथ है । दरअसल एक दिन चिमणाबापू किसी बुद्दू खां पठान के यहां से नाच देख कर अर्द्ध रात्रि के पश्चात वापस आया और भोजन करके सो गया । दूसरे दिन सुबह वह हनुमान[3] खिडकी के पास बैठा हुआ था, कि अचानक उसके सीने में दर्द उठा और वह कुर्सी पर से नीचे गिर गया, जिसके साथ ही उसका शरीर निर्जीव हो गया । समझा जाता है कि चिमणाबापू ने रघुजी भोंसला द्वितीय से अपने हिस्से की मांग की, किन्तु रघुजी भोंसला द्वितीय इसके लिए तैयार न था । अत: अपने विश्वासपात्र

1· श्री शुक्ल, इ·छं·, पृ· 115, फु·नो· 3
2· काले या·मा· ना·भों· इ·, पृ 143
3· प्रयागदत्त शुक्ल ने इसे हिरणापंत लिखा है.

कार्यकारी महादजी लश्करी के सहयोग से उसने चिमणाजी बापू की मृत्यु के लिए मंत्र शक्ति का प्रयोग किया ।[1] उसके अंतिम संस्कार को भी स्वयं रघुजी भोंसला द्वितीय ने न करते हुए छोटे भाई व्यंकोजी भोंसला से करवाया । इस संबंध में कुछ अप्रकाशित कागजात भी प्राप्त हुए है ।[2]

वस्तुत: चिमणाबापू की मृत्यु से रघुजी भोंसला का मार्ग निष्कंटक हो गया । यह बात गौण है कि इसके पश्चात भी उसे कुछ समय तक पारिवारिक कलह का सामना करना पडा था ।

उपरोक्त अवरोधों के बावजूद भी रघुजी भोंसला द्वितीय गढा मण्डला प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहा ।

जैसा पिछले अध्याय में लिखा जा चुका है कि सिंहासन प्राप्त करने के पश्चात रघुजी भोंसला द्वितीय ने मई 1790 ई· में अपने प्रतिनिधियों को सागर भेजा था तब उनके अभद्र व्यवहार की

1· शुक्ल प्र·द· मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ·140-41, काले या·मा·, ना·भो·इ·, पृ· 143

2· औरंगाबादकर यांची बखर, अप्रकाशित । इसमें चिमणाबापू की मृत्यु 15·10·1790 ई· को हुई, लिखी गई है । वही तिथि रविशंकर शुक्ल अभिनंदन [illegible]·, इ·खं·, पृ·115 पर भी दी गयी है ।

जहां तक चिमणाबापू की मृत्यु के लिए रघुजी भोंसला द्वितीय द्वारा मंत्र शक्ति का प्रयोग किये जाने का प्रश्न है, यह पूर्णत: निराधार प्रतीत होता है । संभवत: चिमणाबापू की मृत्यु हृदय शूल या हृदयाघात के कारण हुई होगी । यदि मंत्रशक्ति के द्वारा मृत्यु की बात को सत्य मान भी लिया जाये तब चिमणाबापू को उसके निजी खर्च के लिए परगने दिया जाना क्या दिखावा मात्र था

ओट लेकर सागर प्रमुख बालाजी गोविन्द ने गढा मण्डला पर अधिकार देने से इंकार कर दिया था । तदनंतर गढा मण्डला प्रकरण को लेकर नागपुर के भोंसला की गलतफहमियां पूर्ववत बनी रही । सदाशिव राव के पत्र[1] से विदित होता है कि गढा गण्डला राज्य के हस्तान्तरण के लिए रघुजी भोंसला द्वितीय, अपने प्रतिनिधि बाबूराव को सदैव पूना भेजता रहा, जिसे 12 हजार रूपये प्रतिवर्ष व्यक्तिगत व्यय हेतु एवं मण्डला प्रकरण के व्यय हेतु 5 हजार रूपये अतिरिक्त नागपुर से दिया जाता था, किन्तु फिर भी उसे कोई सफलता प्राप्त न हो सकी ।[2]

2· खर्डा[3] का युद्ध और गढा मण्डला के हस्तान्तरण की प्रक्रिया :-

खर्डा का युद्ध यद्यपि गढा मण्डला के पृष्ठभूमि पर नहीं हुआ और न ही इस प्रदेश के प्रतियोगियों के मध्य हुआ, तथापि गढा मण्डला के इतिहास में खर्डा के युद्ध का अपना विशिष्ट महत्व है ।

दरअसल रघुजी भोंसला द्वितीय तटस्थता की नीति का अनुसरण करना चाहता था, किन्तु अपनी स्वार्थ पूर्ति में भी वह पीछे रहना नहीं चाहता था ।

1790 ई· में पेशवा ने उससे टीपू सुलतान के विरूद्ध सहायता मांगी थी तब अत्यन्त ही सहजता से उसे नजरअंदाज कर गया था । उस युद्ध में पेशवा और निजाम एक पक्ष के व्यक्ति थे, परन्तु टीपू सुल्तान के विरूद्ध युद्ध समाप्त होने के पश्चात पेशवा और निजाम में मतभेद व मनमुटाव बढने लगा । दरअसल मराठों को सरदेशमुखी से मिलने वाली चौथाई राशि निजाम, पेशवा को नहीं दे रहा था ।

1· 14 अप्रैल 1792 ई· को लिखा गया पत्र. ना·अ· I
प·क्र· 303, पृ· 398

2· उपरोक्त

3· वर्तमान [illegible] से लगभग 98 कि·मी· पूर्व में स्थित

फलस्वरूप चौथ को लेकर पेशवा और निजाम के मध्य अंकुरित हुआ मनमुटाव अब पूर्णत: विकसित हो कर अपने अंतिम शिखर पर पहुंच चुका था अत: पेशवा ने निजाम के विरुद्ध समस्त मराठा सरदारों का आव्हान किया ।

इधर रघुजी भोंसला द्वितीय किसी भी प्रकार से नाना फडनवीस को खुश रखना चाहता था क्योंकि अब एक मात्र नाना ही प्रमुख शक्तिशाली मराठा के रूप में शेष था । 1794 ई॰ में महादजी सिंधिया की मृत्यु हो चुकी थी । संयोगवश शीघ्र ही रघुजी भोंसला द्वितीय को अपना स्वार्थ सिद्ध करने का एक अवसर प्राप्त हुआ । 1795 ई॰ में नाना फडनवीस का निमंत्रण पाकर वह विठ्ठल बल्लाल सूबेदार के नेतृत्व में 15 हजार सैनिकों की सेना लेकर अहमदनगर के पास पेशवा की सेना सेना से जा मिला ।[1] जहां से पेशवा, भोंसला और सिंधिया की सम्मिलित सेनाओं ने निजाम पर आक्रमण किया । युद्ध के प्रारंभिक चरण में ही निजाम के सैनिकों को विवश होकर खर्डा के किले में शरण लेनी पडी । मराठा सैनिकों ने खर्डा के किले को घेर लिया । तदनन्तर 11-12 मार्च 1795 ई॰[2] को हुए युद्ध के फलस्वरूप निजाम को संधि करने के लिए विवश होना पडा । युद्ध में निजाम पूर्ण-रूपेण पराजित हुआ था ।

इस युद्ध में रघुजी द्वितीय की सेना की अत्यधिक प्रशंसा की गई, विशेषकर विठ्ठल बल्लाल सूबेदार के शौर्य की ।

खर्डा के युद्ध में रघुजी भोंसला द्वितीय को द्वि लाभ प्राप्त हुआ । एक तरफ निजाम के प्रदेश से लूट में प्राप्त हुई सम्पत्ति को पेशवा एवं भोंसला ने आपस में बांट लिया तथा दूसरी तरफ युद्धोपरान्त हुई खर्डा की संधि के फलस्वरूप रघुजी भोंसला द्वितीय को निजाम की ओर से

1· शुक्ल प्र·द·, मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ·142, काले या·मा·,ना· भो·इ·, पृ· 201 श्री शुक्ल, इ·खं·, पृ·116

2· सरदेसाई·,म·म·इ·, 3, पृ·304-8·, श्री शुक्ल·, इ·खं·, पृ·116 पर इसकी तिथि 15 मार्च 1795 ई· लिखी है । यह त्रुटिपूर्ण है ।

गंगथडी प्रान्त से "घासदाना" के बदले में 3 लाख 50 हजार[1] रूपये की आय का प्रदेश प्राप्त हुआ तथा अतिरिक्त राशि 2½ लाख रूपये देना निजाम ने स्वीकार किया । [2] सम्भवत: पेशवा को 30 लाख रूपये नकद एवं 30 लाख रूपये की आय का प्रदेश प्राप्त हुआ ।[3]

खर्डा की संधि के पश्चात रघुजी भोंसला द्वितीय एवं विठ्ठल बल्लाल सुबेदार पूना गये । जहां नाना फडनवीस ने उनका अत्यन्त आदर सत्कार किया, साथ ही 16 अक्तुबर 1795 ई॰ को पेशवा माधवराव ने गढा मण्डला और चौरागढ के 12 महालों के साथ एक नवीन सनद रघुजी भोंसला द्वितीय को प्रदान की [4] और बुन्देलखण्ड के मामलतदार बालाजी गोविन्द खेर को गढा मण्डला का हस्तानन्तर करने के लिए आदेश भेजा । [5]

उल्लेखनीय है कि गढा मण्डला राज्य में नर्मदा के दक्षिणी प्रदेश की सनद पूर्व पेशवा नाना साहब {बालाजी बाजीराव} ने पहले ही रघुजी भोंसला प्रथम को दिया था । किन्तु दुर्भाग्यवश प्रदेश के अधिकांश भाग पर भोंसला का अधिकार न हो सका और होशंगाबाद, चौरागढ, बचई इत्यादि महत्वपूर्ण ठिकाने अधिकार में आते-आते रूक गये ।

1· शुक्ल प्र·द·, मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ·143 पर बरार का पुसद लालु का एवं आय 3 लाख लिखी गयी है, तथा श्री शुक्ल इं·ख·, पृ· 116 पर 3 लाख 18 हजार है

2· काले या·मा·, ना· भो· इ·, पृ· 201, शुक्ल प्र·द·, मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ· 143

3· सरदेसाई·, म· न· इ·, 3, पृ· 310· परन्तु श्री शुक्ल,· इ· खं·, पृ· 116 पर पेशवा को प्राप्त होने वाली प्रदेश की आय मात्र 22 लाख रूपये दर्शायी गयी है । इस तरह खर्डा के युद्ध से प्राप्त होने वाली आय के सन्दर्भ में अत्यधिक मतभेद पाया जाता है

4· वि·कं·म·, वार्षिकी, 1982, पृ· 208·, काले या·मा·,ना·भो·इ· पृ·201, ग्राण्टडफ, हिस्ट्री आफ दि मराठाज, III पृ·120

5· पी·आर·सी·, II प·286, पृ· 415·, राजवाडे·, मराठ्यांच्या इतिहासांची साधने, 10, प· 388-89, पृ· 321-32

वस्तुत: खर्डा के युद्ध से रघुजी भोंसला द्वितीय को सर्वाधिक लाभ प्राप्त हुआ और नाना फड़नवीस उसका घनिष्ठ मित्र बन गया ।

3· <u>परिवर्तित परिस्थितियां</u> :

पेशवा माधवराव से गढा मण्डला की नवीन सनद प्राप्त कर रघुजी भोंसला द्वितीय अत्यधिक प्रसन्न हुआ । स्वाभाविक भी था । वर्षों से जिसे प्राप्त करने के लिए उसने अथक प्रयास किया था उसके हस्तान्तरण की सफलता उसके इस सनद में निहित थी ।

इस तरह अपनी तात्कालिक सफलता और प्राप्त सनद को क्रियांवित करने के उद्देश्य से 17 अक्तूबर 1795 ई· का रघुजी भोंसला द्वितीय ने पूना से नागपुर के लिए प्रस्थान किया । पूना से चल कर वह कोरेगांव और वासिम मार्ग से नागपुर की ओर अग्रसर हुआ ।[1] किन्तु अभी वह मार्ग में ही था कि जालना के निकट 27 अक्तूबर 1795 ई· को हुई पेशवा माधव राव की मृत्यु की सूचना प्राप्त हुई ।[2] जिसका आकस्मिक निधन महल

1· काले या·मा·, ना·भों·इ·, पृ· 20।

2· श्री शुक्ल, इ·ख· पृ· 116, वि·सं·मं· वार्षिकी, 1982, पृ· 208 सरदेसाई·, म·न·इ·,3, पृ·316, पं· प्रयागदत्त शुक्ल ने इसे 22 अक्तूबर लिखा है जो कि गलत है –देखिये <u>मध्य प्रदेश का इतिहास</u>– पृ· 143– तथा सी·पू· विल्स लिखा है कि रघुजी के रवाना होने के 8 दिन बाद युवा पेशवा माधवराव दुर्घटनावश मारे गये –देखिये, <u>ब्रिटिश रिलेशन्स</u>, पृ· 138– यहां भी सूचना दोष ही प्रतीत होता है क्योंकि रघुजी भोसला पूना से 17 अक्तूबर को चला था । उसके 8 दिन बाद 25 अक्तूबर होती है । इस दिन माधवराव छज्जे पर से गिरा था किन्तु उसकी मृत्यु दो दिन पश्चात 27 अक्तूबर को हुई थी.

के छज्जे पर से गिरने के कारण हुआ था । ऐसी धारणा है कि इस मृत्यु का कारण कोई आकस्मिक दुघटना नहीं वरन आत्महत्या थी । सम्भवत: माधवराव जानबूझ कर 25 अक्तूबर 1795 ई॰ को अपने महल के छज्जे से कूद पड़ा था ।[1] इसका कारण क्या हो सकता था यह अज्ञात है तथापि ग्राण्ट डफ़ ने इसका कारण स्थायी चिन्ता और आत्म निराशा माना है ।

वस्तुत: माधवराव पेशवा की मृत्यु के साथ ही पूना दरबार में एक बार पुन: अस्थिरता का वातावरण निर्मित हो गया ।

दूसरी तरफ़ रघुजी भोंसला द्वितीय को जब यह समाचार प्राप्त हुआ वह स्तम्भित रह गया । अन्तत: माधवराव के अंतिम संस्कार को सम्पन्न कराने हेतु अपने कर्मचारियों को पूना भेज कर रघुजी द्वितीय ने स्वयं नागपुर की ओर प्रस्थान किया । निश्चित ही उसे पूना की भावी राजनीतिक उथल-पुथल का आभास हो चुका था, क्योंकि पेशवा की मृत्यु नि:सन्तान हुई थी । स्वाभाविक था कि पेशवा पद के लिए कूटनीति एवं षडयंत्रों का सहारा लिया जाता जिसमें स्वयं नाना फड़नवीस भी सम्मिलित था ।

4· <u>गढ़ा मण्डला रघुजी भोंसला द्वितीय को दिया जाना</u> :-

पूना से यद्यपि रघुजी भोंसला द्वितीय को गढ़ा मण्डला की सनद प्रदान की गयी थी, किन्तु सिंधिया के प्रभाव के कारण उसके हस्तान्तरण के आदेश को रोक दिया गया ।[2]

उल्लेखनीय है कि गढ़ा मण्डला की सनदे पूर्व में भी कई बार भोंसला को प्रदान की गयी थी, परन्तु यह कार्यवाही मात्र कागजों पर ही होती रही । वस्तुत: प्रत्यक्ष रूप से इसे कभी भी क्रियान्वित नहीं किया गया ।

1· सरदेसाई· म·न·इ· 3, पृ· 316, श्री शुक्ल, इ·खं·, पृ· 116

2· जैंकिंस रिपोर्ट, पृ· 62

अत: पेशवा माधवराव की मृत्यु से उत्पन्न अव्यवस्था का पूर्ण लाभ रघुजी भोंसला द्वितीय उठा लेना चाहता था । वह नागपुर पहुंच कर नाना फड़नवीस से अपने संबंध मधुर बनाता रहा । नाना फड़नवीस ने भी जो कि पुना के षड़यंत्र एवं कुटनीति में उलझा हुआ था, रघुजी भोंसला द्वितीय की सेवायें प्राप्त की ।[1] दरअसल वह (नाना फड़नवीस) चाहता था कि पेशवा की विधवा यशोदाबाई गोद ले जिसे सभी मराठा सरदार मान्यता प्रदान करें । इस बीच अंग्रेज रेजीडेन्ट ने रघोबा के पुत्र बाजीराव द्वितीय को पेशवा पद के प्रतिद्वन्दी के रूप में खड़ा कर मराठों में फूट पैदा कर दी ।[2]

एक तर्क यह भी प्राप्त होता है कि नाना फड़नवीस की सलाह से पूर्व संधि के अनुसार ही रघुजी भोंसला द्वितीय ने होशंगाबाद और नर्मदा घाटी पर अपना अधिकार स्थापित करने के लिए विठ्ठल बल्लाल सुबेदार और बेनीसिंह के नेतृत्व में सेना भेजी, साथ में रघुनाथ राव घाटगे को भी सेना सहित उनकी सहायतार्थ भेजा । फलस्वरूप मार्च 1796 ई॰ में भोंसला की सेना ने होशंगाबाद पर अधिकार कर लिया ।[3]

होशंगाबाद को अपने राज्य में मिला कर रघुजी भोंसला द्वितीय ने गढा मण्डला के अभियान को अपनी कार्य प्रणाली में परिणित करने का प्रयत्न किया, परन्तु उसकी यह प्रगति अपेक्षाकृत कुछ कम थी । तत्पश्चात 1796 ई॰ के मध्य में गढा मण्डला पर अधिकार करने के लिए एक सेना भेजी गयी, जिसका नेतृत्व स्वयं विठ्ठल बल्लाल सुबेदार ने

1· ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ॰ 138

2· श्री शुक्ल॰, इ॰खं॰, पृ॰ 116

3· जैंकिंस रिपोर्ट, पृ॰ 62॰, शुक्ल प्र॰द॰, मध्य प्रदेश का इतिहास पृ॰ 143, काले ने इसे 1795 ई॰ लिखा है । देखिये, ना॰ भों॰ इ॰, पृ॰ 144

किया, परन्तु मण्डला पहुंच कर विठ्ठल बल्लाल को अपमान जनक निराशा का सामना करना पडा क्योंकि वहां बालाजी गोविन्द की ओर से नियुक्त सूबेदार गोरो विश्वनाथ डिंगनकर ने उसकी सेना को सहज ही पराजित कर गढ़ा मण्डला पर भोंसला का अधिकार स्थापित नहीं होने दिया ।[1]

इससे पूर्व कि रघुजी द्वितीय गढा मण्डला में मोरो विश्वनाथ के विरूद्ध कोई उचित कार्यवाही करता उसे पूना से बाजीराव द्वितीय के पेशवा पद ग्रहण करने के उपलक्ष में होने वाले समारोह (उत्सव) का निमंत्रण प्राप्त हुआ । दरअसल पूना की राजनीति में दौलतराव सिंधिया की चालें सार्थक हो चुकी थीं और उसी की सहायता से 5-6 दिसम्बर 1796 ई.[2] को बाजीराव द्वितीय ने पेशवा का पद ग्रहण किया ।[3] अत: गढा मण्डला को हस्तगत करने की कार्यवाही को स्थगित कर रघुजी भोंसला द्वितीय पूना गया ।[4] जहां मार्च 1797 ई. में नाना फडनवीस ने गढ़ा मण्डला के लिए उससे एक नवीन समझौता किया, जिसके अनुसार रघुजी भोंसला द्वितीय को 15 लाख रूपये नकद प्राप्त हुआ तथा

---

1. अंधारे भा.रा., संशोधन शिंपले, पृ. 122., इसके विपरीत गवर्नर जनरल को सूचित करते हुए पूना से मैलेट लिखता है "रघुजी ने गढा मण्डला को हस्तगत करने के लिए अतुल पंडित के नेतृत्व में सेना भेजी है ।" मैलेट के पत्र से विदित होता है कि यह घटना मध्यजनवरी 1796 ई. या उससे पूर्व की होनी चाहिए देखिये पी.आर.सी., द्वितीय, पं.क्र.281, दिनांक 18 जनवरी 1796 ई.
2. सरदेसाई., म.न.इ., 3, पृ.333
3. वि.सं.मं. वार्षिकी, 1982, पृ. 208
4. शुक्ल प्र.द., मध्य प्रदेश का इतिहास., पृ. 143, जेंकिंस रिपोर्ट, पृ. 62

गढा मण्डला प्रांत पर कब्जा करने के लिए अधिकार पत्र प्रदान किया गया परन्तु इसके बदले में रघुजी द्वितीय पेशवा को 26 लाख रुपया, चौरागढ का किला एवं 3 हजार घुडसवार प्रदान करेगा,[1] ऐसी संधि की गयी ।

उल्लेखनीय है कि इससे पूर्व सेना बहादुर चिमणाबापू को भी इन्हीं शर्तों पर गढ़ा मण्डला की सनद प्रदान की गयी थी जिसका उल्लेख पिछले अध्याय में किया जा चुका है ।

तथापि इस संधि में एक नवीनता यह थी कि पहले संधि में 3 हजार घुडसवार सदैव के लिए दिये जाने का उल्लेख किया गया था, किन्तु अब केवल महत्वपूर्ण एवं अत्यावश्यक कार्य के लिए [2] अर्थात केवल आपातकाल[3] के समय ही 3 हजार घुडसवार दिये जाने की शर्त निश्चित की गयी थी ।

अन्ततः 13 जुलाई 1797 ई॰ को पेशवा बाजीराव द्वितीय ने उक्त संधि को मान्यता प्रदान कर उसे क्रियान्वित करने का अधिकार दिया ।[4]

5· <u>रघुजी भोंसला द्वितीय का गढा, चौरागढ और मण्डला पर अधिकार</u>:-

गढा मण्डला के लिए बारम्बार सनद जारी कर उसे निरस्त करने की श्रृंखला में ही एक और कडी के रूप में 13 जुलाई को विधिवत जारी हुई नवीन सनद लेकर रघुजी भोंसला द्वितीय ने 17 जुलाई 1797 ई॰ को पूना से नागपुर के लिए प्रस्थान किया ।[5] अब तक अपने पूर्व अनुभव से

1· <u>ब्रिटिश रिलेशन्स</u>·, पृ· 138, <u>जेकिंस रिपोर्ट</u>, पृ· 62·, शुक्ल प्र·द· <u>मध्य प्रदेश का इतिहास</u>·, पृ· 143-44

2· काले या·मा·, ना·भों·इ·, पृ· 201

3· <u>ब्रिटिश रिलेशन्स</u>, पृ·138

4· काले या·मा·, ना·भों· इ·, पृ·201, वि·सं·मं· वार्षिक· 1982, पृ·208

5· अन्धारे भा·रा·, <u>संशोधन शिम्पले</u>, पृ· 122

वह यह विधिवत समझ चुका था कि गढ़ा मण्डला बिना उचित सैनिक कार्यवाही के प्राप्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि शांति पूर्वक गढ़ा मण्डला प्राप्त करने के सभी प्रयत्नों को बालाजी गोविन्द विफल कर चुका था। अतः उसने तुरन्त गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने की योजना बनायी।

जैसा कि पिछले अध्याय में लिखा जा चुका है कि सत्ता हाथ में आते ही रघुजी भोंसला द्वितीय ने गढ़ा मण्डला प्रान्त प्राप्त करने के लिए पूर्ण प्रयास किया। जिसके लिए उसने सेना भी भेजी, किन्तु दुर्भाग्य, समय की प्रतिकूलता एवं परिवर्तित होती हुई परिस्थितियोंवश उसे यह कार्य बीच में ही स्थगित करना पड़ा, परिणामस्वरूप सफलता रघुजी भोंसला द्वितीय से कोसों दूर हो गयी।

अब परिस्थितियां पुनः परिवर्तित होकर रघुजी भोंसला द्वितीय के पक्ष में हो चुकी थी और समय उसका इतिहास लिखने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके सौभाग्य से गढ़ा मण्डला में [illegible] सागर वालों के सूबेदार मोरो विश्वनाथ डिंगनकर की अक्तुबर-नवम्बर 1797 ई.[1] में मृत्यु हो गयी। इसके स्थान पर उसका पुत्र विश्वासराव डिंगनकर गढ़ा मण्डला का सूबेदार नियुक्त किया गया।

स्वाभाविक है रघुजी भोंसला द्वितीय इस अवसर का सदुपयोग करना चाहता था। अतः नागपुर पहुंच कर उसने तुरन्त पांडुरंग गणेश बक्शी और महादजी विश्वनाथ के अधीन गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करने के लिए एक सेना भेजी।[2] भोंसले की यह सेना लखनादौंड के मार्ग से अग्रसर हुई।[3]

---

1. लघाटे आर.के., गो.पुं.कै., पृ.36., डा. अन्धारे इसे नवम्बर मध्य मानते हैं। देखिये <u>संशोधन शिम्पले</u>, पृ. 122
2. डा. अन्धारे, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, भा.द्वितीय, पृ.125
3. वि.सं.मं. वार्षिकी, 1982, पृ. 208

तदनंतर विठ्ठल बल्लाल सुबेदार, सखाराम आवधूत, बेनीसिंह रघुनाथ राव बाजी घाटगे तथा मुहम्मद अमीन खां को अपनी सेना सहित पूर्व भेजी गयी सेना के सहयोग के लिए मण्डला की ओर रवाना किया गया।[1] सम्भवत: रघुजी भोंसले अतिशीघ्र गढा मण्डला पर अधिकार करना चाहता था।

इस अभियान में विठ्ठल बल्लाल सुबेदार को भेजने का प्रमुख उद्देश्य वहां व्यवस्था स्थापित करना था। जैसा रघुजी भोंसला द्वितीय के पत्रों[2] से विदित होता है कि शीघ्र ही विठ्ठल बल्लाल सुबेदार ने आंशिक सफलता प्राप्त की और गढा मण्डला प्रांत के कुछ क्षेत्रों पर शासन स्थापित किया।

एक अन्य पत्र से विदित होता है कि मण्डला के समीपवर्ती स्थानों

1· अन्धारे भा·रा·, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज़, पा·टिप्पणी पृ· 125 सं· कोलारकर श·गो·, रघुजी भोंसले दुसरे यांची पत्रें, प·क्र· 5, पृ· 38, सं· कोलारकर श· गो·, भवानी पंडिता ची बखर, पृ· 32

2· रघुजी भोंसले, प·क्र·5, पृ· 38·, प·क्र· 20,22, पृ· 52-55 प·क्र· 23, 24, पृ· 55-56.

पर पिंडारियों[1] का उपद्रव आरम्भ हो गया था । कुछ पिंडारी, सरदार काली खां और शेर खां के नेतृत्व में होशंगाबाद में उपद्रव एवं लूटमार कर रहे थे । सम्भवत: उनका इरादा मण्डला की ओर बढ़ना था । अत: विठ्ठल बल्लाल सूबेदार को विशेष रूप से मण्डला भेजा गया था ताकि वह शीघ्र ही वहां व्यवस्था कायम कर मण्डला प्रांत को पिंडारियों के विनास से सुरक्षित रख सके ।[2] भोंसला की विशाल सेना नर्मदा नदी पार कर गढ़ा की ओर अग्रसर हुई । जिसके आगमन की

1· पिंडारी प्रमुख रूप से अश्वारोही लुटेरे थे । मराठा शासकों के अधीन अवैतनिक सहायकों का एक दल होता था । ये रण समाप्त होने पर शत्रु के शिविर एवं सम्पत्ति पर अधिकार कर उसकी पुनरूत्थान शक्ति को समाप्त कर देते थे ﴾सर देसाई: म·न·इ·, 3, पृ· 498﴿ चूँकि इन्हें वेतन नहीं दिया जाता था, अत: इनसे यह अपेक्षा की जाती थीकि ये शत्रु प्रदेश की लूटमार करके अपना जीवन निर्वाह कर सकें । कालान्तर में मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात इनके दलों ने पूर्णत: डाकुओं का रूप धारण कर लिया । इनकी गतिविधियों से तात्कालिक मालवा, वरार, गोंडवाना, बुन्देलखण्ड तथा इनके पडोसी राज्य प्रभावित थे । ये प्रमुख रूप से होल्कर और सिंधिया के आश्रित थे । अमीर खां, करीम, चीतू आदि इनके प्रमुख नेता थे ।

2· रघुजी भोंसले·, प·क्र· 5, पृ· 38

सूचना प्राप्त कर विश्वास राव ने उनका प्रतिरोध किया । संभवत: अपने पिता की तरह वह भी गढ़ा मण्डला के अधिकार हस्तान्तरण के लिए कदापि तैयार न था । वह स्थानीय जमींदारों को एकत्र कर युद्द करने के लिए तत्पर हुआ । उसने पिठठल बल्लाल सूबेदार के पास अपना कर्मचारी भेजकर यह सूचना दी की वह वापस लौट जाये । परन्तु पिठठल बल्लाल सूबेदार इसके लिए तैयार न था । और न ही रघुजी भोंसला द्वितीय इसे सहन करता क्योंकि खर्डा के युद्द के पश्चात लगभग तीन वर्ष के दौरान रघुजी भोंसला द्वितीय की अपार धन राशि गढ़ा मण्डला के हस्तान्तरण की कार्यवाही पर व्यय हो चुकी थी ।[1]

इसी सन्दर्भ में रघुजी भोंसला द्वितीय ने बाजीराव द्वितीय एवं बालाजी गोविन्द को अलग-अलग पत्र लिखकर उनसे शीघ्र ही प्रांत के हस्तान्तरण का अनुरोध किया.।

इस तरह दिसम्बर 1798 ई॰ में मंडला के तात्कालीन सूबेदार विश्वासराव डिंगनकर ने अपनी सेना सहित कटंगी के निकट भोंसला की सेना का सामना किया ।[2] किन्तु युद्द के मैदान में अधिक समय तक उसकी सेना ठहर न सकी । परिणामत: विश्वासराव पराजित हुआ और भोंसला की सेना ने गढ़ा पर अधिकार कर लिया ।[3] वैसे भी अप्रशिक्षित एवं किराये के सैनिक केवल एक भीड़ ही सिद्द होते है । उनमें युद्द कौशल, साहस और बल का सर्वथा अभाव पाया जाता है । यही सत्य जमींदारों द्वारा इक्कठा की गयी विश्वासराव की सेना के साथ भी सार्थक हुआ । जिसके परिणाम स्वरूप पराजय उसके हाथ लगी ।

---

x घ
1· रघुजी भोंसले, प॰क्र॰ 23-24, पृ॰ 55-56

2· रघुजी भोंसले, प॰क्र॰ 20, पृ॰ 52

3· अन्धारे भा॰रा, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पृा॰द्वितीय, पृ॰125, रघुजी भोंसला, प॰क्र॰ 23-24, पृ॰ 55-56, जेकिंस रिपोर्ट,पृ॰62-63

यद्यपि इस बीच नाना फड़नवीस की ओर से आपाजी रघुनाथ, रघुजी भोंसला द्वितीय के पास भेजा गया था, परन्तु रघुजी ने उसे अपने कर्मचारियों के साथ सागर सागर वालों, (बालाजी गोविन्द, रघुनाथराव उर्फ आबा साहब एवं विनायक राव चान्दोरकर) के पास वार्तालाप द्वारा मध्यस्तता के लिए भेज दिया।[1] "जहाँ यह स्पष्ट किया जाना था कि उक्त प्रांत पर कब्जा दिये जाने में क्या परेशानी उत्पन्न हो रही है तथा उसके समाधान हेतु कौन सा प्रयत्न किया गया ?

गढ़ा पर अधिकार करने के साथ ही विठ्ठल बल्लाल की सैनिक गतिविधियाँ और तीव्र हो उठी। नर्मदा नदी के दक्षिणी प्रदेश पर कब्जा करने के पश्चात् व्यवस्था बनाये रखने की जिम्मेदारी वासुदेव जर्नादन एवं बगाजी भटवने को सौंपी गयी।

तदनंतर चौरागढ़ पर आक्रमण करने के लिए येशुजी विश्वनाथ पंतवने एवं गोविन्दराव त्रिम्बक को अपनी सेना सहित भेजा गया। बगाजी भटवने भी इनके साथ था। भोंसला की सेना ने चौरागढ़ के किले को घेर लिया परन्तु इससे पूर्व कि कोई निर्णयात्मक युद्ध होता, वहां के तात्कालिक जमींदार लक्ष्मण सिंह और उसका सहयोगी गरधाप सिंह[2] ने धोखे से गोविन्द राव त्रिम्बक एवं भटवने को बन्दी बना कर चौरागढ़ के किले में कैद कर दिया।

यह समाचार शीघ्र ही गढ़ा में विठ्ठल बल्लाल सूबेदार को प्राप्त

---

1. अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज॰, पा॰द्वितीय, पृ॰ 125, रघुजी भोंसला, प॰क्र॰ 23-24, पृ॰ 55-56, 52-53. जैंकिंस रिपोर्ट॰, पृ॰ 62-63

2. यह सम्भवत: गिरधर सिंह या गिरधारीसिंह होना चाहिए परन्तु उच्चारण दोषवश गरधापसिंह ही चला आ रहा होगा।

हुआ । अतः उसने तत्काल ही रघुनाथ राव बाजी घाटगे को एक विशाल सेना सहित चौरागढ़ पर आक्रमण करने के लिए रवाना किया । उसके चौरागढ़ पहुंचते ही[1] येशा जी विश्वनाथ, जो कि पहले से ही वहां अपनी सेना सहित उपस्थित था, उससे मिल गया । इनकी सम्मिलित सेनाओं ने सोमनाथ फड़नवीस की सहायता से चौरागढ़ के किले पर आक्रमण किया और आंशिक प्रतिरोध के उपरान्त ही फरवरी 1799 ई॰ में उस पर अधिकार कर लिया[2]। लक्ष्मण सिंह एवं गरधाप सिंह को बन्दी बना लिया गया तथा वणाजी भटवने एवं गोविन्द राव त्रिम्बक को मुक्त करा लिया गया ।[3] इस तरह फरवरी 1799 ई॰ में ही भौंसलें के सैन्य अधिकारी चौरागढ़ में अपना थाना स्थापित करने में सफल हुए ।[4]

1· डा॰ अन्धारे ने लिखा है कि भंवरगढ़ एवं शकरगढ़ लूटने के बाद उन्होंने चौरागढ़ पर आक्रमण किया जिनकी वास्तविक स्थिति ग्रन्थ में दर्शायी नहीं गयी है । सम्भव है गढ़ा एवं चौरागढ़ के मध्य कहीं उक्त स्थान हों, परन्तु इस समय उनकी वस्तुस्थिति ज्ञात नहीं है ।

2· रघुजी भौंसलें, प॰क्र॰ 20, पृ॰ 55॰, अन्धारे भा॰रा॰ बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰द्वितीय॰, पृ॰ 125-26 ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ॰ 138॰, शुक्ल प्र॰द॰, मध्य प्रदेश का इतिहास पृ॰ 144
जैंकिंस ने लिखा है कि फरवरी 1799 ई॰ तक चौरागढ़ पर अधिकार नहीं किया जा सका था । यह तथ्य सही नहीं है ﴾जैंकिंस रिपोर्ट पृ॰ 63﴿

3· अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰द्वितीय पृ॰ 126

4· रघुजी भौंसले,· प॰क्र॰ 22, पृ॰ 55

दूसरी तरफ विठ्ठल बल्लाल सुबेदार एवं बेनीसिंह ने गढा में भोंसला की चौकी स्थापित की । रघुनाथ राव बाणी घाटगे भी चौरागढ से वापस आकर उनसे मिल गया । अब विठ्ठल बल्लाल शीघ्र ही मण्डला पर भी अधिकार स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील हो उठा ।

यद्यपि चौरागढ पर विजय प्राप्त करने के साथ ही गढा मण्डला प्रांत के प्रमुख महत्वपूर्ण स्थानों पर रघुजी भोंसला द्वितीय का अधिकार स्थापित हो चुका था, तथापि मंण्डला पर अधिकार करना आवश्यक था, क्योंकि वह एक महत्वपूर्ण सैनिक केन्द्र एवं तात्कालीन राजधानी थी । अत: विठ्ठल बल्लाल सुबेदार ने अपना सम्पूर्ण ध्यान मण्डला की ओर केंद्रित किया । उसने रघुनाथ राव बाणी घाटगे, नारायण कृष्णाजी और शाम राव को स-लश्कर मण्डला पर अधिकार करने के लिए भेजा ।[1] सम्भवत: सखाराम अवधूत एवं तुकराम भी अपनी सेना सहित इस अभियान में संलग्न थे ।[2]

इसके साथ गवर्नर जनरल को लिखा गया एच· कोलब्रुक[3] के पत्र से विदित होता है कि गढा मण्डला प्राप्त करने में भोंसला के सहायतार्थ अंग्रेजों ने भी अपनी सेना की एक टुकडी को मण्डला रवाना किया था । जिसमें लगभग दो हजार पैदल सैनिकों के अतिरिक्त कई छोटी-छोटी तोपों से युक्त एक तोपखाना भी था ।[4] सम्भवत: यह कदम नागपुर के राजा

1· वि·सं·म· वार्षिकी, 1982, पृ· 209

2· रघुजी भोंसले·, प·क्र· 20, 21 और 22·, पृ· 52-55, कोलारकर श· गो·, भ·पं· ब·, पृ· 32

3· नागपुर में अंग्रेज प्रतिनिधि । गवर्नर जनरल रिचर्ड वेलेस्ली द्वारा नियुक्त, 18 मार्च 1799 ई· को नागपुर पहुंचा

4· सिन्हा उच·एन·, सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्डस वा· प्रथम·, प·क्र· 4, दि· 1·10·1799, पृ· 14

और अंग्रेजों में हुई संधि[1] के अनुसार उठाया गया था ।

वस्तुत: भोंसला की सेना ने नवम्बर 1799 ई॰ में मण्डला जिले पर आक्रमण कर दिया और एक साधारण से प्रतिरोध के पश्चात भोंसला की सेना ने 20 नवम्बर 1799 ई॰ को किले पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया ।[2]

यद्यपि रघुजी भोंसला द्वितीय के सैन्य अधिकारियों ने मण्डला पर कब्जा कर लिया तथापि अभी तक सतार प्रमुख बालाजी गोविन्द एवं रघुनाथ राव आबा साहब की ओर से रघुजी भोंसला द्वितीय को वैधानिक रूप से इस अधिकार की मान्यता प्राप्त नहीं हुई थी ।

संयोगवश उसी समय अक्तूबर-नवम्बर 1799 ई॰ में अमीर खां पठान[3] ने सागर पर आक्रमण कर दिया। वह पिंडारियों के एक दल का नेता था । पिंडारियों के संबंध में आगामी अध्याय में विशेष लिखा जायेगा । अमीर खां की गतिविधियां अत्यन्त विनाशक थी । उसकी तहस-नहस की विध्वंसक कार्यवाहियों से मुक्त होना कठिन जानकर रघुनाथ राव ने बलवंत राव घोडदेव पालसिकर को गढा भेज कर विठ्ठल बल्लाल सूबेदार एवं बेनीसिंह से सहायता की अपील की ।[4] विठ्ठल बल्लाल एवं

1· 6 अप्रैल 1781 ई॰ को अंतिम रूप से मान्य तत्कालीन गर्वनर जनरल वारेन हेस्टिंग्स एवं मुधोजी भोंसला के मध्य

2· रघुजी भोंसले॰, प॰क्र॰ 20,21,22॰ पृ॰ 52-55, अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰द्वितीय, पृ॰ 126, ब्रिटिश रिलेशन्स पृ॰ 139, कोलारकर श॰गो॰, भ॰पं॰बे॰, पृ॰ 32, वि॰सं॰म॰वार्षिकी, 1982 पृ॰ 209

3· यशवंत राव होल्कर का कर्मचारी, जिसका प्रमुख कार्य पडोसी राज्यों पर आक्रमण कर लूट-पाट करना तथा उसका एक अंश होलकर को प्रदान करना था । कालान्तर में अंग्रेजों की दया से टोंक में अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर नवाब बना ।

4· तिवारी गो॰ला॰, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ॰ 267, डा॰ अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰ पृ॰126

एवं बेनी सिंह के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर था जबकि वह सागर वालों से अपनी मांग स्वीकार करवा सकते थे । बलवंत राव धोडदेव पालसिकर के प्रयासों से भोंसला के अधिकारियों ने चौरागढ एवं मण्डला पर पूर्ण वैधानिक अधिकार दिये जाने की शर्त के साथ उसे अमीर खां पठान के विरुद्ध मदद करना स्वीकार कर लिया । परिस्थितियों की नाजुकता को देखते हुए सागर स्थित पेशवा के अधिकारी ने उनकी यह शर्त स्वीकार करते हुए नवम्बर 1799 ई॰ में गढ़ा, चौरागढ़ और मण्डला पर रघुजी भोंसला द्वितीय के अधिकार को पूर्ण रूपेण मान्यता प्रदान की ।[1]

इस प्रकार अथक प्रयास कर रघुजी भोंसला द्वितीय ने गढा मण्डला पर अपना आधिपत्य स्थापित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की ।

6– सागर पर अमीर खां का आक्रमण एवं विफलता :-

जैसा कि गत पृष्ठ पर उल्लेख किया जा चुका है कि 1799 ई॰ के उत्तरार्द्ध में अमीर खां पठान ने सागर पर आक्रमण कर दिया ।

समझा जाता है कि अमीर खां के इस आक्रमण का प्रमुख कारण होल्कर का पेशवा से हुआ झगड़ा है । सम्भवत: सागर को अपने अधीन करने का एक उचित अवसर देख कर ही होल्कर ने अमीर खां को भेजा हो ।[2] क्योंकि अमीर खां उसका एक कर्मचारी था तथापि यह अधिक विश्वसनीय है कि अमीर खां स्वयं एक महत्त्वाकांक्षी पुरूष था जिसके फलस्वरूप ही आगे चल कर टोंक राज्य का नवाब बनने में सफल हुआ ।

1॰ अन्धारे भा॰रा॰, बन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰द्वितीय, पृ॰ 126, [illegible] रिपोर्ट पृ॰ 62–63, रघुजी भोंसले, प॰क्र॰ 20–22, पृ॰ 52–55, ब्रिटिश रिलेशन्स पृ॰ 138–39, गुप्ते॰, नागपुरकर भोंसलांची बखर, पृ॰ 191–93, काले॰या॰मा॰, ना॰भों॰इ॰पृ॰201–2, सिन्हा॰, ना॰रे॰रि॰ ना॰प्रथम॰, पृ॰238, पी॰आर॰सी॰, वा॰5, प॰29॰, पृ॰42–43

2॰ तिवारी गो॰ला॰, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ॰ 267

वस्तुत: विदिशा और सिरोंज को नष्ट करती हुई अमीर खां की सेना ने सागर पर आक्रमण किया ।[1] उसने सागर के किले को घेर लिया उस समय वहां केवल विनायक राव चान्दोरकर किले की सुरक्षा हेतु नियुक्त था । सागर प्रमुख रघुनाथ राव उर्फ आबा साहब काल्पी में अपने अस्वस्थ्य पिता बालाजी गोविन्द खेर के पास था । सागर में विनायक राव चान्दोरकर की सेना ने अमीर खां के आक्रमण का प्रतिरोध किया । परन्तु उन्हें पिंडारियों को पराजित करने में सफलता प्राप्त न हो सकी । इस कार्यवाही में विनायक राव के प्रमुख सहायोगी लक्ष्मण कृष्ण मजूमदार शिवदेव बच्चादि सहित अनेक सैनिक घायल हुए तथा कुल 4 या 5 सौ सैनिकों एवं नागरिकों ने वीरगति प्राप्त की ।[2] पिंडारियों ने सागर एवं उसके आस पास के गांवों को लूटना एवं आग लगाना आरम्भ कर दिया[3] लगभग एक माह तक सागर शहर में पिंडारियों की लूट एवं विध्वंश का बर्बर तांडव होता रहा । सम्भवत: अत्याचार, अपमान, क्रूरता और विध्वंश की ऐसी घटना सागरमें पुन: कभी नहीं हुई होगी ।

मालकम ने अपने इतिहास ग्रन्थ[4] में प्रत्यक्षदर्शी किसी ख्याली राम के संस्मरण का उल्लेख किया है । जिससे यह विदित होता है कि पिंडारी

1· अन्धारे भा·रा·, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा·द्वितीय पृ· 126

2· लघाटे आर·के·, गो·बु·कै·, पृ· 26, सागर जि·ग·, 1970, पृ· 60, तिवारी गो·ला·, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ· 267

3· मालकम, ए मेमायर आफ दि सैंट्रल इंडिया, वा·प्रथम, पृ·207-08 लघाटे आर·के·, गां·बुं· कै·, पृ· 26·, रघुजी भोंसले·, प·कृ· 20,21,22, पृ· 52-55

4· ए मेमायर आफ दि सैंट्रल इंडिया· वा·प्रथम, पृ· 207-08

लूट के पश्चात उस मकान को आग लगा देते थे इस तरह आग कीलपटें लगभग प्रतिदिन ही शहर में एक किनारे से दूसरे किनारे तक प्रज्वलित होती रहती थी । इतना ही नहीं लूट और विध्वंश के अंतिम चरण में कुओं एवं तालाबों की भी तलाशी ली जाने लगी । निःसन्देह पिंडारियों के अपमान, अत्याचार एवं क्रूरता की बर्बरता से सागर के लगभग प्रत्येक स्त्री-पुरूष प्रभावित हुए थे ।

वह (मालकम) आगे लिखता है कि पिंडारी लोग किसी उच्च जाति के व्यक्ति को पकड़ कर उसकी त्वचा एवं सिर को स्पर्श करके उक्त व्यक्ति की सुकुमारता एवं कोमलता से यह ज्ञात करते थे कि वह कितना अमीर या गरीब है और उसी के अनुसार उसके साथ अत्याचार करते थे ।[1]

सम्भवतः अमीर खां लूट के अतिरिक्त अपने आदमियों द्वारा की रही बर्बरता एवं अत्याचार से सहमत नहीं था । स्वाभाविक था इससे अमीर खां जैसे महत्वाकांक्षी व्यक्ति के ख्याति की हानि हो रही होगी अतः उसने इस कुकृत्य को रोकने का प्रयत्न किया, परन्तु शायद उसके ही अधिनस्थों ने उसके आदेश की अवहेलना कर उसकी पूर्व हीन स्थिति का आभास कराते हुए उसे चेतावनी दी । फलस्वरूप उसे पूर्णतः असम्मानजनक कृत्य को भी एक मूक दर्शक की भांति सहन करना पड़ा ।[2]

अमीर खां की इस विध्वंसक कार्यवाही की सूचना पाते ही बालाजी

1· ए मेमायर आफ दि सेंट्रल इंडिया·, वा·प्रथम, पृ· 207-08

2· सागर जि·ग·, 1970, पृ· 60

गोविन्द खेर ने अपने पुत्र रघुनाथ राव को सेना सहित विनायक राव चान्दोरकर की सहायता के लिए सागर रवाना किया। सागर के समीप पहुंच कर # रघुनाथराव को पिंडारियों की विशालता की जानकारी मिली। अत: विवश होकर उसने बलवंत घोडदेव पालीसकर को, विठ्ठल बल्लाल सूबेदार एवं बेनी सिंह के पास खता भेज कर सहायता मांगी।[1]

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि रघुजी भोंसला द्वितीय के इस कुशल अधिकारियों ने सागर वालों की याचना स्वीकार करने के बदले में चौरागढ और मण्डला पर पूर्ण रूप से अपने आधिपत्य की मान्यता प्राप्त की। इसके साथ ही सागर वालोंने उन्हें तीन लाख रूपये कर के रूप में देने का वचन दिया।[2] इस बीच विठ्ठल बल्लाल सूबेदार ने सागर वालों की सहायता के लिए रघुजी भोंसला द्वितीय से अनुमति मांगी।[3]

वस्तुत: रघुजी भोंसला द्वितीय की अनुमति प्राप्त होते ही तुरन्त विठ्ठल बल्लाल, बेनी सिंह, रघुनाथ राव बाजी घाटगे एवं मुहम्मद अमीन खां (सिवनी छपारा का नवाब) ने एक विशाल सेना लेकर अमीर खां के विरूद्ध सागर की ओर प्रस्थान किया। भोंसले की सेना के आगमन का

1· तिवारी गो·ला·, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ· 267, अन्धारे भा·रा·, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा·द्वितीय, पृ· 126

2· मालकम, मेमायर आफ दि सेन्ट्रल इंडिया, वा·प्रथम, पृ· 209, अन्धारे भा·रा·, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा·द्वितीय, पृ· 126

3· रघुजी भोंसला, प·क्र· 20,21,22, पृ· 52-55

समाचार पाकर पिंडारी लोग सागर से भाग गये ।[1] इस अभियान में रघुनाथराव बाजी घाटगे ने अदम्य शौर्य का परिचय दिया था जिससे रघुजी भोंसला द्वितीय बहुत प्रसन्न हुआ ।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि पिंडारियों ने सागर के समीप ही अपना शिविर लगाया होगा क्योंकि 28 नवम्बर 1799 ई॰ को ही सागर से लगभग 4 कोस पर स्थित भोंसला की सेना के शिविर पर अचानक ही अमीर खां पिंडारी ने आक्रमण कर दिया । यह आक्रमण दो तरफ से भोंसला सेना के शिविर पर किया गया था, परन्तु रघुनाथ राव बाजी घाटगे एवं बेनी सिंह की सतर्कता और साहस के कारण भोंसला की सेना ने पिंडारी आक्रमण को विफल कर दिया ।

यद्यपि उस समय घमासान युद्ध हुआ और इस युद्ध में भोंसला की सेना को हानि उठानी पडी । अनुमानत: 70 प्रमुख व्यक्ति मारे गये तथा बहुत से सैनिक घायल हुए तथापि पिंडारियों को अत्यधिक हानि का सामना करना पडा । उनके लगभग एक हजार व्यक्ति मारे गये एवं घायल हुए तथा बहुत अधिक सामग्री से हाथ धोना पडा ।[3] अमीर खां पराजित होकर शेष पिंडारियों सहित भाग गया ।

सागर से भाग कर पिंडारी राहतगढ पहुंचे और अपनी विध्वंसक कार्यवाही आरम्भ कर दी, परन्तु शीघ्र ही राहतगढ के तत्कालीन सूबेदार मुहम्मद खां ने उन्हें 5 हजार रुपये देकर संकट टाल दिया ।[4]

1· सागर जि॰ग॰, 1970, पृ॰60, अन्धारे भा॰रा॰, बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज, पा॰ द्वितीय, पृ॰ 126, सिन्हा, ना॰रे॰रि॰, वा॰प्रथम पृ॰ 239, काले या॰मा॰, ना॰भो॰ई॰, पृ॰ 25।

2· वही

3· सिंहा, ना॰रे॰रि॰, वा॰ प्रथम॰, पृ॰ 239, रघुजी भोंसले, प॰क्र॰ 20, 21, 22॰ पृ॰ 52-55

4· सागर जि॰ग॰, 1970, प॰ 60, दमोह जि॰ग॰, 1980, पृ॰ 53, मालकम मेमायर आफ दि सेंट्रल इंडिया, वा॰प्रथम, पृ॰ 211-12, गुप्ते का वि॰ना॰ भो॰ ब॰ पृ॰ 193-94

नि:सन्देह सागर में अमीर खां पर विजय प्राप्त करने से एक तरफ रघुजी भोंसला द्वितीय को जहां सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त हुई, वहीं दूसरी तरफ सागर वालों ने सन्तोष की सांस ली और रघु नाथ राव पुन: सागर में व्यवस्था बनाने में संलग्न हो गया और 1801 ई॰ तक निर्विघ्न रूप से शासन संचालन करता रहा ।

1801 ई में रघुनाथ राव की मृत्यु हो गयी । अपने पीछे वह मात्र अपनी दो पत्नियों राधाबाई एवं रूक्मन बाई को विधवा का चोला पहना कर छोड गया । अब सागर का प्रशासन संचालन उसके प्रतिनिधि विनायक राव की देख रेख में सम्पन्न होने लगा । कालान्तर में रघुनाथ राव की विधवा ने बलवन्त राव को गोद लेकर अपना पुत्र बनाया । बलवन्त राव सागर के राजा की उपाधि लेकर जबलपुर में ही बस गया ।[1]

7· तेजगढ और धमौनी पर अधिकार :

ऐसा प्रतीत होता है कि रघुजी भोंसला द्वितीय पहले से ही तेजगढ प्राप्त करने का अभिलाषी था । सम्भवत: इसीलिए अमीर खां पिंडारी के विरूद्ध रघुनाथ राव की सहायता करने के अवसर पर भोंसला के प्रमुख सैनिक अधिकारियों ने तेजगढ की मांग की थी ।[2] यह सागर से लगभग 188 कि॰ मी॰ पूर्व में मुरैना नदी के तट पर स्थित है तथा 1799 ई॰ में सागर प्रशॉसन के अधीन एक सुदृढ किला था ।

सम्भवत: इस किले का निर्माण सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में तेजसिंह लोधी ने मिटटी एवं कंकड [रोडी] से बनवाया था ।[3] 18वीं शताब्दी

1· सागर जि॰ग॰, 1967, पृ॰ 59-60

2· गुप्ते॰, ना॰भों॰ब॰, पृ॰ 139, मालकम, मेमायर आफ दि सेन्ट्रल इंडिया, वा॰ प्रथम, पृ॰209

3· दमोह जि॰ ग॰, 1980, पृ॰ 468

में यह एक प्रमुख सैनिक केन्द्र तथा अभेद्य किला समझा जाता था । इस तरह तात्कालीन परिस्थितियों में तेजगढ़ का महत्व अत्यन्त बढ़ गया था । अतः रघुजी भोंसला द्वितीय का उसकी ओर आकर्षित होना भी स्वाभाविक ही था ।

अन्ततः अमीर खां पिंडारी के विरूद्ध सागर के प्रशासक को सहायता पहुंचाने के फलस्वरूप रघुनाथ राव ने किला सहित परगना तेजगढ़ रघुजी भोंसला द्वितीय को समर्पित कर दिया ।[1]

इसी प्रकार धमौनी सागर से लगभग 22 कि॰मी॰ उत्तर में स्थित एक मजबूत किला एवं परगना था । तेजगढ़ की तरह धमौनी का भी अपना एक विशेष इतिहास एवं महत्त्व रहा है, क्योंकि उसने अपने इतिहासकाल में अनेक चढ़ाव-उतार देखा है ।

कहा जाता है कि गढ़ा मण्डला के गोंड राज्य के वंशज सूरजशाह ने यहां किला बनवाया था । उस समय धमौनी परगना के अधीन कुल 750 मौजा थे ।

धमौनी का उल्लेख आईन-इ-अकबरी में सूबा मालवा सरकार रायसेन के अधीन एक महाल के रूप में किया गया है ।[2] कालान्तर में ओरछा के राजा वीरसिंह देव (1605-27) ने आक्रमण कर धमौनी को अपने राज्य में मिला लिया था । उसके पश्चात उसने किले का पुनर्निमाण करवाया, परन्तु जुझार सिंह के शासन काल में धमौनी

---

1. पी॰आर॰सी॰, वा॰5॰, प॰क्र॰ 30, पृ 43, तिवारी गो॰ला॰, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास॰, पृ॰ 268, ब्रिटिश रिलेशन्स पृ॰ 138, शुक्ल प्र॰द॰, मध्य प्रदेश का इतिहास॰, पृ॰ 144 जैंकिंस रिपोर्ट॰, पृ॰ 63
2. सागर जि॰ग॰, 1967, पृ॰ 527

मुगल शासन के अधीन चला गया । कुछ वर्षों तक धमौनी और उसके आस पास का प्रदेश चम्पतराय बुन्देला और उसके पुत्र छत्रसाल बुन्देला की आक्रामक गतिविधियों से पीड़ित रहा, जिन्होंने कईबार धमौनी और उसके समीपवर्ती राज्य को लूटा ।[1] इनके पश्चात धमौनी के किले ने अनेक स्थानीय फौजदारों का सामना किया ।

इस बीच धमौनी बुन्देलों से लोधी राजपूत के अधीन हो गया था । परन्तु बुन्देलखण्ड एवं मण्डला पर अपना अधिकार स्थापित करते समय सागर स्थित पेशवा के प्रतिनिधि ने धमौनी को अपने अधीन कर लिया था ।

अन्ततः 1799 ई॰ में ही तेज गढ की तरह धमौनी भी रघुजी भोंसला द्वितीय को दे दिया गया ।[2]

निःसन्देह अमीर खां पिंडारी के विरूद्ध रघुनाथ राय उर्फ आबा साहब की सहायता करने के फलस्वरूप तेजगढ, धमौनी एवं उसके आस-पास के क्षेत्र सहज ही रघुजी भोंसला द्वितीय को प्राप्त हो गये ।

तदोपरान्त गढा मण्डला प्रान्त में उचित व्यवस्था स्थापित

1• श्रीवास्तव भ॰दा॰ एवं खरे॰, बुन्देलों का इतिहास, पृ॰ 43, 69

2• ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ॰ 138-39, जैंकिंस रिपोर्ट, पृ॰ 63 सागर जि॰ग॰, 1967, पृ॰ 528

करने के लिए रघुजी भोंसला द्वितीय ने रघुनाथ राव बाजी घाटगे को सूबेदार नियुक्त किया । वाह्य आक्रमण एवं आंतरिक विद्रोह से सुरक्षा के लिए स्थायी रूप से वहां सेना रखी गयी, उसके साथ ही निर्विघ्न प्रशासन संचालक हेतु मण्डला में जरी पटका इत्यादि राजचिन्ह स्थापित किये गये ।[1] रघुनाथ राव घाटगे ने जबलपुर को अपना मुख्यालय बनाया ।

इस तरह 1799 ई॰ के अन्त तक तेजगढ और धमौनी सहित सम्पूर्ण गढा मण्डला राज्य पर रघुजी भोंसला द्वितीय का अधिकार हो गया और इसी के साथ गढा मण्डला प्राप्त करने की लगभग अर्द्ध शताब्दी से चली आ रही भोंसला की अभिलाषा भी पूर्ण हुई ।

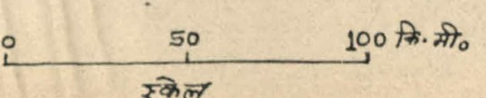
=:: o : o : o ::=

1॰ काले॰ या॰मा॰, ना॰भो॰इ॰, पृ॰ 251.

गढ़ा मण्डला राज्य 1800 ई.

उ.

संकेत





वर्तमान मध्य प्रदेश में गढ़ा मण्डला राज्य की स्थिति.

अध्याय 6

अध्याय - 6 पिन्डारी धावे

पिण्डारी घटनायें गढ़ा मण्डला के इतिहास की एक प्रमुख श्रृंखला के रूप में संलग्न है । नि: सन्देह पिण्डारियों के आक्रमणों से सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला राज्य वर्षों तक त्रसित रहा, इतना ही नहीं पिण्डारियों का दमन करने में ही भोंसला शासकों को अपार धन एवं प्रतिष्ठा से वंचित होना पड़ा

1· पिन्डारियों की उत्पत्ति :-

इतिहास में पिण्डारियों की उत्पत्ति की वास्तविकता अन्धकारमय है । ऐसा समझा जाता है कि पिण्डारी शब्द की व्युत्पत्ति मराठी शब्द "पिण्डपणी" या "पेंढा" अथवा "पेंढार" से हुई है, जिसका अर्थ है तबाही फैलाने वाले हत्यारे या खाना बदोश अथवा धुमक्कड़ों का समूह जो नियमित सेनाओं बुंगा या बाजार बुंगा के समानार्थक है । सरदेसाई इसे नकारते हुए पिन्डारियों को मराठा शक्ति के उदय की एक प्रमुख कड़ी कहा है । उनके दृष्टिकोण में यह लुटेरा अश्वारोही दल समस्त भारतीय सेनाओं को सहायता पहुंचाता था[1]।

यद्यपि यहां समस्त भारतीय सेनाओं के सन्दर्भ में सरदेसाई का यह तर्क पूर्णत: संगत प्रतीत नहीं होता है क्योंकि पिन्डारियों द्वारा समस्त भारतीय सेनाओं को सहायता पहुंचाना तो दूर रहा वरन् समय-समय पर भोंसला, निजाम और स्वयं पेशवा को भी उनकी क्रूरता एवं आक्रामक गीतिविधियों का सामना करना पड़ा और वे सदैव पिन्डारियों के उन्मूलन हेतु प्रयत्नशील रहे, इनके साथ ही पिण्डारियों के संरक्षक होल्कर एवं सिंधिया भी एक-दूसरे के पिंडारियों की लूटमार से प्रभावित होते रहे, तथापि उनके इस सत्य को भी झुंठलाया नहीं जा सकता है कि पिण्डारियों का वास्तविक इतिहास शायद अभी तक लिखा ही नहीं गया है और उनसे सम्बन्धित जो विवरण तात्कालिक अंग्रेजी ग्रन्थों में प्राप्त होते है

1· सरदेसाई, म·न·इ·, 3,पृ· 498.

उनमें स्वाभाविक पक्षपात का समावेश होता है । निः सन्देह कालान्तर में पिण्डारियों की जघन्य अपराधिक कार्य प्रणालियों के कारण ही उन्हें समाज का शत्रु मानकर उनके सर्वनाश की व्यवस्था की गयी । इस तरह उनके सत्कर्म का पक्ष सदैव के लिए गौण हो गया । बहुत सम्भव है कि एक समय में पिन्डारी मराठों द्वारा विकसित युद्ध प्रणाली के सुलभ और आवश्यक अंग रहे हों, जैसा कि अपने आतंक के दिनों में भी पिण्डारी होल्कर और सिंधियाशाही झंडो तले ही धावे बोलते थे ।

मराठी विवरणों से विदित होता है कि शिवाजी तथा संताजी घोरपडे के समय से ही स्थानीय शासकों की निश्चित सेना से सम्बन्धित अवैतनिक सहायकों का एक वर्ग विशेष होता था, जिसका कार्य युद्ध समाप्त होने पर युद्ध स्थल में प्रवेशकर शत्रु के शिविर तथा सम्पत्ति पर अधिकार करके उसके पुनरूत्थान शक्ति को नष्ट कर देना था । इस तरह शत्रु का सर्वनाश हो जाता था । पहले ही लिखा जा चुका है कि इस कार्य के लिए उन्हें किसी प्रकार का वेतन नहीं दिया जाता था । अतः उनसे यह अपेक्षा की जाती थी कि वे शत्रु प्रदेश की लूटमार करके अपना निर्वाह कर लेवें[1]। सम्भवतः तब पिण्डारी जघन्य अपराधी नहीं माने जाते थे ।

दूसरी तरफ मालकम ने पिण्डारियों का सम्बन्ध "पिण्डा" नामक नशीली शराब से जोडने का प्रयत्न किया है । वह लिखता है कि "पिण्डा" पीने वाला सम्पूर्ण समुदाय ही नशे में अन्धा होकर लूटमार एवं हत्यायें करने निकल पडता था[2]। इसी सन्दर्भ में पंडित प्रयागदत्त शुक्ल ने लिखा है कि मुगल साम्राज्य के नष्ट होते ही डाकुओं के बडे-बडे दल तैयार हो गये थे, ये लोग पिन्डारी कहलाते थे । इनका मुख्य कार्य लूटमार करके गांवों को उजाड देना था[3]।

1• सरदेसाई ; म॰न॰इ॰, 3,पृ॰ 498

2• धर्मयुग, 6 फरवरी 1983, पृ॰ 31

3• शुक्ल प्र॰द, मध्यप्रदेश का इतिहास, पृ॰ 144

वास्तव में इतिहास के मटमैले पन्नों पर सर्वप्रथम 1689 ई0 में मुगल-मराठा युद्ध के समय पिन्डारियों का उल्लेख हमें प्राप्त होता है· जब दक्षिण में हो रहे विद्रोह का दमन करने के लिए औरंगजेब ने अपने सिपहसालार जुल्फिकार खां को भेजा था तब तीन हजार रुहेलों ने बीजापुर को नष्ट करते हुए जुल्फिकार खां का सामना किया था[1] तथा प्रमुख मराठा सरदार प्रहलाद नीराजी, शंकर जी मल्हार, संताजी घोरपडे एवं धनाजी जादव की सेवा में मुगल प्रदेश पर धावा बोलकर उसे लूटना एवं जलाना आरम्भ कर दिया था[2], तब निः सन्देह उनकी प्रमुख भावना मुगल सत्ता को दक्षिण से उखाड फैंकना एवं दक्षिण में हिन्दू स्वतंत्र सत्ता की स्थापना करना था । उनके इस संघर्ष में दक्षिण ही औरंगजेब की कब्र बन गयी और यहीं से पिन्डारियों का उदय हुआ । कालान्तर में पेशवा बाजीराव प्रथम ने भी अपनी सेना में अनियमित घुड़सवारों के रूप में पिन्डारियों का उपयोग किया था[3]।

2· पिन्डारियों का प्रसार :-

1722 ई0 तक पिण्डारी पूर्णतः नर्मदा की घाटी में अपना स्थान बना चुके थे । अब तक पेशवा बाजीराव प्रथम के अतिरिक्त होल्कर सिंधिया और पवार भी पिण्डारियों की गतिविधियों की ओर आकर्षित हो चुके थे, फलस्वरूप उनके सैन्य शिविरो में भी पिन्डारी दलों का समावेश होने लगा था[4]।

कालान्तर में मराठा शक्तियों की अव्यवस्था वश पिन्डारी

1· धर्मयुग ; 6 फरवरी 1983, पृ· 30, लेख डा· कैलाश नारद

2· श्रीवास्तव आ·ला·, मुगल कालीन भारत, पृ· 423

3· शर्मा एल·पी·, आधुनिक भारत, पृ· 187

4· सरदेसाई , म·न·इ·, 3, पृ· 498

धर्मयुग, 6 फरवरी 1983 पृ· 30

दलों में अपराधिक प्रवृत्तियां बढने लगीं । यह पिण्डारियों का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि कभी मराठों की सेवा के सहायक समझे जाने वाले ये लोग अब लूटमार एवं हत्यायें जैसी पाशविक प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होने लगे थे ।

इसका एक प्रमुख कारण वेलेजली के समय मराठा युद्ध शैली के भंग होने एवं "सहायक संधि"[1] के फलस्वरूप उत्पन्न हुई अराजकता, बेरोजगारी एवं भुखमरी ने उनकी संख्या में वृद्धि करते हुए उनके कार्यों एवं प्रवृत्तियों को और अधिक जटिल बना दिया । तब वे समस्त सैनिक जिन्हें कोई कार्य नहीं मिला वे लोग पिण्डारी दलों में सम्मिलित हो गये थे । वे लोग भी उनके साथ हो गये, जिनका कोई पेशा या व्यवसाय नहीं था । अत: दिन प्रतिदिन पिन्डारी दलों की शक्तियां एवं संख्या बढती चली गयी और शनै:-शनै: अलग अलग दलों में विभाजित होते चले गये । उनमें पठान, जाट, रुहेले बाबरिया, गुरंद और गोंसाई आदि थे[2]।

1· वेलेजली 1798 ई· से 1805 ई· तक भारत का गर्वनर जनरल रहा था । उल्लेखनीय है कि उसने अपनी साम्राज्यवादी नीति को और अधिक प्रसारित करते हुए अनेक भारतीय नरेशों से (1798 ई· से 1804 ई· तक हैदराबाद के निजाम, पेशवा, भोंसला, कर्नाटक एवं अवध के नबाब एवं अन्य मराठा राजाओं (सरदारों) के साथ) समय-समय पर संधियां की । जो "सहायक संधि के नाम से विख्यात है । संधियों की एक प्रमुख शर्त यह भी थी कि वह (वेलेजली) भारतीय नरेशों को इन से प्रदान करेगा उसके बदले में उनसे एक निश्चित भू भाग प्राप्त करेगा जो सहयोग सहित एक अंग्रेज रेजीडेन्ट उक्त भारतीय नरेश के पास रहेगा, और अंग्रेजी सेना रतीय नरेश को वहन करना पडेगा । इस संधि के फलस्वरूप जिनका व्यय स्वयं भ सेना में कमी करनी पडी थी, इसी के साथ ही भारतीय नरेशों को अपनी ना पडा था तथा भारतीय नरेश की शक्ति सीमित अनेक सैनिकों को बेरोजगार हो हो गयी थी ।

2· धर्मयुग, 6 फरवरी 1983, पृ· 3।

1761 ई0 में पानीपत के तृतीय युद्ध के अस्थिर काल में नर्मदा के उत्तरी प्रदेश में पेशवा एवं अन्य मराठा सरदारों की शक्ति क्षीण होने लगी थी । फलस्वरूप मालवा पिण्डारियों का प्रमुख शरण स्थल हो गया था । अब होल्कर एवं सिंधिया उनके संरक्षक हो गये । पिन्डारियों को लूटमार और हत्यायें करने के लिए होल्कर और सिंधिया द्वारा भी प्रोत्साहित किया जाता था तथा पिन्डारियों द्वारा लूट में मिले माल का एक हिस्सा उन्हें दिया जाता था । कालान्तर में जैसे जैसे मराठा शक्तियों का ह्रास होता गया, पिण्डारी अधिकतम स्वतंत्र होते चले गये ।

पिण्डारियों का स्थायी स्वामी नहीं हुआ । उनका कोई कानून भी नहीं था । समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार वे अपना कानून बना लेते थे । अधिकांशत: वे अपनी इच्छा के मालिक होते थे । आगजनी, लूटमार और हत्यायें करते हुए गांव गांव घूमना ही उनकी जिन्दगी का मकसद बन चुका था[1]। आगे चलकर मालवा एवं बुन्देलखण्ड से ही पिण्डारियों का संचालन होने लगा । समस्त पड़ोसी राज्यों में उनके धावों, लूटमार, बलात्कार के अत्याचार एवं आगजनी के सर्वनाश से हाहाकार मच गया । लार्ड हेस्टिंग्स[2] के आगमन 1813 ई॰ तक सम्पूर्ण मध्य भारत के राज्य पिण्डारियों के अत्याचारों से त्रसित हो चुके थे ।

नागपुर और उसका अधीनस्थ राज्य गढ़ा मण्डला पिण्डारियों के आक्रमणों से सर्वाधिक प्रभावित हुए । यहां 1798 ई0 से ही पिन्डारियों के आक्रमण का क्रम आरम्भ हो गया था । रहमतखां पिण्डारी ने इसी वर्ष भोंसला की राजधानी नागपुर को लूट लिया था । वहां से लगभग 11 लाख रूपये का माल उसने हस्तगत किया था । 1801 ई0 में जशवन्त राव होल्कर के पिण्डारियों ने नागपुर में प्रवेश कर लगभग 6 सौ लोगों की हत्याकर 6 लाख रूपये लूटे थे[3]। 1818 ई0 तक गढ़ामण्डला राज्य में नरसिंहपुर सोहागपुर, श्रीनगर, जबलपुर, गढ़ा, मण्डला, जबेरा, हटा, दमोह, बालाघाट, सिवनी, छपारा और छिंदवाडा आदि प्रमुख नगरों को पिण्डारी अश्वारोहियों की टापों तले दलित होना पड़ा था[4]।

1· काले या·मा·, ना·भो·इ·, छि·आ·, पृ·248
2· मारक्वेस [लार्ड] हेस्टिंस [1813 से 1823 ई0 तक] पिण्डारियों की लूटमार और अत्याचारों की ओर आकर्षित हुआ और उनके सर्वनाश के लिए कटिबद्ध हो गया ।
3· धर्म युग, 6 फरवरी 1983, पृ· 31
4· काले या·मा·, ना·भो·इ·, हि·आ·, पृ·249

यह गढ़ा मण्डला राज्य में भोंसला शासन का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है जिसे अपने आरम्भ काल से अन्त तक -1799 से 1818 ई॰ तक- पिंडारियों के आक्रमणों का सामना करना पड़ा ।

3॰ पिंडारियों का सामाजिक जीवन :-

पिछले पृष्ठों पर लिखा जा चुका है कि पिंडारियों का कोई स्थायी स्वामी नहीं था । उनका कोई कानून नहीं था । वे अपनी इच्छा के अनुसार ही कार्य करते थे । उनमें न अनुशासन था और न ही किसी की आज्ञापालन की विवशता थी । लूटमार करने वाले वे समस्त व्यक्ति पिंडारी दल में सम्मिलित हो सकते थे जिन्हें कानून का कोई भय नहीं था ।

जाति :-

पिंडारियों का सामाजिक जीवन वास्तव में कालखंड एवं परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तित होता था । उनके दल में अनेक जाति के लोग सम्मिलित थे, किन्तु अनेक जाति के लोगों के बावजूद भी वे जातिगत व्यवस्था से कहीं दूर केवल पिंडारी थे । उनकी कोई विशेष जाति नहीं थी तथापि उनकी यह संख्या अधिकांशत: सिंधिया एवं होलकर के झंडों तले होने के कारण उन्हें सिंधियाशाही तथा होलकरशाही की विशेष उपाधियां प्राप्त हुई थीं ।[1]

पिंडारियों को सामुदायिक जीवन-यापन विशेष रूप से पसन्द था । अधिकांशत: वे लोग समूह में ही रहते थे । गांवों में अत्यधिक सघन झोपड़ियां उनके समूह की प्रमुख विशेषता थी । जहां वे अपने लूटमार के अभियान से वापस आकर अपने परिवार के साथ आगामी विजयादशमी तक शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करते थे । सामान्यत: पिंडारियों का परिवार गांव में ही रहता था यहीं उनकी संस्कृति भी थी किन्तु नागपुर में 1811 ई॰ में मौजूद अंग्रेजी रेजीडेंट रिचर्ड जैंकिंस के एक पत्र से विदित होता है कि अनेक बार पिंडारी लोग अपने अभियानों में परिवार के सभी सदस्यों को अपने साथ रखते थे । चीतू (छीतू) पिंडारी का परिवार

1॰ सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 3, पृ॰ 499-500

सदैव उसके साथ ही रहता था ।[1]

<u>वेश - भूषा</u> :-

वेश भूषा के संदर्भ में पिंडारियों की पहचान बहुत ही स्पष्ट थी घुटनों तक धोती-कुर्ता की जगह तेहमद और सिर पर एक बड़ा साफा, घनी दाढी और मूछों के धनी, ऐसी ही कुछ वेशभूषा थी पिंडारियों की । गांव में उनकी वेशभूषा ही नहीं वरन चाल-चलन और व्यवहार सभी कुछ एक साधारण गृहस्थ किसान अथवा कर्मचारी की तरह हो जाता था और तब प्रीतिदिन चौपाल में या किसी पेड के नीचे बैठ कर वे सभी एक-दूसरे के सुःख - दुःख को सुन कर आपस में बांटने का प्रयत्न करते थे । तब भीख से लेकर लगान देना वे अपना कर्तव्य समझ कर देते थे ।[2]

<u>धर्म</u> :-

धर्म के विषय में पहले ही लिखा जा चुका है कि पिंडारियों का कोई धर्म नहीं होता था । धन-माल ही उनके लिए सब कुछ था । विशेष रूप से विजयादशमी के पश्चात ही वे अपने लूटमार के अभियान पर निकलते थे । तब, जबकि मौसम और मार्ग दोनों ही उनके लिए सुगम होता था, मात्र धन के लिए ही वे अपने अभियानों में जघन्य अपराध तक करते थे । धन के लिए उन्हें मंदिरों की दीवारों एवं मूर्तियों को तोडने में तनिक भी संकोच नहीं होता था । निश्चित ही अपने अभियानों के दौरान उनके पास आदर्श या मर्यादा नाम का कोई शब्द नहीं होता था । तब उनका आदर्श तो केवल लूट मार करना था । परन्तु इन सबके बावजूद भी पिंडारी पूर्णत: नास्तिक नहीं थे । देवी - देवताओं में

1· पी·आर·सी;5, प·क्र· 200, पृ· 376, रिचर्ड जैंकिंस का पत्र जनरल कान्रैन के नाम - वह अपने पत्र में लिखता है कि चीतू अपने अनुयायियों के साथ 18 हजार घोडे एक हजार पैदल रिसाले, 8 बंदूकों सहित नर्मदा के दक्षिण में नील नदी पर पडाव डाले हुए है, जो संतवास से चार कोस दूर है । नदी के उत्तर की ओर चीतू के साथ उसका कुटुम्ब भी है ।

2· धर्मयुग, 20 फरवरी 1983, पृ· 44

उनका विश्वास था । इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जब पिन्डारियों ने मूर्ति पूजा किया, दान दक्षिणा दिया एवं ब्राह्मण भोज कराया है । अपने घरों में रहते हुए वे लोग सामाजिक रीति-रिवाजों, रूढ़ियों एवं अन्ध-विश्वासों के अनन्य भक्त हो जाते थे ।

तंत्र-मंत्र और टोटकों तथा जादू-टोने में भी उनका अधिक विश्वास होता था । डा. कैलाश नारद के लेख से विदित होता है कि पिन्डारी लोग कामाख्या देवी के अतिरिक्त, रामशाह पीर, गौंगा पीर और रामदेव पीर की आराधना में अधिक विश्वास करते थे, तथापि उनके जीवन में विजया दशमी का अत्यधिक महत्व है ।

इसी दिन पिन्डारी सामूहिक रूप से उक्त देवी एवं पीरों की पूजा करते थे और अपने आराध्य देव को प्रसन्न करने के लिए बकरे की बलि चढ़ाते थे, फिर पूजा का महाप्रसाद खाकर अगले दिन अपने अभियान के लिए प्रस्थान करते थे ।

सम्भवत: समस्त विपत्तियों से बचने के लिए वे अपने गले में सदैव गौंगा पीर की ताबीज भी बांधते थे ।[1]

---

1. धर्मयुग : 20 फरवरी, 1983, पृ. 44.

रीति-रिवाज :-

ऐसे भी उदाहरण प्राप्त होते हैं जिनसे पिन्डारियों के पारिवारिक जीवन की प्रगाढ़ता एवं स्नेह का परिचय प्राप्त होता है ।

ऐसा प्रतीत होता है कि अपने अंतिम संस्कारों में कई बार राजपूतों के रीति-रिवाजों का अनुसरण किया जाता था । स्लीमैन महोदय के वृत्तान्तों में अनेक पिन्डारी स्त्रियों के सती होने का उल्लेख भी पाया जाता है जिनमें फूलकुंवर, बहोरन, ताजो एवं गुलाब बानों का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।[1]

पिन्डारी प्राय: हजारों की संख्या में अश्वारोही होते थे । उनके अस्त्र-शस्त्रों में प्रमुख बल्लम (भाला) था, जिसकी लम्बाई लगभग 12 से 18 फीट तक होती थी । साथ में तलवार, कटार, छुरा, गडासा, बघनखा एवं बन्दूकों का भी प्रयोग पिन्डारियों द्वारा किया जाता था ।

इस प्रकार उक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिन्डारियों का सामाजिक जीवन भी एक साधारण ग्रामीण की तरह ही होता था, केवल उन दिनों को छोड़कर जबकि वे अपने लूटमार के अभियानों पर होते थे और एक नृशंस, अत्याचारी एवं व्यभिचारी लुटेरे समझे जाते थे ।

---

1. स्लीमैन, डब्लू.एच. : रैम्बल एण्ड रिकलेक्शन्स आफ एन इंडियन आफीसियल.

4. पिण्डारियों के अत्याचार :-

वास्तविक जन समुदाय में पिण्डारियों के प्रति एक विशेष धारणा यह है कि वे कठोर एवं हृदय शून्य व्यक्ति होते थे । नि: सन्देह उनमें सहृदयता का अभाव रहा होगा ।

सैकड़ो हजारों की संख्या में पिण्डारी दल आंधी की तरह धावा बोलते थे और लूटमार के पश्चात अपने पीछे अत्याचार और विनाश की एक अमिट लकीर छोड़ जाते थे । शायद इसीलिए पिण्डारियों को "टिड्डी"दल[1] की संज्ञा दी गयी थी ।

पिछले अध्याय में सागर पर अमीर खां के आक्रमण का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसमें पिण्डारियों के अत्याचारों की एक झलक दी गयी है । यहां उसी क्रम को आगे बढ़ाया जा रहा है क्योंकि पिण्डारियों के इस कृत्य के बिना यह अध्याय अधूरा रह जायेगा ।

हत्या करना :-

अपने अभियानों में लोगों को साग की तरह काटकर कत्ल करना शायद पिण्डारियों के मनोरंजन का साधन था । उनका विश्वास था कि "ईश्वर ने उन्हें लोगों को कत्ल करने के लिए ही जन्म दिया है । यदि उन्होनें ऐसा नहीं किया तो शायद ईश्वर उन्हें माफ नहीं करेगा[2] दरअसल पिण्डारियों के अत्याचार पाराविक प्रवृत्तियों की सीमा को भी लांघ चुके थे । जिसे केवल मानसिक विकृति ही कहा जा सकता है इससे अधिक और कुछ नहीं । अपने अभियानों में गांव एवं कस्बे को लूटना उनका पेशा था किन्तु उससे कहीं अधिक अत्याचार करना उनकी प्रवृत्ति बन चुकी थी । पिण्डारियों का सम्पूर्ण

---

1. टिड्डियों के सन्दर्भ में कहा जाता है कि वे हजारों की संख्या में एक समूह के रूप में चलती थी । मार्ग में पड़ने वाले समस्त पेड़ पौधों और फसल को खाकर नष्ट कर देती थी और अपने पीछे छोड़ जाती थी पेड़ो का ठूंठ और नष्ट हुई फसलों का कचरा वनस्पति जगत के विनाश की एक लम्बी कहानी बन जाती थी उनके आक्रमणों की प्रक्रिया.

2. धर्म युग, 13 फरवरी 1983, पृ. 31

इतिहास ही व्यक्तियों के खून से रंगा हुआ है । जिनसे आज भी रोंगटे खड़े कर देने वाली दुराचारों की दुर्गन्ध आती है ।

आगजनी

अपने आक्रमणों के दौरान गांव को लूटकर आग लगा देना[1] उनके लिए बहुत ही सामान्य बात थी । उस आग में सैकड़ों लोग जीवित जल जाते थे । हजारो मवेशी अग्नि में जल कर राख हो जाते थे और गांव का गांव वीरान हो जाता था । जो लोग अग्नि समाधि से बच जाते थे उन्हें निर्दयतापूर्वक कत्ल कर दिया जाता था । घर का माल निकलवाने के लिए तरह तरह की यातनाएं दी जाती थी । लोगों के नथुनों में दहकती हुई राख भर कर उनकी आखों में तेज मिर्च का पावडर डाल दिया जाता था ।[2]

अन्य पिंडारियों की अपेक्षा अमीर खां यद्यपि कम क्रूर माना जाता था परन्तु अनेक उदाहरण ऐसे मिलते हैं जबकि उसकी क्रूरता भी मानवीयता की सीमा का उल्लंघन करती थी । मंदसौर में उसने हिन्दू व्यापारियों से माल एवं गढ़े हुए धन की जानकारी लेने के लिए उनकी अंगुलियों में रूई लपेट कर उन पर मिट्टी का तेल डालकर आग लगवा दी थी ।[3]

अमानवीयता

जबलपुर पर अपने धावके के दौरान पिंडारियों ने सागर के समान ही उसे भी लूट कर लगभग नष्ट कर दिया था परन्तु उससे कई गुना अधिक अमानवीय अत्याचार किए थे ।[4] सार्वजनिक स्थानों पर स्त्रियों से सामूहिक बलात्कार किया जाता था जो अत्यधिक वीभत्स एवं घृणित होता था । उनकी स्त्रियों की मृत्यु हो जाती थी । सैकड़ों युवतियों का अपहरण कर उन युवा युवतियों को दूसरे स्थानों पर ले जा कर वहां के बाजारों

1· पी·आर·सी·, 5, पृ· 218-19
2· धर्मयुग, 13 फरवरी 1983, पृ· 31
3· सरदेसाई, म·न·इ·,3, पृ· 501
4· काले या·मा·, ना·भो·इ·, पृ· 249

बेच दिया जाता था ।[1] इस बीच प्रतिदिन ही अमानवीय तरीकों से उनका दैहिक शोषण कर पिंडारी अपनी क्रूरता का परिचय देते थे । जबलपुर व नागपुर पर किए गए धावे के समय पिंडारियों ने शहर के साथ ही जंगलों को भी नहीं छोडा था । जंगलों में प्रवेश कर वहां छिपी हुई स्त्रियों को पकड कर माल स्वार्णाभूषणों के लिए निर्भयतापूर्वक उनके हाथ काट दिये जाते थे । जिनके पास कुछ नहीं मिला उनके साथ अमानुषिक तरीके से बलात्कार किया गया ।[2] फलस्वरूप पिंडारियों के आगमन का समाचार सुनते ही स्त्रियां अपने बच्चों सहित जंगलों में भाग जाती या पकडे जाने के भय से कुएं या तालाबों में कूद कर आत्महत्या कर लेती थी ।[3] विवाहित पुरूष अपनी स्त्रियों को अग्नि को समर्पित करके[4] स्वयं पिंडारियों का सामना करने के लिए निकल पडते थे किन्तु निर्दयी पिंडारियों के हाथों मार दिए जाते थे । लोग अपनी पत्नियों को जौहर में इसलिए समर्पित कर देते थे कि उन्हें अपनी मृत्यु का विश्वास हो जाता था ।

पाशविकता

पिंडारियों की पाशविकता का यह घिनौना खेल यहीं समाप्त नहीं होता है । 1802 ई॰ में ब्रिटिश संसद में प्रस्तुत एक रिपोर्ट से विदित होता है कि पिंडारियों द्वारा पकडे हुए लोगों को मार मार कर अधमरा कर दिया जाता था, साथ ही उनके सीने पर शहतीर रखकर उस पर कुछ लोग कूदते थे ताकि व्यक्ति अपने धन को उन्हें बता दे और अन्त में पत्थरों से उसके सिर को फोड कर उसकी हत्या कर दी जाती थी । इसके अतिरिक्त मासूम बच्चों को हवा में उछाल दिया जाता था और नीचे आने से पूर्व उनके टुकडे टुकडे कर दिये जाते थे ।[6]

1· काले या·मा, ना·भो·इ·,पृ·250, धर्मयुग 13 फरवरी 1983 पृ· 3।

2· धर्मयुग 6 फरवरी 1983, पृ· 3

3· काले या·मा, ना·भो·इ·,पृ·250, धर्मयुग 13 फरवरी 1983 पृ· 3।

4· वही, पृ· 249, धर्मयुग, 13 फरवरी 1983, पृ· 3।

5· हल जोतते समय बैलों के गले में डाला जाने वाला जुँआं·

6· धर्मयुग, 13 फरवरी 1983, पृ· 3।

इतना अधिक जघन्य, निर्मम और वीभत्स अत्याचार पूर्ण कार्य प्रणाली शायद ही किसी अन्य की रही हो जितना कि पिन्डारियों का था । यद्यपि भारतीय इतिहास के पन्ने निर्दयी एवं अत्याचारी राजाओं की कथाओं से भरे पड़े हैं । अधिकांशत: अंग्रेजो को अत्यन्त निर्भय और अत्याचारी कहा जाता है किन्तु पिन्डारियों की इस अमानवीयता एवं पाराविकता ने उन्हें भी गौण कर दिया ।

5· पिन्डारी अमीर खां के धावे :-

पिछले अध्याय में स्पष्ट किया गया है कि अमीरखां पिन्डारी होल्कर का पठान कर्मचारी था । यशवंतराव होल्कर के समय में वह दरबार का अत्यधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति बन चुका था । उसने अपना विशेष प्रभुत्व स्थापित कर लिया था जिसके फलस्वरूप न्याय कार्य में भी वह दखल देने लगा था[1]। बाद में मल्हार राव होल्कर के समय में भी उसे सम्माननीय पद प्राप्त हुआ । नि: सन्देह वह एक प्रसिद्ध पिन्डारी नेता था, उसकी विनाशकारी प्रवृत्तियों को होल्कर द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाता था[2]।

कभी होल्कर का पक्ष लेकर तो कभी भोपाल के नबाब की ओर से ओर कभी लूट के लालचवश अनेकों बार अमीरखां और उसके प्यादों ने गढ़ामण्डल प्रदेश को रौंदते हुए लूटा यहां तक कि राजा भोंसला की राजधानी नागपुर को भी नहीं छोड़ा । फलत: अमीर खां के धावे से जबलपुर, मण्डला और नागपुर को क कई बार उजड़ना और बसना पड़ा ।

1· मजूमदार आर·सी·, मराठा सुपरमैसी, III, पृ· 149-50
2· काले या·भा·, ना· ओ·इ·, पृ· 250
मजूमदार आर·सी·, मराठा, सुपरमैसी, III, पृ· 149-50

गढा मण्डला में प्रवेश :-

दिसम्बर जनवरी 1803-04 ई. में अमीर खां ने पुन: सागर में अपना शिविर लगाया था, तब नागपुर के रेसीडेंट एलफिंस्टन ने भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल बेलेजली को एक पत्र लिखकर गढा मण्डला में उसके आगमन की आशंका व्यक्त की थी[1] एलफिंस्टन की यह आशंका निराधार साबित नहीं हुई. उसी वर्ष अमीर खां ने गढा मण्डला में प्रवेश कर उपद्रव मचाना शुरू कर दिया था[2]। उसने अनेक स्थानों को लूटकर अत्याधिक हानि पहुंचाई ।

यद्यपि रघुजी भोंसला द्वितीय ने मण्डला और जबलपुर में नारायणराव[3] बाजी घाटगे और निम्बाजी घाटगे के नेतृत्व में सेनायें नियुक्त कर रखी थी, किन्तु वे पिन्डारियों की प्रगति को रोक सकने में असमर्थ थी । इसलिए रघुजी भोंसला द्वितीय की ओर से सखाराम अवधूत के नेतृत्व में पैदल सेना की एक अन्य टुकड़ी भेजी गयी । उसने चौरागढ के निकट अपना शिविर लगाया[4]।

जबलपुर की ओर प्रयाण :-

इतिहास के बढते हुए क्रम में पिण्डारी अमीर खां के अतिरिक्त एक और उपद्रवकारी का नाम प्राप्त होता है और वह था नागू जिवाजी । वह भी अमीर खां का सहयोगी एवं यशवंतराव होल्कर का कर्मचारी था[5]।

---

1. एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, प.क्र. 5 पृ. 8-9 गवर्नर जनरल बेलेजली को 19 जनवरी 1804 को लिखा गया एलफिंस्टन का पत्र.
2. एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, प.क्र. 20, पृ. 45-46
   रघु जी भोंसले प.क्र.-85 पृ. 131 वहीं, प क्र. 41, पृ. 93-94
3. नागपुर भोंसल्यांच्या इतिहास में इसे रघुनाथराव बाजी घाटगे लिखा गया है ।
4. कोलारकर स.गो., भ.पं. ब., पृ. 43
   रघुजी भोंसले, प.क्र. 86, पृ. 133
   एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, प.क्र. 23 पृ. 53-55
5. रघुजी भोंसले, प.क्र. 41 पृ. 93-94

एलफिंस्टन के पत्र दिनांक 4 नवम्बर 1804 से यह विदित होता है कि उसने अमीरखां के साथ मिलकर एक साथ ही अलग- अलग स्थानों पर आक्रमण करने की योजना बनाई, जिसके अनुसार अमीर खां जबलपुर पर तथा नागू जिवाजी नर्मदा नदी के दक्षिण में स्थित प्रदेश के भूभाग पर आक्रमण कर लूटेंगे। जीवाजी के साथ लगभग 7 हजार लुटेरे थे[1]। दोनों ने अपनी योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए अपने लक्ष्य की ओर प्रस्थान किया और गढा मण्डला राज्य के अनेक गांवों को लुटते हुए आगे बढने लगे। इसी बीच रघुजी भोंसला द्वितीय को यह सुचना दी गयी कि अमीर खां ने जबलपुर पर अधिकार कर लिया है, इससे सम्पूर्ण नागपुर में भय और आतंक का वातावरण निर्मित हो उठा[2]।

किन्तु यह घटना कहां तक सच थी। यह कहना बहुत ही कठिन है क्योंकि तत्कालीन अन्य किसी भी दस्तावेज में इस घटना का उल्लेख नहीं मिलता है और न ही एलफिंस्टन महोदय ने अपने पत्रों में इसे स्पष्ट किया है। मात्र अफवाहें ही नवीनतम वातावरण निर्मित करती थी। तथापि यह निर्विवाद था कि गढा मण्डला में पिण्डारी गतिविधियां निरन्तर सक्रिय होती जा रही थी[3]। इसका एक प्रमुख कारण भोंसला की सेनाओं की निष्क्रीयता भी थी। चौरागढ के समीप शिविर लगाये हुए सखाराम के सैनिकों को भी एक लम्बे अरसे से वेतन नहीं मिला था। इसलिए उन्होंने भी आगे बढने से इंकार कर दिया, तब विवश होकर सखाराम को अपनी अस्वस्थ्यता सहारा लेना पडा था। उनके साथ ही चौरागढ में पहले से स्थित सैनिकों ने भी पिन्डारियों के विरुद्ध हथियार उठाने से मना कर दिया। वस्तुत: पिन्डारियों को निर्विघ्नता से प्रदेश को लुटने का अवसर प्राप्त हुआ।

---

1. रघुजी भोंसले, प.क्र. 41, पृ. 93-94
2. वहीं, प.क्र. 43, पृ. 101
3. वहीं, प.क्र. 46, पृ. 107 प.क्र. 76, पृ. 220
4. एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस प.क्र. 43 पृ. 101

<u>मण्डला में प्रवेश</u> :

जनवरी 1805 ई॰ में पिंडारियों के एक दल ने जिसमें लगभग चार हजार पिंडारी थे, पश्चिम की ओर से मण्डला में प्रवेश किया । उस समय रघुजी भोंसला द्वितीय का प्रतिनिध जयराम घाटगे मण्डला का प्रमुख अधिकारी था । उसने अपने पांच सौ सैनिकों के साथ पिंडारियों का सामना किया, किन्तु शीघ्र ही उसकी सेना को पराजित होना पडा । इस संघर्ष में जयराम घाटगे, उसके छः प्रमुख सहयोगी अधिकारी एवं अनेक सैनिक मारे गये । पिंडारी वहां से नर्मदा नदी पार कर चौरागढ की ओर अग्रसर हुए और अचानक ही सखाराम की सेना पर टूट पडे, सखाराम की सतर्कतावश पिंडारी उसे कोई विशेष हानि नहीं पहुंचा सके । फिर भी लगभग 50 घोडे ले जाने में वे सफल हो गये जो उसके शिविर से कुछ दूरी पर बांधे गये थे ।[1]

एलफिंस्टन के पत्र से विदित होता है कि प्रदेश में सक्रिय लगभग चार हजार पिंडारियों का एक अन्य दल हर्रई के निकट अपना शिविर लगाये हुए था । सम्भवतः आगे वे लोग बरार क्षेत्र में प्रवेश करना चाहते थे ।

<u>सेना की वृद्धि</u> :

नागपुर में रघुजी भोंसला द्वितीय पिंडारियों की इन गतिविधियों से अत्यधिक चिंतित था और किसी भी स्थिति में पिंडारियों का उन्मूलन करना चाहता था । इसी उद्देश्य से उसने गढा मण्डला पैदल सेना की वृद्धि करने का निश्चय किया। फलतः अपने प्रमुख अधिकारियों को 25-25 हजार रूपये देकर अतिरिक्त सैनिक भर्ती करने का आदेश दिया ।[3] तथा जबलपुर में एक प्रशिक्षित सेना की टुकडी तथा धनकोष भेजकर सैनिकों के असन्तोष को दूर करने का प्रयास किया । उसके इस कार्य से गढा मण्डला में स्थित मराठा सैनिकों में उत्साह का संचार हुआ जिन्होंने पिंडारियों के विरूद्ध हथियार उठा लिया । अंबाला -पांढुरना के निकट- एवं चौरागढ की सेनाओं ने आगे मण्डला की ओर कूंच किया ।[4]

---

1. एलफिंस्टन कारेस्पान्डेन्स, प॰क॰ 59, पृ॰ 174
2. ग॰ज॰ बेलेजली को लिखा गया पत्र दिनांक 18 फरवरी 1805
3. एलफिंस्टन करेस्पान्डेन्स, प॰क्र॰ 131, पृ॰ 342
4. वही, प. क्र. 136, पृ. 354.

6· जबलपुर पर धावा :-

पिण्डारी अमीर खां के धावों की विध्वंशक गति विधियां दिन प्रतिदिन बढ़ती गयी यद्यपि उसका पडाव नर्मदा नदी के उत्तर में ही रहता था किन्तु उसके घुडसवार लुटेरे सिवनी-छपारा तक सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला प्रदेश को लुटते रहते थे[1] ।

उल्लेखनीय है कि जनवरी 1806 ई0 में पिन्डारियों ने सादिक अली खां को भी नहीं छोड़ा था[2] । वह रघुजी भोंसला व्दितीय का एक प्रमुख सेना नायक था जिसे पिन्डारियों का उन्मूलन करने के लिए अधिकृत किया गया था ।

पिन्डारियों का एक अन्य दल मण्डला और छत्तीसगढ़ की ओर अग्रसर था मार्च 1809 ई0 में उस दल ने गाडरवारा में रघुजी भोंसला व्दितीय के एक शिविर पर धावा बोलकर उसे पूरी तरह लूट लिया था जहां से लगभग 400 घोडे और अपार धन सम्पत्ति वे अपने साथ ले गये[3] और आगामी वर्षों तक सम्पूर्ण प्रदेश को घूम-घूम कर लूटते रहे[4] ।

जुलाई 1809 ई0 में अमीर खां सागर दमोह क्षेत्र में अधिक सक्रिय था । उसने सागर एवं देवरी के जमींदारो से अत्याधिक धनराशि की मांग की और उसे पूरी न किये जाने की स्थिति में वहां कब्जा

1· पी·आर·सी·,5, प·क्र· 126-127, पृ· 226-28

2· सिन्हा एच0 एन0, ना·रे·रि·, 11, प·क्र·30 पृ·260

3· वहीं प·क्र· 3 पृ· 91, नरसिंहपुर जि·ग· पृ·51

4· वहीं पृ· 92

करने की धमकी दी । सम्भवत: उसने चौकीगढ़ पर कब्जा करने के लिए अपने घुड़सवारों की एक टुकड़ी को भेजा था, किन्तु उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई[1]।

उसने देवरी के किले को घेर लिया, लगभग तीन दिन के घेरे के पश्चात् देवरी के जमींदार ने उसे 25 हजार रूपया देकर समझौता किया[2]।

देवरी से अमीर खां ने जबलपुर की ओर प्रस्थान किया । सम्भवत: वह शीघ्र ही जबलपुर पर आक्रमण करना चाहता था । जैसा कि नागपुर के तत्कालीन रेसीडेन्ट रिचर्ड जैंकिन्स के पत्र [3] से विदित होता है कि वह वर्षा ऋतु में ही जबलपुर पहुंच जाना चाहता था । उसने रघुजी भोंसला द्वितीय को एक पत्र लिखकर उसके राज्य पर आक्रमण न करने के बदले में अपने कर्मचारियों को वेतन देने की मांग की और पूर्ति न किये जाने की स्थिति अप्रत्याशित घटना की धमकी दी[4] । निश्चित ही उसकी यह मांग पूर्ण करने में रघुजी असमर्थ था ।

19 जुलाई 1809 ई0 को अमीर खां ने ब्यारमा नदी पर शिविर लगाया उस समय उसके पास एक व्यवस्थित तोपखाना, लगभग 16 हजार घोड़े और पैदल रिसाले थे जिनके पास 16 बन्दूकें थी । उनमें दोस्त मुहम्मद और उम्मीद कुंवर के 3 हजार पिन्डारी भी थे [5]

1· पी·आर·सी·, 5 प·क्र· 126 पृ· 226

2· वहीं प·क्र· 127, पृ· 228

3· ग·ज· लार्ड मिन्टो को प्रेषित 6 जुलाई 1809

4· पी·आर·सी·,5, प·क्र· 126 पृ· 227

वहीं, प·क्र· 127, पृ· 228

5· वहीं प·क्र· 130, पृ· 234 प·क्र· 127, पृ· 228

इसके विपरीत जबलपुर जिला गजेटियर में 1200 घुड़सवार और 7 तोपों का उल्लेख किया गया है।[1]

यहां पिन्डारियों की वास्तविक संख्या के सन्दर्भ में स्पष्टत: कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में उचित प्रमाणों का अभाव पाया जाता है और बहुधा जो स्रोत हमें तत्कालीन पत्रों के रूप में मिलते हैं उनमें भी अलग-अलग विवरण प्राप्त होते हैं।

इसी प्रकार जबलपुर के सूबेदार घाटगे की सेना के सन्दर्भ में भी भिन्न-भिन्न विवरण प्राप्त होता है। जैंकिंस अपने पत्रों में उल्लेख करता है कि सूबेदार घाटगे की सेना में 2 हजार घोड़े 1 हजार पैदल और 8 बंदूकें थी।[2] इसके विपरीत काले ने 500 घुड़सवार और चार तोपों का उल्लेख किया है।[3]

वस्तुत: जबलपुर का सूबेदार घाटगे ने अमीर खां के समक्ष अपनी सेवा की कमी को देखते हुए स्थानीय जमींदारों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया। उसके प्रयासों से उस प्रान्त के जमींदारों ने अपनी सेना एकत्र कर अमीर खां का सामना करने का साहस किया, किन्तु निरन्तर उसकी प्रगति की सूचना पाकर वे भय एवं आतंक से

---

1. जबलपुर जि.ग., 1969, पृ. 87

2. पी.आर.सी., 5 प.क्र. 127, पृ. 229

3. काले, या.मा., ना.भो.इ., पृ. 251

स्वयं को मुक्त न रख सके और यथा संभव उससे जा मिले । इस बीच अत्यधिक वर्षा होने के कारण अमीर खाँ का अभियान कुछ समय के लिए स्थगित हो गया ।

19 अगस्त 1809 ई० को अमीर खाँ ने व्यारमा नदी पार कर जबलपुर की ओर प्रयत्न किया । 20 तारीख को वह कटंगा पहुंचा। उसे पूर्णत: लूट लिया और अपनी प्रवृत्ति एवं स्वभाव के अनुसार वहाँ तबाही मचा दी । उसके कटंगा पहुंचते ही घाटगे के स्थानीय सहयोगी जमींदार मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए तथा उनमें से कुछ अमीर खाँ से मिल गये[1]। विवशत: घाटगे ने रघुजी भोंसला द्वितीय को पत्र लिखकर नागपुर भेजा जिसमें उसने सेना की माँग की[2]।

अधिकार एवं अत्याचार:-

12 अक्टूबर 1809 ई० को अमीर खाँ ने जबलपुर पर आक्रमण किया[3] । जबलपुर के सूबेदार घाटगे को अभी राजा भोंसला का सहयोग प्राप्त नहीं हुआ था तथा स्थानीय जमींदारों ने भी उसका साथ छोड़ दिया था फिर भी उसने अपनी छोटी सी सेना के साथ पिन्डारियों का सामना किया । इस संघर्ष में वह बुरी तरह पराजित हुआ एवं उसका भाई नाईक जीवाजी घाटगे मारा गया । अत: विवश होकर वह अपने भाई के शव को लेकर मण्डला भाग गया[4]।

1· पी·आर·सी·,5 प·क्र· 130, पृ· 235

2· पी·आर·सी·,5, प·क्र· 130, पृ· 235

3· जबलपुर जि·ग·,1969,पृ· 87, नरसिंहपुर जि·ग·1971 पृ· 51
दमोह जि·ग·, 1970, पृ· 54

4· कोलारकर श·गो·, भ·प·ब·, पृ· 43
काले या·मा·, ना·भों·इ·, पृ· 25।

अमीर खां ने जबलपुर क्र पर अधिकार कर लिया और गढ़ा मण्डला के राजा को एक पत्र लिखकर अपनी मांग दोहराई[1] । तदन्तर उसने अपने पिन्डारियों को स्वतंत्र कर दिया लूटमार करने के लिए । फलतः सम्पूर्ण जबलपुर में और उसके आसपास लूटमार और अत्याचार की अग्नि भभक उठी थी । बहुत से लोग भय से जंगलों में भाग गये थे परंतु उन्हें भी ढूंढकर मार डाला गया । स्त्रियों के साथ सामूहिक बलात्कार कर, अबोध बच्चों का वध कर दिया गया । लगभग 4 सौ लोगों ने अपनी स्त्रियों एवं बच्चों सहित तालाब में कूदकर आत्म हत्या कर लिया सैकड़ों लोग नाव से नर्मदा पार करते समय डूब गये । धन के लोभ में पिन्डारियों ने हिंदू मंदिरों को भ्रष्ट कर दिया तथा मूर्तियों को खंडित कर दिया गया[2]। इस तरह सम्पूर्ण जबलपुर में लूटमार अत्याचार और विध्वंश का तांडव नृत्य होता रहा ।

तत्कालीन पत्रों से विदित होता है कि इसी समय एक अन्य पिन्डारी सरदार शहमत खां ने भी 4 हजार घोड़े एवं 4 बन्दूकों सहित तिलवारा घाट पर अपना पडाव डाला था[3]।

7. सादिक अली खां, और अमृतराव पांडुरंग द्वारा पिन्डारियों का पीछा :-

पहले ही लिखा जा चुका है कि सादिक अली खां नागपुर

---

1. रघु जी भोंसले प.क्र. 141, 42,43, पृ. 197-200
कोलारकर श.गो., भ.प.ब., पृ. 43
2. काले या.मा., ना.भो.इ., पृ. 251
कोलारकर श.गो., भ.पं.ब., पृ. 43
जबलपुर जि.ग. 1969,पृ.87
3. सिन्हा एच.एन., ना.रे.रि. 11 पृ. 20
जबलपुर जि. गजेटियर में 2 हजार पिन्डारी एवं 7 तोपों का उल्लेख किया गया है । {देखिये-पृ.87}

राजा रघुजी भोंसला द्वितीय का एक प्रमुख सेना नायक था । रघुजी भोंसला द्वितीय और भोपाल ~~का~~ के नवाब के मध्य संघर्ष में उसने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी । जिसके फलस्वरूप रघुजी II को चैनपुरबारी, चौकीगढ़, होशंगाबाद और सिवनी जैसे महत्त्वपूर्ण ठिकानों पर सफलता प्राप्त हुई थी । बाद में उसे पिन्डारी अमीर खां से बातचीत करने के लिए अधिकृत किया गया । उसने अपनी योग्यता से अमीरखां को पराजित करने में सफलता प्राप्त की ।

1807 ई॰ में उसे होशंगाबाद और नरसिंहपुर की सूबेदारी सौंपी गयी ताकि वह यथासम्भव सीमान्त सेना की सहायता कर सके । उसकी सेना में 5 हजार घुड़सवार और 5 हजार पैदल सैनिक थे । जिनके पास 28 तोपें एवं तोड़दार बन्दूकें थी[1]। सादिक अली ने श्रीनगर को अपना मुख्यालय बनाया और वहीं से सैन्य संचालन करने लगा । उसने प्रांत की उचित व्यवस्था के दृष्टिकोण से अपनी विशाल तोपें चौरागढ़ के निकट लगवाईं ।

<u>रमजान की मृत्यु :-</u>

मार्च 1807 ई॰ में चौरागढ़ के निकट सादिक अली खां के शिविर पर चीतू पिन्डारी ने अचानक आक्रमण कर दिया और सादिक अली की सेना पर प्रारम्भिक सफलता प्राप्त की । इस संघर्ष में लगभग 50 व्यक्ति मारे एवं सादिक अली का सहयोगी अधिकारी जगन्नाथ चौधरी घायल हो गया, परन्तु अन्ततः सादिक अलीखां ने चीतू को परास्त कर नर्मदा नदी के उत्तर की ओर खदेड़ दिया । इस बीच जगन्नाथ चौधरी ने सिंहपुर में चीतू के बेटे रमजान को मार दिया । वह 2 हजार पिन्डारियों का सरदार था[3]।

1· नरसिंहपुर जि॰ग॰, 1971, पृ॰ 51

2· नरसिंहपुर से लगभग 35 कि॰मी॰ उ॰पू॰ में उमर नदी के तट पर स्थित है ।

3· पी॰आर॰सी॰,5, प॰क्र॰ 185, पृ॰ 352

गढ़ा मण्डला राज्य में पिन्डारियों की लूटमार से जनता अत्यधिक त्रस्त थी और रघुजी भोंसला द्वितीय की स्थानीय सेनाये उनके उपद्रव को कम करने में असमर्थ थी ।

सादिक अलीखां को आदेश :-

12 अक्टूबर 1809 ई0 को पिन्डारी अमीर खां द्वारा जबलपुर पर अधिकार कर उसे लूटने का समाचार प्राप्त कर रघुजी भोंसला II आहत हो उठा । उसने अमीरखां का पराभव करने के लिए सादिक अली को आदेश भेजा[1]।

उल्लेखनीय है कि सादिक अली खां उस समय अपने मुख्यालय में नहीं था । वह भोपाल के नवाब से वार्तालाप के लिए भोपाल गया था[2] । अतः रघुजी का आदेश प्राप्त होते ही अपनी वार्ता स्थगित कर सादिक अली ने जबलपुर की ओर प्रस्थान किया और नर्मदा पार कर अक्टूबर के मध्य तक श्रीनगर पहुंच गया[3]।

जैकिन्स के अनुसार सादिक अली खां की सेना में लगभग 8 हजार घोड़े 6 हजार पैदल रिसाला एवं 23 बंदूके थी[4] ।

1· कोलारकर श·गो·, भ·पु·ब·, पृ· 43

2· सिंहा एच·एन·, ना·रे·रि·,II पृ· 92
पी·आर·सी·,5, प·क्र· 126-27 पृ· 227-229
कोलारकर श·गो·, भ·पं·ब·, पृ· 43

3· वहीं, पृ· 43-44
सिन्हा एच·एन·, ना·रे·रि·, II, पृ· 18

4· पी·आर·सी,5, प·क्र· 130, पृ· 236

सादिक अली के श्रीनगर पहुंचने का समाचार सुनकर अमीरखां ने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया और शीघ्र ही नर्मदा नदी पार कर श्रीनगर पहुंच गया । उसने सादिक अली की सेना को घेर लिया । ऐसा प्रतीत होता है कि अमीर खां के पिन्डारी राजा की सेना से बहुत अधिक थे । अतः सदिक अली ने बहुत ही चतुराई से काम लिया । उसने अमीर खां से संधि वार्ता आरम्भ की, साथ ही एक पत्र सैनिक सहायता हेतु नागपुर लिखा जिसमें अमीरखां की मांग का उल्लेख किया था । [illegible] । उसने अमीर खां की मांग[1] स्वीकारते हुए उसे पूरा करने का वचन दिया । सादिक अली ने इस शर्त के साथ अमीर खां से समझौता किया कि वह गढ़ा मण्डला राज्य से बाहर चला जायेगा[2]।

1· अमीरखां द्वारा अपने खर्च के लिए 40 लाख मांग की गयी थी । परन्तु रघुजी मात्र 14 लाख देना चाहता था जिसे अमीरखां ने अस्वीकार कर दिया था । देखिये- पी·आर·सी·,5, पृ·229-30

2· सिंहा एच·एम·, ना·रे·रि· द्वितीय, पृ· 107, प·क्र· 7 ।।
काले या·मा·, ना·भो·इ· पृ· 252
काले ने लिखा है कि सादिक अली ने 11 लाख रूपया देना स्वीकार किया था, किन्तु यह त्रुटिपूर्ण है क्योंकि इससे पूर्व अमीरखां 14 लाख रूपये की प्रस्तुति अस्वीकार कर चुका था तब श्रीनगर में मात्र 11 लाख रूपये में सहमत होना उचित प्रतीत नहीं होता है. निश्चित ही उसे पूर्ण राशि देने का वचन दिया गया ।

अमृतराव पान्डुरंग का प्रयाण:-

दूसरी तरफ गढ़ा मण्डला राज्य की स्थिति के सन्दर्भ में नागपुर भोंसला राजदरबार में संतोषजनक स्थिति निर्मित नहीं हुई थी । रघुजी भोंसला द्वितीय अमीरखां से संधि वार्ता कर उसकी विध्वंशक एवं आक्रामक गतिविधियों को शिथिल करना चाहता था । इसलिए उसने बाबा घारपूरे को उसके पास भेजा जिसने अमीरखां को 40 लाख में से 14 लाख रूपया देना स्वीकार किया था, किन्तु अमीरखां ने इसे अस्वीकार कर दिया[1] इस तरह बाबा घारपूरे के निराश होकर वापस लौटने पर रघुजी भोंसला के समक्ष युद्ध के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं था । अतः कुछ सादिक अली का सन्देश प्राप्त होते ही श्रीधर मुंशी की सलाह पर नागपुर से अमृतराव पांडुरंग को सेना सहित उसके विरूद्ध भेजा गया । अक्टूबर 1809 के अंत तक वह भी छपारा पहुंच गया[2],और मंजिल दर मंजिल आगे बढ़ता हुआ श्रीनगर पहुंच कर सादिक अली खां से मिल गया[3]•उन दोनों की सेवाओं को मिलाकर कुल लगभग 30 हजार सेना अमीरखां के विरूद्ध श्रीनगर में एकत्र हो गयी[4]।

भवानी पंडित[5] ने भी अपने बखर में सादिक अली द्वारा दिये गये वचन में 12 लाख रूपये का उल्लेख किया है[6] । ऐसा प्रतीत होता है कि यह उसने अपनी तरफ से देने का आश्वासन दिया होगा, जिससे आश्वस्त होकर अमीर खां वापस होगया[7]।

1• पी•आर•सी•5, पृ• 229-30

2• सिन्हा एच•एम•, ना•रे•रि• द्वितीय,पृ•18

3• कोलारकर श•गो, भ•पं•ब•,पृ•45

4• सिन्हा एच•एम•, ना•रे•रि•,द्वितीय, पृ•18

5• नागपुर में भोंसला दरबार का मंत्री•

6• कोलारकर श•गो•,भ•पं•ब•,पृ• 45

सिंहा,एच•एम•, ना•रे•रि•,द्वितीय,पृ• 107

7• कोलारकर श•गो•, भ•पं•ब•, पृ• 45

सिंहा एच•एम•, ना•रे•रि•, द्वितीय, पृ• 107

पिन्डारियों के विरुद्ध अंग्रेजी सेनाओं का अभियान :-

अमीर खां की गतिविधियों पर न केवल रघुजी भोंसला द्वितीय वरन गवर्नर जनरल भी चिन्तित था । उसने अमीरखां को पत्र भेजकर गढ़ा-मण्डला राज्य में उपद्रव न करने की चेतावनी दी, किन्तु अमीरखां ने उसके पत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया । इसके विपरीत ब्रिटिश सरकार द्वारा हस्तक्षेप करने की स्थिति में उसने ब्रिटिश क्षेत्रों पर भी आक्रमण करने की धमकी दी[1] । फलत: पिन्डारियों का उपद्रव समाप्त करने के लिए गवर्नर जनरल ने स्वतंत्र रूप से अभियान चलाया । उसने अपने अनेक सैनिक कमाण्डरों को अमीर खां को पराजित करने के लिए गढ़ा मण्डला की ओर बढ़ने का आदेश दिया । अत: पूना से कर्नल क्लोज एलिचपुर से मोशीं एन्डरसन तथा बुन्देलखण्ड से मार्टिन्डेल ने गढ़ा मण्डला की ओर प्रस्थान किया [2] । जहां पिन्डारी अत्यधिक सक्रिय थे ।

जबलपुर पर सादिक अली का अधिकार :-

श्रीनगर से सादिक अली खां और अमृतराव पांडुरंग की संयुक्त सेना धीरे धीरे अग्रसर हुई । सम्भवत: सादिक अली खां दूर से ही अमीर खां की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करना चाहता था और उसे अपना पीछा किये जाने का किसी प्रकार सन्देह न हो इसलिए वह अपनी सेना श्रीनगर से पहले गाडरवारा ले गया[3]।

1· वहीं
2· काले या·मा·, ना·भो·इ·, पृ· 252
3· काले या·मा·, ना·भो·इ·, पृ· 252

उसी समय उन्हे नागपुर से इस आशय का पत्र प्राप्त हुआ कि "अमीर खां से किसी प्रकार का समझौता न करते हुए उस पर आक्रमण कर उसे पराजित किया जाय[1]। फलस्वरूप राजा की संयुक्त सेना गतिशील हो गयी और वे तिलवाराघाट की ओर अग्रसर हुए।

13 नवम्बर 1809 ई॰ को सादिक अली खां की संयुक्त सेना तिलवारा घाट पार कर जबलपुर की ओर बढ़ी[2]। यद्यपि अमीर खां उस समय पाटन के निकट था किन्तु उसके अनेक पिन्डारी साथी अभी भी जबलपुर पर अपना अधिकार किये थे। जबलपुर पहुंचकर सादिक अली ने पिंडारियों पराजित कर शहर और थाना पर अधिकार कर लिया[3]।

<u>जबेरा[4] में पिन्डारियों की हार</u> :-

जबलपुर में ही विदित हुआ कि अमीरखां पिन्डारी जबेरा की ओर गया है और उसका परिवार शेर गढ़ में है[5]। अतः अगले ही दिन दोनों सेनानायक कटंगी पहुंचे। जहां से सादिक अली का विचार ऊषाकाल में अचानकअमीर खां के शिविर पर आक्रमण करने का था, इसलिए उसने सूर्य निकलने से पूर्व ही जबेरा के लिए प्रस्थान किया। उसके साथ पैदल रिसाला एवं 7 बन्दूकें थी[6]। सूर्योदय तक सादिक अलीखां जबेरा पहुंच गया।

1· कोलारकर श·गो· <u>भ·पुं·ब</u>·, पृ·46
2· सिन्हा एच·एन·, <u>ना·रे·रि·</u>, द्वितीय, पृ·110· 3· कोलारकर श·गो·, भ·पुं·ब·, पृ· 46
4· दमोह से लगभग 40 कि·मी· दूर दमोह जबलपुर मार्ग पर स्थित।
5· सिन्हा, एच· एन·, ना·रे·रि·, II, पृ·108
6· वहीं पृ· 113

दूसरी तरफ से अमृतराव पांडुरंग ने भी कटंगी से प्रस्थान किया और जबेरा पहुंच कर अमीर खां के शिविर को घेर लिया । इस घेरे में सादिक अली खां की सैनिक टुकड़ी सबसे आगे थी ।

वस्तुतः उसी दिन अर्थात 17 नवम्बर 1809 ई॰ को अपनी सहायक सेना के आते ही सादिक अली ने अमीर खां पर आक्रमण कर दिया आरम्भ से ही उसने तोपों से गोलाबारी शुरू की । फलतः अमीर खां के अनेक पिन्डारी मारे गये । अमीर खां ने भी जवाबी कार्यवाही की । दोनों ओर से भयंकर युद्ध होने लगा और लगभग 6 घड़ी तक गोलाबारी हुई । तदनन्तर आमने सामने लगभग 4 घड़ी तक तलवारबाजी होती रही ।

दोपहर बाद अमृतराव पान्डुरंग की सेना का पक्ष कुछ कमजोर हो गया, किन्तु शीघ्र ही उसकी कुशलता एवं दानशीलता के कारण सैनिकों में उत्साह का संचार हुआ । पिन्डारियों के सामने से सादिक अली खां ने बायी तरफ से 5 तोपों के साथ अमृतराव पांडुरंग ने दाहिने तरफ से रामपुरे एवं मुडवारे तथा ऊदाजी नवघरे, नारायण राव वाजी घाटगे मनको जी भोईटे तथा गुलाम हैदर बक्स जैसे सुप्रसिद्ध सेना नायकों के नेतृत्व में सैनिकों ने एक साथ आक्रमण किया । फलस्वरूप अमीरखां की क्षणिक विजय हार में परिवर्तित हो गयी और शाम होते होते उसकी सम्पूर्ण सेना तितर बितर हो गयी । लगभग एक हजार पिन्डारी मारे गये । अमीर खां युद्ध में घायल हो गया था अतः पराजित होकर मैदान से भाग गया और रात्रि में ही घाट पार कर लगभग 25 कि॰मी॰ दूर निकल गया[1]।

1॰ सिन्हा एच॰एम॰, ना॰रे॰रि॰, द्वितीय, पृ॰ 113
काले या॰मा॰, ना॰ भो॰इ॰, पृ॰ 252
कोलारकर श॰गो॰, भ॰पं॰ब॰पृ॰ 46-50

इस तरह जबेरा में सादिक अली खां एवं अमृतराव पान्डुरंग की सेना को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई । युद्ध में तोपें, हाथी निशान सहित घोड़े इत्यादि के साथ लूटका बहुत सा धन प्राप्त हुआ । इसके अतिरिक्त अनेक गांवों से चुराये गये मवेशी भी[1] । इसमें से दोनों तरफ को कितनी हानि हुई इसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता है सम्भवत: अनेक सम्माननीय लोगों के साथ ही भोंसला सेना के लगभग 4 सौ लोग मारे गये थे[2] ।

भवानी पंडित के बखर से विदित होता है कि जबेरा में प्राप्त सामग्री में से हाथी, घोड़ो और शस्त्रों को छोड़कर शेष धन लोगों में बांट दिया गया[3] ।

इस तरह जबेरा में हुई पिन्डारियों की हार से एक तरफ नागपुर में गढ़ा मण्डला के राजा रघुजी भोंसला द्वितीय ने जहां संतोष की सांस ली वहीं गढ़ा मण्डला की प्रजा ने अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों एवं लूट से राहत महसूस की ।

९· पिन्डारी आक्रमणों का प्रभाव :-

गढ़ा मण्डला राज्य पर पिन्डारी आक्रमणों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कितना प्रभाव पड़ा, इसका अनुमान लगाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य ही है ।

इन आक्रमणों ने गढ़ा मण्डला के लोगों को न केवल दैहिक वरन मानसिक रूप से पंगु बना दिया था ।

1· कोलारकर श·गो·, भ·पं·ब·, पृ· 49
2· सिन्हा एच·एम·, ना·रे·रि·, द्वितीय, पृ· 113
काले या·मा·, ना·भो·इ·, पृ· 49
3· वहीं , पृ· 50

पिन्डारी आंधी की तरह आते और देखते-2 टिड्डी दल की भांति सब कुछ नष्ट कर चले जाते थे। ऐसी स्थिति में राज्य में सदैव भय एवं आतंक का वातारण बना रहता था। समाज में रचनात्मक कार्य के लिए किसी के पास समय नहीं था। सदैव अस्थिरता बनी रहती थी।

वास्तविकता तो यह थी कि गढ़ामण्डला में जो लोग पिन्डारियों के अत्याचारों से बच गये थे वे वस्त्र एवं भोजन के लिए तड़प रहे थे। ये पिन्डारियों के आक्रमणों का सर्वाधिक दुष्प्रभाव भोंसला राज्य शासन पर पड़ा। प्रशासन निरन्तर शिथिल होता चला गया क्योंकि पिण्डारियों का दमन करने में ही अपार जन धन की हानि हुई थी। अभी प्रजा दु:ख और कष्ट से मुक्त भी नहीं हो पायी थी कि रिक्त राजकोष की पूर्ति के लिए प्रजा पर करों का अत्यधिक भार डाल दिया गया। फलतः राज्य की उन्नति और विकास के समस्त मार्ग अवरुद्ध हो गये। अधिकारीगण भ्रष्ट स्वार्थी लोलुपतावश भोंसला राज शासन निरन्तर पतनोन्मुख होता गया। जिसकी कमजोरियों से अंग्रेज भी विधिवत अवगत हो गये थे।

वस्तुत: यह कहना अनुचित नहीं होगा कि पिन्डारियों के आक्रमणों ने गढ़ा मण्डला की पृष्ठ भूमि पर अंग्रेजों का मार्ग प्रशस्त कर दिया जिसके फलस्वरूप ही 1818 ई• में अंग्रेजों ने गढ़ा मण्डला से भोंसला शासन का इति श्री कर दिया।

-----0----

=:: o : o : o ::=

अध्याय 7

अध्याय : 7 भोंसला शासन

पिछले पृष्ठों पर स्पष्ट किया गया है कि 1791 ई॰ गढ़ा, मण्डला, तेजगढ़ और धमोनी पर अधिकार करने के साथ ही इस प्रदेश पर नागपुर के राजा रघुजी भोंसला द्वितीय की सत्ता विधिवत स्थापित हो गयी और तब भोंसला राजा को उक्त प्रान्त का प्रबंध करना अत्यावश्यक था ।

कोलब्रुक[1] के वृतान्तों से पता चलता है कि पूर्व की अपेक्षा गढ़ा मण्डला राज्य का विस्तार उसके समय में कुछ कम हो गया था ।[2] रघुजी द्वितीय ने गढ़ा मण्डला की सुरक्षा के लिए पैदल एवं घुड़सवारों की सेना को तैनात किया और सम्पूर्ण नागरिक एवं सैनिक अधिकार रघुनाथ राव बाजी घाटगे को सौंपकर उसे गढ़ा मण्डला का सुबेदार नियुक्त किया ।[3] साथ ही विठ्ठल वल्लाल सूबेदार को अपनी कुमुक के साथ भेजा गया था ताकि वहाँ के उपद्रवकारियों का दमन कर शान्ति स्थापित कर सके ।[4]

वास्तव में गढ़ा मण्डला राज्य पर नागपुर के भोंसला राजाओं ने लगभग दो दशक तक शासन किया, किन्तु इन दो दशकों में यह क्षेत्र षडयन्त्रों एवं उपद्रवों का केन्द्र बन चुका था । जैसा कि पिछले अध्यायों में स्पष्ट किया जा चुका है ।

---

1. पूरा नाम हेनरी थॉमस कोलब्रुक, ग॰ज॰वेलेजली के प्रतिनिधि के रूप में राजा भोंसला से सहायक संधि करने के उद्देश्य से 18.3.1799 ई॰ को नागपुर आया तथा संस्कृत का अच्छा विद्वान था ।
2. विल्स सी॰यू॰, ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ॰ 141
3. रघुजी भोंसले, प॰क्र॰ 30, पृ॰ 61
4. वहीं , पृ॰ 31 पृ॰ 62

गढ़ा मण्डला से सम्बन्धित भोंसला शासन का पहला दशक पूर्णतः पिण्डारियों के उपद्रव एवं अत्याचार की घटनाओं से पीड़ित रहा। फलस्वरूप रघुजी भोंसला द्वितीय का अधिकांश समय उनका दमन करने की योजनाओं एवं क्रियान्वयन में ही व्यतीत हुआ। इस बीच प्रान्त में प्रशासन, सुरक्षा एवं शान्ति व्यवस्था के लिए जो अधिकारी नियुक्त हुए, उन्हें सदैव प्र पिन्डारियों के धावों का सामना करना पड़ा। विशेष रूप से पिण्डारी अमीर खां के धावों ने इस प्रदेश को सर्वाधिक रूप से प्रभावित किया था। पहले दशक की इन पिन्डारी घटनाओं का उल्लेख पिछले अध्याय में किया गया है।

बुन्देलों का विद्रोह

गढ़ा मण्डला में तैनात भोंसला की सेनाओं को सर्वप्रथम स्थानीय बुन्देलों के असन्तोष का सामना करना पड़ा। गढ़ा कोटा का राजा मर्दानसिंह[1] भोंसला शासकों से सन्तुष्ट नहीं था। अतः अपना असन्तोष व्यक्त करते हुए उसने भोंसला प्रदेश में अपने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया।

नवम्बर दिसम्बर 1800 ई. में उसने अपनी सेना के साथ गढ़ा मण्डला में प्रवेश कर प्रदेश को पिन्डारियों की तरह लूटना प्रारम्भ कर दिया था।

रघुजी भोंसला द्वितीय के एक पत्र[2] से विदित होता है कि जबलपुर के सूबेदार रघुनाथ राव बाजी थाटगे ने भवंतराव घाटगे एवं

---

1. "रघुजी भोंसले दूसरे यांची पत्रे" में इसे मदनसिंह लिखा गया है (देखिये - प.क्र. 33, पृ. 67, दिनांक 20 दिसम्बर 1800 ई. का पत्र)
2. अलीबहादुर को लिखा गया पत्र दिनांक 20 दिसम्बर 1800 ई.

गोविन्दराव त्रिम्बक को मर्दानसिंह का दमन करने के लिए भेजा और उन्होंने उसका दमन कर उसे शान्त कर दिया, परन्तु इस पत्र में यह उल्लेख नहीं किया गया है कि भोंसला के अधिकारियों का मर्दान सिंह से कहाँ सामना हुआ और किस तरह से उसका दमन किया गया ? ऐसा प्रतीत होता है कि रघुजी भोंसला द्वितीय के पत्र के अतिरिक्त अन्य प्रमाण इस घटना से अछूते हैं । इसके पश्चात आगामी कुछ वर्षों तक गढ़ा मण्डला से सम्बन्धित मर्दानसिंह की गतिविधियों का कोई उल्लेख नहीं मिलता है ।

आगे चलकर जनवरी 1804 ई. में वह पुन: गढ़ा मण्डला के ऐतिहासिक पटल पर उभरता है । उसने इस क्षेत्र के साथ ही सागर को भी अपना निशाना बनाया । उसकी अव्यवस्थात्मक गतिविधियों के कारण सागर का सूबेदार विनायक राव चान्दोरकर ने उस पर चढ़ाई की उसके इस अभियान में दिनकर राव अन्ना[1] ने उसका साथ दिया था । पथरिया में दोनों सेनाओं के मध्य एक अनिर्णायक युद्ध हुआ जिसमें विनायकराव बुरी तरह घायल हो गया । अत: उसे लेकर दिनकरराव अन्ना सागर वापस लौट गया ।[2]

सम्भवत: सागर के पश्चात उसने गढ़ा मण्डला की ओर प्रस्थान किया और फरवरी 1804 ई. में धमोनी में प्रवेश कर उपद्रव प्रारम्भ कर दिया । इस समय वह अमीर खाँ पिण्डारी की सेनाओं के साथ था ।[3] बाद में 1806 ई. तक बुन्देलों के विद्रोह की गतिविधियों का उल्लेख मिलता है ।

---

1. जालौन स्थित मराठी सेना का कमाण्डर
2. अन्धारे भा.रा., बुन्देलखंड अण्डर दि मराठाज, पा.2 पृ. 195
3. एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, प.क्र. 12, पृ. 26

गोंडों का विद्रोह

1805 ई॰ में एलफिंस्टन के एक पत्र[1] में श्रीनगर में गोंड लोगों के विद्रोह का उल्लेख मिलता है, शायद उन लोगों को चौरागढ़ पर अपने विजय का पूर्ण विश्वास था। जबलपुर के सूबेदार रघुनाथ राव बाजी घाटगे ने शीघ्र ही उचित कदम उठाकर विद्रोहियों के विरूद्ध एक सेना भेजी।[2] जिसने लगभग एक वर्ष के अन्तराल में विद्रोहियों को दबा दिया।[3]

मर्दानसिंह की तरह ही भूतपूर्व गोंड शासक सुमेरशाह का पुत्र शंकर शाह भी एक लम्बे अम समय तक अमीर खाँ पिन्डारी से जुड़ा हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि उसे अपने पूर्वजों का राज्य वापस दिये जाने का आश्वासन दिया गया होगा। 1809 ई॰ में जबलपुर पर किये गये पिन्डारी धावे में वह अमीर खाँ के साथ था।[4]

उक्त घटनाओं के अतिरिक्त तत्कालीन पत्रों में इस बीच सिवनी मालवा और होशंगाबाद के सन्दर्भ में रघुजी भोंसला द्वितीय एवं भोपाल के नवाब से मतभेद एवं संघर्ष की घटनाओं का उल्लेख मिलता है किन्तु यह स्थान स्थान गढ़ा मण्डला प्रदेश से बाहर होने के कारण यहाँ उन घटनाओं का उल्लेख नहीं किया जा रहा है, क्योंकि इस शोध प्रबन्ध का प्रमुख उद्देश्य मात्र गढ़ा मण्डला प्रदेश की सीमाओं के अन्तर्गत या उससे सम्बन्धित घटनाओं का प्रस्तुतिकरण है न कि अकारण ही पृष्ठ संख्या वृद्धि करना है।

1॰ ग॰ज॰वेलेजली को लिखा गया पत्र दिनांक 15 अप्रेल 1805 ई॰

2॰ एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, प॰क्र॰ 67, पृ॰ 194

3॰ सिन्हा एच॰एम॰, नार॰रे॰रि॰, 1, प॰क्र॰ 37, पृ॰ 174

4॰ जबलपुर जि॰गजे॰, 1969, पृ॰ 85

पुनः पिन्डारी धावे :

17 नवम्बर 1809 ई० को जबेरा में पराजित होकर पिन्डारी अमीर खाँ बुन्देलखंड की ओर बढ़ा जहाँ कर्नल मार्टिन्डेल के नेतृत्व में अंग्रेजी सेनायें उसका पहले से ही इन्तजार कर रही थी ।[1] अतः अमीर खाँ ने अपना मार्ग भेलसा की ओर[2] बनाया, वहाँ से वह कहाँ गया यह स्पष्ट नहीं हो सका ।

अमीर खाँ के पलायन से एक बार ऐसा प्रतीत होने लगा कि गढ़ा मण्डला क्षेत्र पिन्डारियों के आक्रमणों से मुक्त हो चुका है किन्तु लोगों का यह विश्वास स्थायी रूप से बना न रह सका । अगले वर्ष से ही पिन्डारियों की विनाशकारी गतिविधियाँ पुनः सक्रिय हो उठीं ।

जनवरी 1810 ई० में पिन्डारी वजीर मु० खाँ रायसेन में रूका हुआ था और उसका भाई करीम खाँ चैनपुर बारी तक चला गया था, जहाँ उसने शिविर लगाया ।[3] इस समय सादिक अली खाँ नागपुर एवं गोविन्दराव बक्षी जबलपुर की ओर गया था । ऐसी स्थिति में गढ़ा मण्डला प्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्र पर पिन्डारियों का उपद्रव होना स्वाभाविक था ।

इसी समय एक विचारधारा यह भी प्रभावित होने लगी कि सम्भवतः अमीर खाँ पिन्डारी पुनः अपनी शक्ति को संगठित कर गढ़ा मण्डला पर आक्रमण करेगा । लोगों की यह विचारधारा भी निराधार साबित नहीं हुई, निश्चित ही जबेरा में अपनी हार से अमीर खाँ प्रतिशोध की अग्नि में झुलस रहा था और अगले ही वर्ष

1· पी·आर·सी·,5, प·क्र· 144, पृ· 258

2· पी·आर·सी·,5, पृ· 265, प·क्र· 149

3· पी·आर·सी·,5,प·क्र· 149, पृ· 265

जून 1810 ई. में उसने जबलपुर पर पुन: आक्रमण कर दिया ।

भोपाल के नवाब वजीर मुहम्मद के पत्र[1] से ज्ञात होता है कि यद्यपि उसने अमीर खाँ को रोकने का प्रयास किया था, किन्तु सफल न हो सका । दरअसल उस समय भोपाल का नवाब नर्मदा के किनारे अपना शिविर लगाये हुए था ।[2]

तदन्तर एक के बाद दूसरा पिन्डारी दल गढ़ा मण्डला प्रदेश में प्रवेश कर उसे रौंदता रहा फलत: बेबश रियाया उसके अत्याचारों से पीड़ित होती गयी ।

अगले वर्ष दोस्त मुहम्मद पिन्डारी का एकदल श्रीनगर पहुँचा और शहर को लूटता हुआ अमरकंटक की ओर चला गया । यद्यपि सादिक अली खाँ को श्रीनगर स्थित पिन्डारियों का दमन करने के लिए नागपुर से रवाना किया गया किन्तु उसके पहुँचने से पूर्व ही पिन्डारी दल वहाँ से आगे बढ़ चुका था ।

करीम खाँ का उपद्रव

1811 ई. में नेमावर में पिन्डारियों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें पिन्डारी सरदार करीम खाँ और चीतू के मध्य मतभेद उत्पन्न हो गया था । उनकी फूट का पूरा लाभ रघुजी भोंसला द्वितीय उठाना चाहता था ।

नवम्बर 1811 ई. में उसने नागपुर तक पहुँचने वाले एक अन्य पिन्डारी सरदार वासिल मुहम्मद के साथ उदानी नायक को उनसे बातचीत करने के लिए भेजा । उसने चीतू खाँ एवं करीम खाँ से अलग-

---

1. पी.आर.सी.,5, प.क्र. 149, पृ. 265

2. ग.ज. को लिखा गया । जुलाई 1810 का पत्र

अलग बात की । चीतू को रिश्वत देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया और यह वचन दिया गया कि करीम की प्रत्येक कार्यवाही का विरोध किया जायेगा ।

करीम खाँ जो इस समय नर्मदा के किनारे खीरी[1] में अपना शिविर लगाये था, उदाजी नायक की बातों से सहमत नहीं हुआ वरन् उसने स्वयं एवं अपने अनुयायियों के भरण पोषण के लिए लगभग 6 लाख रूपयों की जागीर एवं 14 लाख रूपये नकद की माँग की ।[2] रघुजी भोंसला द्वितीय ने करीम खाँ की माँग पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया । सम्भवतः उसे करीम की माँग पूर्ण करने के बाद भी पिन्डारियों के धावों की आशंका थी ।

रिचर्ड्स जेंकिंस अपने दूसरे पत्र[3] में पिन्डारी करीम खाँ द्वारा 6 लाख रूपये एवं गढ़ा मण्डला की माँग का उल्लेख करता है । यहाँ जेंकिंस के इन दोनों पत्रों में विरोधाभास पूर्ण स्थिति उत्पन्न होती है । ऐसी स्थिति में अन्य प्रमाणों के अभाववश यह कहना कठिन है कि सत्य क्या है । निःसन्देह करीम खाँ की माँग दोनों ही स्थिति में पूर्ण करना रघुजी भोंसला द्वितीय के लिए उचित नहीं था । इससे न केवल उसके राज्य का विघटन होता वरन् उसका राजनीतिक पतन भी हो जाता और तब नागपुर से सदैव के लिए भोंसला राजाओं का ~~अस्ति~~ अस्तित्व ही समाप्त हो सकता था ।

वस्तुतः रघुजी भोंसला द्वितीय यह निर्णय नहीं कर पा रहा था कि वह करीम खाँ के साथ कैसा व्यवहार करें तभी उसे करीम खाँ द्वारा अदाजी नायक को बन्दी बनाये जाने का समाचार मिला,

---

1. नक्शे में खीरी की स्थिति स्पष्ट नहीं होती है, परन्तु जेंकिंस इसे नर्मदा से लगभग 70 कि॰मी॰उत्तर में दर्शाता है ।
2. पी॰आर॰सी॰,5,प॰क्र॰191,पृ॰ 362 दिनांक 15 नवम्बर 1811 ई॰ में जनरल हेविट्स को लिखा गया जेंकिंस का पत्र
3. 28 नवम्बर 1811 ई॰ को ज॰कानरेन को लिखा गया पत्र पी॰आर॰ सी॰5,प॰क्र॰200 पृ॰ 376

परन्तु शीघ्र ही दौलतराव सिंधिया के हस्तक्षेप से यद्यपि करीम खाँ ने उदाजी नायक को कैद से मुक्त कर दिया तथापि उसे अपने पास जमानत के रूप रखा[1] इस उद्देश्य से कि तभी गढ़ा मण्डला सम्बन्धी उसकी माँग की पूर्ति की जा सकेगी । रघुजी भोंसला ने करीम खाँ की इस माँग पर भी ध्यान न देते हुए दौलत राव सिंधिया से सम्पर्क बनाये रखा, सिंधिया ने चीतू पिण्डारी को अपनी सेना में शामिल कर लिया और उसे करीम खाँ का दमन करने के लिए भेजा । अतः विवश होकर करीम खाँ को दक्षिण की ओर प्रस्थान करना पड़ा । कई बार चीतू खाँ ने करीम के डेरे पर आक्रमण कर उसे लूट लिया था ।[2]

अपनी गढ़ा मण्डला की माँग की पूर्ति न होने पर करीम खाँ को बहुत निराशा हुई उसने पुनः भोंसला राजा को पत्र लिखकर गढ़ा मण्डला के बदले में होशंगाबाद एवं सिवनी मालवा की माँग की ।[3] सम्भवतः करीम खाँ सिन्धिया एवं भोपाल के नवाब की सेनाओं से त्रस्त हो चुका था अतः उसे एक शरण स्थल की आवश्यकता थी, परन्तु उसकी एक भी माँग की ओर ध्यान नहीं दिया गया । विवश होकर उसे वापस लौटना पड़ा । इसी समय उसकी हड़बड़ी का लाभ उठाकर फरवरी 1812 ई॰ में उदाजी नायक उसके शिविर से भाग निकला और सादिक अली से जा मिला ।[4]

इस तरह रघुजी भोंसला द्वितीय को बहुत ही आसानी

1· पी·आर·सी·5,प·क्र· 206, पृ· 383

2· परचा अखबार देवरही राजा जालिमसिंह लाट, 75, पृ· 481 (अप्रकाशित) मूल फारसी का हिन्दी अनुवाद

~~3·~~ पी·आर·सी·,5,प·क·214, पृ· 401

~~4·~~ 3· पी·आर·सी·,5,प·क्र· 210,पृ· 387-388

4· पी·आर·सी·,5,प·क्र· 172, पृ· 318

क्षेत्रों को लूटते एवं बर्बाद करते रहे ।[1]

गढ़ा मण्डला में पिन्डारी धावों की पुनरावृत्ति से ऐसा प्रतीत होता है कि रघुजी भोंसला द्वितीय ~~का~~ उस तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं देता था । कालान्तर में इस क्षेत्र के प्रति उसकी निष्क्रियता क्यों स्थायी रही यह भी स्पष्ट नहीं होता है ।

इस तरह गढ़ा मण्डला में भोंसला शासन का दूसरा दशक भी पिन्डारी आक्रमणों से त्रस्त रहा ।

सैनिक असन्तोष :

पिछले विवरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिन्डारी गतिविधियों ने गढ़ा मण्डला राज्य के आर्थिक ढांचे को नष्ट कर दिया था और रघुजी भोंसला द्वितीय उनका उन्मूलन करने में सर्वथा असमर्थ था । सादिक अली खां एवं अमृतराव पान्डुरंग के अतिरिक्त समकालीन पत्रों या ग्रन्थों में पिन्डारियों के दमन के लिए किसी अन्य सेना नायक का उल्लेख नहीं मिलता है । यदा-कदा इतिहास के पन्नो पर सखाराम बक्षी, गोविन्द राव त्रिम्बक एवं घाटगे बन्धुओं का विवरण मिलता है, किन्तु पिन्डारियों के सन्दर्भ में उनकी कार्य प्रणाली से कोई विशेष अन्तर नहीं आया ।

यह लिखना अनुचित नहीं होगा कि भोंसला के सैनिकों ने यद्यपि आरम्भ में अत्यधिक उत्साह का परिचय दिया था किन्तु कालान्तर में वे निष्क्रिय हो गये थे । इसका एक प्रमुख कारण उन

1· बी·आर·सी·5, 215, पृ· 402
अखबार राजा रघुजी भोंसला, लाट नं· 13, पृ· 1, (अप्रकाशित)
अखबार ड्योढ़ी अप्पा साहब भोंसला, ला·12,पृ· 15(अप्रकाशित)
सिन्हा एच·एन; ना·रे·रि·,3,47 पृ· 597
परचा अखबार होशंगाबाद, लाट नं· 9, पृ· 23, (अप्रकाशित)

सैनिकों को वेतन नहीं दिया जाना था ।

चौरागढ़ स्थित सेना एवं सखाराम के सैनिकों का उल्लेख पिछले अध्याय में किया जा चुका है । ऐसे उदाहरण और मिलते है जब सैनिकों ने पिन्डारियों के विरूद्ध हथियार उठाने से मना कर दिया था ।

इसी तरह जेंकिंस के एक पत्र से विदित होता है कि 1811 ई. में उसकी सेना की एक बटालियन ने बारेगाँव में अपना असन्तोष व्यक्त करते हुए धरना दिया । लगभग दिन भर के धरने के पश्चात उन्हें वेतन देने का आश्वासन देकर वापस किया गया, किन्तु राजा भोंसला ने अपने वचन का पालन न करते हुए असन्तुष्ट सैनिकों को वेतन देने के बजाय कैद करके उनका वध करवा दिया ।[1]

सम्भवतः राजा भोंसला के लिए इससे अधिक घृणित कार्य और क्या हो सकता था कि उसने अपने ही भूखे सैनिकों का वध करवाया हो जिनके साहस, बल और शक्ति के आधार पर ही उसे नागपुर, बरार और गढ़ा मण्डला जैसे विशाल राज्य की सत्ता प्राप्त हुई थी ।

पिन्डारियों का उन्मूलन :-

पिन्डारियों ने समकालीन राजनीतिक अव्यवस्था का लाभ उठाकर न केवल गढ़ा मण्डला क्षेत्र को लूटा वरन् सम्पूर्ण भारत के एक बहुत बड़े भू-भाग को अपने घोड़ों की टापों से रौंद डाला था और अपने लूट एवं अत्याचार में बहाये गये खून से इतिहास के पन्नों को बदरंग कर दिया था । उन्होंने उत्तर में यमुना नदी से लेकर दक्षिण में मद्रास तक अपने धावों से गाँव के गाँव लूटने के पश्चात उसे जला कर

---

1. पी.आर.सी.,5,, 191, पृ. 363

राख कर दिया था ।

पिन्डारियों के धावों का जितना प्रभाव राजा रघुजी भोंसला द्वितीय की सत्ता पर पड़ना था उससे कहीं अधिक भयानक स्थिति अंग्रेजों के लिए थी जो शीघ्र ही सम्पूर्ण भारत में अपनी सत्ता स्थापित करने का स्वप्न देख चुके थे ।

पिछले अध्याय में ब्रिटिश सेना की कुछ कम्पनियों का पिन्डारियों के विरुद्ध जबलपुर की ओर बढ़ने का उल्लेख किया जा चुका है किन्तु यह उनका मात्र एक प्रयोग था । 1813 ई॰ में हेस्टिंग्स भारत का गवर्नर जनरल बनकर आया उसने पिन्डारियों के उन्मूलन का निनि निश्चय किया, किन्तु उसके समक्ष समस्या यह थी कि स्थानीय राजाओं द्वारा पिन्डारियों को संरक्षण प्रदान किया जाता था । अतः उसने देशी राजाओं से पिन्डारियों के विरुद्ध एक संधि पत्र पर हस्ताक्षर करने का आह्वान किया परन्तु रघुजी भोंसला ने उसकी इस संधि को अस्वीकार कर दिया ।[1]

1817 ई॰ में मेटकाफ ने पिन्डारियों के विरुद्ध एक संधि जयपुर, कोटा, बूंदी, उदयपुर, जोधपुर एवं भोपाल के राजाओं से की । जिसके अनुसार पिन्डारियों को शरण न देने का वचन उक्त राजाओं ने दिया था ।

इस तरह हेस्टिंग्स ने पिन्डारियों के विरुद्ध नाकाबंदी करके एक विशाल सेना संगठित की, जिसमें एक लाख 16 हजार सैनिक एवं 300 तोपों[2] की व्यवस्था की गयी थी । नर्मदा के दक्षिणी प्रदेश की कमान हिस्लाप को सौंप कर, उत्तर में स्वयं हेस्टिंग्स ने सैन्य संचालन करते हुए अक्टूबर 1817 ई॰ में पिन्डारियों के विरुद्ध

1· सरदेसाई, म॰न॰इ॰,3,पृ॰ 502-3

2· धर्मयुग, 27 फरवरी 1983, पृ॰ 30

व्यापक अभियान आरम्भ किया, जिसमें मालकम, आक्टर जोनी, स्मिथ, कीथ, मार्शल, मैकमोरिन, एवं वाट्सन इत्यादि ने प्रमुख रूप से सेनाओं का नेतृत्व किया। फलत: वासिल मु॰खा॰ एवं करीम खाँ पराजित हुए। वासिल ने जहर खाकर आत्म हत्या कर ली। करीम खाँ ने मालकम् के समक्ष फरवरी 1818 ई॰ में आत्म समर्पण कर दिया था। बाद में उसे गोरखपुर के समीप एक छोटी रियासत दे दी गयी।[1] अमीर खाँ को टोंक की जागीर एवं गफ्फूर खाँ को जावरा की नवाबी देकर सन्तुष्ट कर दिया गया। अनेक पिन्डारी सरदारों को बन्दूक का निशाना बना दिया गया। चीतू पिन्डारी अशीरगढ़ के जंगलों में भाग गया जहाँ उसे एक शेर खा गया।

इस तरह एक वर्ष के अन्तराल में ही पिन्डारियों का समूल अन्त कर दिया गया।

रघुजी भोंसला द्वितीय की मृत्यु

रघुजी भोंसला द्वितीय की वस्तुस्थिति को समझने के लिए हमें एक बार नागपुर की केन्द्रीय पृष्ठभूमि की ओर चलना होगा क्योंकि गढ़ा मण्डला के इतिहास की पृष्ठभूमि भी यहीं से तैयार होती है।

1803 ई॰ के मराठा युद्ध में मराठों की पराजय के साथ ही नागपुर राज्य के पतन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी, इससे रघुजी भोंसला द्वितीय की भी अपार आर्थिक हानि का सामना करना पड़ा। राजकोष पूर्णत: रिक्त हो गया इससे उसकी अर्थ व्यवस्था पूरी तरह जर्जरित हो गयी थी। तदन्तर 17 दिसम्बर 1803 ई॰ को हुई देवल गाँव की संधि के अनुसार रघुजी को भी अपने यहाँ एक अंग्रेजी रेसीडेन्ट पद रखना पड़ा। यही से भोंसला दरबार में षड्यन्त्रों

---

1. सरदेसाई, म॰न॰इ॰, 3, पृ॰ 504

एवं पतन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी थी ।

एलफिंस्टन रेसीडेन्ट बनकर आया । उसने आते ही राज दरबार में मतभेद का बीज बोना आरम्भ कर दिया । जिसका श्री गणेश मंत्री श्रीधर, यशवंतराव रामचन्द एवं जयकृष्ण राव को पेंशन देकर किया गया ।[1] फलत: रघुजी के ये प्रमुख मंत्रीगण अंग्रेजों के चापलूस एवं चाटुकार बन गये । जिसका दुष्परिणाम रघुजी को ~~भुगतना~~ भुगतना पड़ा । फलत: दिन प्रतिदिन कम्पनी के रेसीडेंट की शक्तियाँ बढ़ती गई और रघुजी भोंसला असहाय होता गया । ऐसी स्थिति में पिन्डारियों के दमन को लेकर उसके समक्ष एक सहायक संधि का प्रस्ताव रखा गया । रघुजी ने इस संधि को मानने से इंकार कर दिया ।[2]

उल्लेखनीय है कि 17 दिसम्बर 1803 ई॰ को देवलगाँव की ~~सेहत~~ संधि में रघुजी ने हस्ताक्षर नहीं किया था वरन् उसकी ओर से यशवंतराव रामचन्द्र ने हस्ताक्षर किया था ।[3]

इससे स्पष्ट विदित होता है कि रघुजी भोंसला को अपनी स्वतन्त्रता अधिक प्रिय थी । अत: अंग्रेजों के दुराग्रह का सामना करना उसके लिए अवश्यम्भावी हो गया ।

दूसरी तरफ गढ़ा मण्डला में पिण्डारी धावों ने उसे बहुत आघात पहुँचाया, जिनका दमन करने के लिए उसने अपना सर्वस्व दाँव पर लगा दिया था फिर भी उसे सफलता प्राप्त न हो सकी ।

1811 ई॰ में उसका भाई व्यंकोजी उर्फ मान्यावापू सेना धुरन्धर ~~त्र~~ काशी के प्रवास पर था । जहाँ अगस्त सितम्बर {श्रावन

1॰ श्री शुक्ल, 5,खं॰, पृ॰ 121-23

2॰ श्री शुक्ल, पृ॰ 124

3॰ श्री शुक्ल, पृ॰ 120

मास§ महिने में उसकी मृत्यु हो गयी । उसका पुत्र मुधोजी भोंसला उर्फ अप्पा साहब अव्यस्क था, अत: रघुजी ने उसे अपने पास रखकर उसका पालन पोषण किया और चन्द्रपुर तथा छत्तीसगढ़ का अधिकार उसे सौंप दिया ।

प्रारम्भ में अप्पा साहब ने रघुजी भोंसला द्वितीय का पूर्ण सम्मान दिया किन्तु शनै: शनै: परिस्थितियाँ परिवर्तित होती गयी अप्पा साहब दरबार के षड्यन्त्रकारी गुट में सम्मिलित हो गया ।[1] यद्यपि रघुजी भोंसला को उसकी इन गतिविधियों की सूचना प्राप्त होती थी किन्तु वह कभी भी प्रत्यक्ष रूप से अप्पा साहब के प्रति अपनी नाराजगी प्रकट नहीं होने देता था ।

11 नवम्बर 1815 ई० को रघुजी द्वितीय अचानक मूर्छित होकर गिर पड़ा । ऐसा क्यों हुआ यह स्पष्ट नहीं हो सका, परन्तु इसके विरूद्ध कुछ लोगों ने अप्पा साहब भोंसला पर आरोप लगाया कि शंकर भट्ट के माध्यम से वह रघुजी की मृत्यु के लिए मान्त्रिकों का प्रयोग करवा रहा है । बहरहाल रघुजी ने इस सूचना पर भी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया । इसी बीच 1 मार्च 1816[2] ई० को अप्पा साहब की माँ मैनाबाई का देहान्त हो गया इस घटना से रघुजी द्वितीय बहुत दुखी हुआ । इसके कुछ दिन बाद ही 22 मार्च 1816 ई०[3] को उसकी भी मृत्यु हो गयी ।

---

1. काले या०मा०, <u>ना०भो०इ०</u>, पृ० 259
2. वहीं
3. सिन्हा एच०एन०, ना०रे०रि०,3,29,पृ० 51-52
   जैकिन्स रिपोर्ट, पृ० 67
   काले या०मा०, <u>ना०भो०इ</u>०पृ० 259
   पी०आर०सी०,5, 229, पृ० 447

रघुजी भोंसला द्वितीय ने लगभग 30 वर्षों तक नागपुर के सिंहासन को सुशोभित किया । वह श्यामवर्ण, हृष्ट पुष्ट एवं सरल स्वभाव का व्यक्ति था । निःसन्देह उसमें अपनी स्वतन्त्रता और स्वाभिमान को बनाए रखने की योग्यता थी शायद इसीलिए उसने अपने जीवनकाल में अंग्रेजों को अधिक महत्व नहीं दिया ।

उसे अपने पुत्र एवं भतीजे से बहुत प्रेम था तथा अपनी माँ का वह अनन्य भक्त भी था, शायद इसीलिए उसके भाई उससे रूष्ट रहा करते थे ।

जेंकिंस उसके विषय में लिखता है कि वह अत्यन्त शंकालु था, यही कारण था कि उसका अपने परिवार में बहुधा मनमुटाव बना रहता था ।[1] उसके दृष्टिकोण से रघुजी हिंसक, कायर और अस्थिर विचारों वाला व्यक्ति था ।

परन्तु इसके लिए रघुजी भोंसला द्वितीय उत्तरदायी नहीं था । यदि हम उसके व्यक्तिगत जीवन में झाँक कर देखे तो स्पष्ट होता है कि परिस्थितियाँ सदैव उसके विपरीत थी । इसके बावजूद भी वह गढ़ा मण्डला प्राप्त करने में सफल हुआ और लगभग 30 वर्षों तक नागपुर की केन्द्रीय सत्ता का कर्णधार बना रहा । गुण-अवगुण तो प्रत्येक व्यक्ति में होते है । मात्र इसीलिए दोषारोपण उचित नहीं है इसके लिए अधिकांशतः अंग्रेज अधिकारी उत्तरदायी है जिन्होंने उसके दरबार में षड्यन्त्रों का बीज बोया था ।

निःसन्देह रघुजी भोंसला द्वितीय एक परिश्रमी, कर्मठ एवं विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति था अन्यथा न केवल गढ़ा मण्डला वरन् सम्पूर्ण भारत में फैली हुई अराजकता एवं अव्यवस्था के उस काल में लगभग 30 वर्षों तक स्वतंत्र शासन संचालन करना सम्भव नहीं था ।

---

1. जेंकिंस रिपोर्ट, पृ. 67-68

काले या.मा., ना.भो.इ., पृ. 261-62

परसो जी भोंसला एवं अप्पा साहब

रघु जी भोंसला द्वितीय की मृत्यु के पश्चात उसका एक मात्र परसों जी भोंसला {बाला साहब} 38 वर्ष की आयु में नागपुर की गद्‌दी पर बैठा इसलिए स्वत: ही गढ़ा मण्डला राज्य का शासक भी वहीं हुआ।

किन्तु वह अधिक दिनों तक सिंहासन पर नहीं रह सका। समझा जाता है कि शीघ्र ही वह अप्पा साहब भोंसला के षड्यन्त्रों का शिकार हो गया।

दरअसल परसों जी भोंसला मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ्य नहीं था साथ ही उसके पैर में लकवे की शिकायत थी।[1] उसे शासन कार्य में कोई रूचि भी नहीं थी। ऐसी स्थिति में शासन संचालन के लिए एक उपयुक्त व्यक्ति की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। अत: रघुजी भोंसला ने अपनी मृत्यु से पूर्व अप्पा साहब से यह निवेदन किया था कि उसके पश्चात वह परसोजी भोंसला का संरक्षक बने किन्तु तब रघुजी के मंत्रियों ने अप्पा साहब के पक्ष में समझौता करने से इन्कार कर दिया था।[2] इससे नागपुर दरबार एक बार पुन: षड्यन्त्रों का केन्द्र बन गया।

धर्मा जी भोंसला एवं उसके सहयोगी मंत्रीगण यशवंतराव भवानी शंकर, यशवंतराव रामचन्द्र, नारायण गोपाल, गंगाधर माधव चिटनवीस आदि[3] रघुजी भोंसला द्वितीय के भानज गुजाबादादा गुदर को परसोजी का संरक्षक बनाना चाहते थे।[4] उन्होंने बांका बाई के

---

1. जेंकिंस रिपोर्ट, पृ. 68
2. सिन्हा आर.एम., भोंसला आफ नागपुर दि लास्टफेज, पृ. 29
3. काले या.मा., ना.भो.ई.पृ. 260
4. वही, पृ. 265,, श्री शुक्ल, इ.ख.पृ. 125.26

सहयोग से धन सम्पत्ति [खजाना] पर अधिकार कर लिया था ।[1]

धर्मा जी भोंसला की गतिविधियों से अप्पा साहब भोंसला चिन्तित हो उठा । वह एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति था । उसने दरबार में अपने विरूद्ध चल रही षडयन्त्रकारी गतिविधियों को विफल करने का फैसला किया । इसी उद्देश्य से नागपुर के रेसीडेंट से सहयोग की अपील की परन्तु उस समय रेसीडेन्ट ने राज-कीय आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने से इन्कार कर दिया ।[2] अत: अप्पा साहब ने अपने पक्ष में एक सेना संगठित किया एवं अनेक सरदारों को प्रलोभन देकर अपने पक्ष में कर लिया ।[3] 11 अप्रैल 1816 ई॰ को धर्माजी भोंसला को समझौता करने के प्रयोजन से बुलाकर बन्दी बना लिया ।[4]

इस तरह परिस्थितियां अपने अनुकूल कर ~~14~~ 14 अप्रैल 1816 ई॰ को अप्पा साहब ने एक भव्य समारोह आयोजित करके उसमें स्वयं को परसो जी का संरक्षक घोषित कर दिया । साथ ही परसों जी भोंसला की ओर से घोषणा करवा शासन की समस्त शक्तियां अपने हाथ में ले लीं ।[5]

अप्पा साहब भोंसला की स्थिति :

यद्यपि परसों जी के संरक्षक के रूप में अप्पा साहब ने शासन की समस्त शक्तियां अपने हाथ में ले लीं थी किन्तु फिर भी वह अपनी स्थिति को पूर्णत: सुरक्षित नहीं समझता था । बांकाबाई

1॰ काले या॰माय, ना॰भो॰ई; पृ॰ 265

2॰ सिन्हा आर॰एम॰, भोंसला आफ नागपुर, दिलास्ट फेज पृ॰21

3॰ श्री शुक्ल, इ॰खं॰, पृ॰ 126

4॰ काले या॰मा॰, ना॰भो॰ई॰पृ॰ 266

5॰ सिन्हा आर॰एम॰, दि लास्ट फेज, पृ॰ 21, काले या॰मा॰ना॰भोई॰ पृ॰ 266

एवं उसके सहयोगियों का भय उसे सदैव बना रहता था । अतः सबसे पहले उसने अपने प्रतिद्वन्दियों की शक्ति को क्षीण करने का निश्चय किया । 5 मई 1816 ई॰ को धर्माजी भोंसला की हत्या करवा दी ।[1]

नारायण यशवंत राव ने भागने का प्रयत्न किया परन्तु पकड़ लिया गया । अप्पा साहब ने 1 लाख 25 हजार रूपया लेकर उसे छोड़ दिया एवं गुजाबा गुदर की सेना में फूट डाल कर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बना लिया ।[2] फिर भी वह स्थिर नहीं रह सका । उसने अंग्रेज रेसीडेन्ट जेंकिंस से सहयोग की बात प्रारम्भ की ।

इस बीच नरोबा चिटनवीस ने उसे समझाने का प्रयास किया यदि वह पुराने मंत्रियों का सहयोग चाहता है तो उसे स्व॰ रघुजी भोंसला द्वितीय की विदेश नीति[3] का अनुसरण करना होगा[4] किन्तु अप्पा साहब ने इस सुझाव पर ध्यान नहीं दिया ।

नागपुर की सहायक संधि

अप्पा साहब की भीरूता एवं नागपुर दरबार की षड्यन्त्र कारी गतिविधियों का पूर्ण लाभ उठाया जेकिन्स ने । उसने अप्पा साहब भोंसला एवं परसो जी भोंसला के सम्मान में शाल और उपहार भेंट किया ।[5] जिससे प्रभावित होकर एवं अपनी स्थिति को पूर्णतः

---

1. काले या॰मा॰, ना॰भो॰ई॰ पृ॰ 126
   अखबार-दरबार राजा अप्पा साहब भोंसला, लाट नं॰ 32 पृ॰1
   (अप्रकाशित)
2. काले या॰मा॰,ना॰भो॰इ॰पृ॰ 266
3. मराठों में आपसी सहयोग एवं एकता में वृद्धि करना तथा नागपुर राज्य को अंग्रेजों की सहायक संधि से दूर रखना था.
4. सिन्हा आर॰एम॰,दि लास्ट फेज, पृ॰ 22
5. सिन्हा एच॰एन॰ना॰रे॰रि॰,3,29-30,पृ॰ 51-52

सुदृढ बनाने के प्रलोभन में उसने संधि का प्रस्ताव लेकर नागू पंडित एवं नारायण पंडित को ~~को~~ जेंकिंस के पास भेजा । उनके प्रयत्नों से 27 मई 1816 ई० की अर्द्ध रात्रि में गुप्त रूप से नागू पंडित के निवास पर परसों जी भोंसला की ओर से संधि पत्र पर हस्ताक्षर किया गया ।[1] जिसके अनुसार अप्पा साहब ने निम्न शर्तें स्वीकार की :-

0 पैदल सेना की 6 पलटन तथा 1 पलटन अंग्रेजों की नागपुर में रखी जायेंगी, जिनका वार्षिक खर्च 7½ लाख रूपया अप्पा साहब स्वयं देगा ।

0 सैनिकों को समय पर वेतन न दिये जाने की स्थिति में उस राशि के बराबर अंग्रेजी सरकार को भू भाग दिया जायेगा ।

0 सहायक सेना की एक छावनी नर्मदा के किनारे बनायी जावेगी ।

0 नागो पंडित एवं नारायण पंडित को 25 हजार एवं 15 हजार रूपये वार्षिक पेन्शन की व्यवस्था की गयी ।[2]

यद्यपि इस संधि में अन्य शर्तें भी थी किन्तु उनका उल्लेख यहाँ नहीं किया जा रहा है ।

वस्तुत: इस संधि से एक तरफ जहाँ अप्पा साहब भोंसला को सदैव के लिए अंग्रेजों पर आश्रित होना पड़ा, वहीं भोंसला शासन और उसका राज्य पतनोन्मुख हो गया । इस संधि का प्रत्यक्ष प्रभाव गढ़ा मण्डला राज्य पर भी पड़ा अब गढ़ा मण्डला राज्य की

---

1. श्री_शुक्ल, इ०खं० पृ० 126
   काले या०मा०, ना०भो०ई० पृ० 267
   सिन्हा आर०एम०, दि_लास्ट_फेज, पृ० 21-22
2. श्री_शुक्ल, इ०खं० , पृ० 126
   सिन्हा एच०एन०ना०रेहिए, 3, 31, पृ० 53

सार्वभौम सत्ता भोंसलों से अंग्रेजों को हस्तान्तरण की प्रक्रिया में संलग्न हो गयी ।

यद्यपि प्रारम्भ में इस संधि को गुप्त रखा गया, किन्तु 1 जून 1816 ई॰ को इसे विधिवत घोषित कर दिया गया । निःसन्देह इस संधि के दुष्परिणाम आगे चलकर अप्पा साहब भोंसला को भुगतना पड़ा । इससे रघुजी भोंसला द्वितीय की नीतियों पर कुठाराघात हुआ । अतः अप्पा साहब की इस संधि का घोर विरोध होने लगा ।

भोंसला प्रशासन की किसी तरह अराजकता और अस्थिरता के मध्य खिसकते हुए समय काट रहा था कि तभी 1 फरवरी 1817 ई॰ को परसो जी भोंसला की मृत्यु हो गयी ।[1] यद्यपि अप्पा साहब इस समय नागपुर से बाहर गया हुआ था तथापि लोगों ने रघुजी भोंसला की मृत्यु की तरह परसों जी भोंसला की मृत्यु में भी अप्पा साहब का हाथ होने का आरोप लगाया, किन्तु उसकी सत्यता का कोई प्रमाण प्राप्त नहीं हुआ सिवाय नागो पंडित द्वारा जबानी कबूल किये जाने के ।[2]

इसके अतिरिक्त परसों भोंसला के समय में गढ़ा मण्डला के इतिहास की कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है ।

1· काले या·मा; <u>ना·भो·इ·</u>, पृ· 270
पी·आर·सी·,5, 230, पृ· 447
जेंकिन्स रिपोर्ट, पृ· 70
मेड्रन जे·डब्ल्यू·, <u>एडवेंचर्स आफ अप्पा साहब</u>, पृ· 3
2· मेंड्रन जे·डब्ल्यू·, <u>एडवेन्चर्स आफ अप्पा साहब</u>, पृ· 5
जेंकिंस रिपोर्ट, पृ· 72

अप्पा साहब भोंसला का अंग्रेजों से युद्ध :-

परसोजी भोंसला की मृत्यु के पश्चात एक मात्र अप्पा साहब ही नागपुर केसिंहासन का उत्तराधिकारी बचा था । अतः नागपुर वापस आकर उसने शासन कार्य की देखभाल प्रारम्भ कर दिया और 21 अप्रैल 1817 ई॰ को विधि विधान से अपना राज्याभिषेककरवाया और उसके वैधानिकता की पुष्टि के लिए अपना एक प्रतिनिधि खिल्लत लाने हेतु पूना भेजा ।[1]

उल्लेखनीय है कि सेना साहब सूबा की उपाधि धारण करने के लिए भोंसला राजाओं को पूना के पेशवा से "बस्त्र" [खिल्लत] प्राप्त करना अत्यावश्यक था ।

सम्भवः शीघ्र ही अप्पा साहब भोंसला को अपनी परतंत्रता का आभास हुआ साथ ही उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप भी । अतः उसने अंग्रेजों के प्रति कठोर व्यवहार करना शुरू कर दिया और सहायक संधि करवाने वाले मंत्री नागू एवं नारायण पंडित को पदच्युत कर दिया ।[2] उसने सादिक अली खां को दरबार में बुलवाकर सम्मानित किया ।[3] अब वह शासन संचालन में सादिक अली खां एवं रामचन्द्र बाघ ने सलाह मशविरा करने लगा ।

---

1. काले या॰मा॰,ना॰भो॰इ॰,पृ॰272
2. जेंकिंस रिपोर्ट,पृ,70
   मेडून जे॰डबल्यू,एडवेंचर्स आफ अप्पा साहब,पृ॰111
   श्री शुक्ल,इ॰खं॰पृ॰126
3. अखबार ड्योढ़ी राजा अप्पासाहब भोंसला,लाट ,13
   पृ॰2 [अप्रकाशित]

उक्त पंडित द्वय द्वारा यह सूचना जेंकिंस को दी गयी। जिससे अप्पा साहब भी उसकी कुदृष्टि का भाजन बन गया। इस परिवर्तन के अतिरिक्त जेकिन्स के रूष्ट होने का एक अन्य कारण भी था- उस समय अप्पा साहब की गतिविधियों की भिन्न भिन्न सूचनाए उसे मिल रही थी, जिनमें मई 1816 ई. की सहा. संधिका अवहेलना करके अन्य मराठा सरदारों से बात चीत करने का अरोप लगाया गया। अतः जेकिन्स ने नागपुर के आसपास अंग्रेजी सेनाओं का जाल बिछा दिया।[1]

नवंबर 1817 ई. में पूना से अप्पा साहब भोसला के लिए विधि "खिल्लत" भेजा गया। फलतः 24 नवम्बर 1817 ई. को एक भव्य समारोह करके अप्पा साहब ने सेना साहब सूबा की पदवी, वस्त्र धारण की। उल्लेखनीय है कि इस समारोह में उसने जेकिन्स को भी आमंत्रित किया था, किन्तु जेकिन्स समारोह में उपस्थित नहीं हुआ और अप्पा साहब को चेतावनी दी कि वह पूना से आये वस्त्र धारण न करें।[2] क्योंकि 5 नवम्बर 1817 ई. को पूना की सेना ने वहां के रेसीडेन्ट पर आक्रमण कर उसे भाग दिया था।[3] अतः अंग्रेज पूना वालों को अपना शत्रु समझते थे। तथापि अप्पा साहब ने जेकिन्स की चेतावनी को अस्वीकार कर अंग्रेजो की प्रत्यक्ष शत्रुता ग्रहण की। तदन्तर अपना विरोध प्रकट करते हुए 26 नवम्बर 1817 ई को मराठा सेनाओं ने सीतावर्ड़ी स्थित अंग्रेजी सेना पर आक्रमण कर दिया किन्तु प्रारम्भिक सफलता

---

1. काले, या. मा., ना. भो. इ. पृ. 272-73
2. वहीं
3. वही

के बाद 27 नवम्बर 1817 ई॰ की शाम को मराठा सेनाए पराजित हो गयी ।[1]

सीतावर्डी के युद्ध में यद्यपि अंग्रेजों के समक्ष मराठा सेनाओं को पराजित होना पड़ा किन्तु निःसन्देह यह अप्पा साहब की चेतना की जागृति एवं उसके शौर्य की प्रथम प्रस्तुति थी ।

अपनी पराजय के पश्चात अप्पा साहब ने अपने विवेक का उपयोग करते हुए इस घटना पर खेद प्रकट किया ।[2] जिससे कुछ समय के लिए युद्ध बन्द कर दिया गया परन्तु अंग्रेजों को अभी भी अप्पा साहब की कार्यप्रणाली पर सन्देह था ।

12 दिसम्बर 1817 ई॰ को जनरल डान्डरन एक विशाल सेना लेकर नागपुर पहुंचा और इसी के साथ युद्ध की प्रक्रिया पुनः प्रारम्भ हो गई । 16 दिसम्बर को मराठा प्रमुखों का अंग्रेजी सेना से एक मुठभेड़ हुई परन्तु सफलता असफलता के मध्य ही अप्पा साहब को विवश होकर जेंकिन्स के समक्षउपस्थित होना पड़ा और उसके शस्त्रों पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया । उसके शुभचिन्तक मनभट, नारायणराव, गणपत राव, रामचन्द्रबाध वगैरह अंग्रेजी सेना से युद्ध करते रहे । 30 दिसम्बर 1817 ई॰ को अंग्रेजों की सेना ने शहर पर अधिकार करके मनभट को बन्द बना लिया ।[3] इस प्रकार

1· जेकिन्स रिपोर्ट पृ॰ 70
मिश्र द्वारका प्रसाद, म॰प्र॰में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास पृ॰, 8-9 मेझ्न, जे॰डब्ल्यू॰, एडवेंचर्स आफ अप्पासाहब पृ॰ श्री शुक्ल, इ॰छ॰पृ॰ 126-28

2· जेकिन्स रिपोर्ट पृ॰ 70, मिश्र द्वा॰प्र॰ म॰प्र॰ में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास, पृ॰ 9

3 काले या॰मा॰, ना॰भो॰इ॰, पृ॰ 291, जेकिन्स रिपोर्ट पृ॰ 71
मेझ्न जे॰डब्ल्यू॰ एडवेचर्स आफ अप्पा साहब पृ॰ IV

भोसला के सैनिकों को पूर्ण पराजय का सा मना करना पड़ा ।

अंग्रेजो ने 6 जनवरी 1818 ई॰ को अप्पा साहब भोसला को एक संधि पत्र पर हस्ताक्षर[2] करने के लिए विवश किया । इस संधि के अनुसार नागपुर में अस्थायी सरकार की स्थापना की गयी तथा नर्मदा के उत्तर में गढ़ामण्डला प्रान्त एवं दक्खिनी प्रान्त के कुछ जिले अंग्रेजों को देना पड़ा । शासन संचालन अंग्रेजों के विश्वास पात्र मंत्रियों को सौपा गया ।

राजा अप्पा साहब को उसके परिवार सहित महल में रहने की अनुमति प्रदान की गयी किन्तु उसकी सुरक्षा का उत्तर दायित्व अंग्रेज सैनिकों को सौपा गया ।

इस प्रकार यद्यपि अप्पा साहब को राजा का पद पुनः प्रदान किया किन्तु वास्तविक रूप से शासन पर अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो गयी ।

<u>अप्पा साहब भोसला कैद</u> : पलायन

6 जनवरी 1818 ई॰ को अनेक कठोर शर्तों के साथ अप्पा साहब भोसला को पुनः गद्दी प्रदान की गयी । 9 जनवरी 1818 ई॰

1॰ जेकिन्स रिपोर्ट पृ॰ 7।

मेईन जे॰डब्ल्यू॰ एडवेन्चर्स आफ अप्पा साहब पृ॰ V

को अस्थायी सरकार का बोझ लिये हुए अप्पा साहब अपने महल में वापस लौटा परन्तु पूर्णत: अपमानित होकर वह अधिक दिनों तक अपने आपको इस स्थिति में नहीं रख सका और गुप्त रूप से गोंडों एवं प्रजा के प्रमुख सरदारों को अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए प्रोत्साहित करना आरम्भ कर दिया ।

यद्यपि 6 जनवरी की संधि द्वारा गढ़मण्डला पर अंग्रेजों को अधिकार सौंपने के लिए उसने आदेश दिया था परन्तु गुप्त रूप से अपने हरकारों चौरागढ मण्डला तथा धमोनी किला प्रमुखों को समपर्ण न करने का आदेश दिया ।[1]

इस तरह अप्पा साहब और अंग्रेजों के मध्य मतभेद बढ़ता गया । फलत: 15 मार्च 1818 ई॰ को केप्टन ब्राउन ने राजमहल में प्रवेश कर अप्पा साहब और उसके अनुयायियों को बन्दी बना लिया ।[2] तत्पश्चात उसे इलाहाबाद (प्रयाग) के किले में रखने की व्यवस्था की गयी । इसी प्रयोजन से केप्टन ब्राउन 3 मई 1818 ई॰ को उसे लेकर गुप्त रूप से इलाहाबाद के लिए प्रस्थान किया ।[3]

---

1. मेड्न जे॰ डब्ल्यू॰, एडवेंचर्स आफ अप्पा साहब पृ॰
2. काले या॰मा॰, ना॰भो॰इ॰पृ॰299
   सिन्हा आर॰एम॰, दि लास्ट फेज, पृ॰ 28
   मिश्र, द्वा॰प्र॰, म॰प्र॰ स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास, पृ॰12, जेकिन्स रिपोर्ट, पृ॰ 72
3. मिश्र, द्वा॰प्र॰, म॰प्र॰ में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास, पृ॰13
   काले, या॰मा॰ ना॰भो॰इ॰ पृ॰299

इधर नागपुर में अप्पा साहब की पत्नी उमाबाई ने बड़ी ही चतुराई एवं सावधानी से धन एवं हथियार देकर गंगासिंह के नेतृत्व में 16 सैनिक का एक दल भेजकर उसका पीछा करवाया। गंगासिंह ब्राउन की प्रगति का पता लगाते हुए आगे बबढ़ा और 5 मई को डोगर लाल में ब्राउन की सैनिक टुकड़ी से जा मिला और ब्राउन को अपने विश्वास में लेकर अप्पा साहब के रक्षक दल में शामिल हो गया। इस यात्रा के दौरान वह गुप्त से अप्पा साहब को आर्थिक सहयोग प्रदान करता रहा।[1]

12 मई 1818 ई. को जबलपुर के निकट रायपुर में ब्राउन ने अपना शिविर लगाया। इस शिविर में अप्पा साहब एक सैनिक के वेष में रात्रि 3 बजे (13 मई सुबह से पूर्व) अपने कर्मचारियों सहित पलायन करवाया। गंगा सिंह और उसके साथी पहले से एक निश्चित स्थान पर उसकी प्रतिक्षा कर रहे थे। सुबह होने तक अप्पा साहब भोसला अपने थोड़े से सैनिकों सहित महादेव पर्वत के जंगलों में विलीन हो गया।[2]

13 मई को केप्टन ब्राउन ने क्षमायाचना सहित उसके पलायन की सूचना जेकिन्स को भेजी आर रामचन्द्र वाध एवं नागू पंडित को लेकर 15 मई 1818 ई को जबलपुर पहुँचा।[3]

---

1. काले या.भो.न.इ.पृ.300
2. मिश्र द्वा.पृ., म.प्र.में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास पृ. 14
   काले या.मा.ना.भो.इ., पृ.300
   बर्टन आर.जी., दि मराठा एण्ड पिण्डारीवार पृ. 95
   पी.आर.सी. 5,236, पृ.456
3. पी.आर.सी., ब 5, पृ. 456

इस घटना के फलस्वरूप जेंकिन्स ने समस्त अंग्रेजी सेना के कमांडरों को सूचित किया और महादेव पर्वत के पूर्वोत्तर भाग में नाकाबन्दी की गयी, फिर भी अप्पा साहब को पकड़ न सके । अन्त में अप्पा साहब की जीवित या मृत्यु की वास्तविक सूचना देने के लिए । लाख रूपये का पुरस्कार घोषित किया गया ।[1]

महादेव के जंगलों में अप्पा साहब को स्थानीय लोगों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ उसने पंचमढ़ी के ठाकुर मोहन सिंह एवं हर्रई के राजा चैनशाह के सहयोग से एक बार पुन: अपना राज्य वापस लेने का प्रयास किया किन्तु मोहन सिंह एवं चैनशाह के पकड़ लिए जाने के फलस्वरूप उसे अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त न हो सकी । इसलिए वह आशीरगढ़ की ओर चला गया ।[2] तदन्तर अशीरगढ़ में भी पीछा किये जाने के कारण अप्पा साहब भूमिगत हो गया ।

भोंसला शासन का अवसान

दिसम्बर 1817 ई॰ में जब नागपुर में अंग्रेजों द्वारा भोंसला राजा अप्पा साहब के दु:खद भविष्य का निर्माण किया जा रहा था ठीक उसी समय उसके राज्य गढ़ा मण्डला पर भी अंग्रेजों द्वारा सत्ता अधिग्रहण के काले बादल छाये हुए थे । फलत: भोंसला शासन शनै: शनै: अपने अवसान की ओर अग्रसर था ।

पिन्डारियों के उन्मूलन के उद्देश्य से हार्डीमेन की सेनाएँ रीवा में एकत्रित थी । नागपुर की अराजकता पूर्ण स्थिति से प्रोत्साहित होकर उसने जबलपुर की ओर प्रस्थान किया और

1॰ पी॰आर॰सी॰,5,241, पृ॰ 460

2॰ काले या॰मा, ना॰भो॰इ॰पृ॰ 302-304

19 दिसम्बर 1817 ई. को जबलपुर पर आक्रमण कर दिया। स्थानीय भोंसला सैनिकों ने जिनकी संख्या लगभग 3 हजार थी, ब्रिटिश सेना का सामना किया किन्तु एक दिन के भीषण युद्ध के पश्चात मराठा सेना पराजित हो गयी। जबलपुर पर ब्रिटिश सेना ने कब्जा कर लिया[1] गढ़ा मण्डला का सूबेदार रामजी तांतिया भाग गया। 7 जनवरी 1818 ई. को जबलपुर में एक अस्थायी सरकार की स्थापना की गयी तथा व्यवस्था बनाये रखने के लिए रघुनाथ राव इंगलिया को जबलपुर का सूबेदार बनाया गया।[2]

5 जनवरी 1818 ई. को कर्नल मैकमोरीन के नेतृत्व में एक सेना ने श्रीनगर पर आक्रमण किया। उस समय सद्बाबा मराठा सरदार अपनीसेना सहित श्रीनगर में था उसने मैकमोरीन की सेना का सामना किया। अन्तत: मराठा सैनिकों को पराजित होना पड़ा।[3] इसके साथ ही गढ़ा मण्डला क्षेत्र के दो प्रमुख स्थानों पर अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो गयी।

जबलपुर के पश्चात हार्डिमेन ने विल्लेरी पर आक्रमण करने की योजना बनायी और अपनी सेना लेकर विलहरी पहुँच गया। वहाँ के किलेदार ने स्वेच्छा से बिना किसी तरह का प्रतिरोध किये किला हार्डिमेन को सौंप दिया।[4]

दिन प्रतिदिन गढ़ा मण्डला में भी भोंसला शासन का अन्त अपनी मंजिल की ओर तीव्रता से अग्रसित था। अप्रेल 1818

---

1. काले या.मा., <u>ना.भो.इ.</u>, पृ. 294, मेझन जे.डब्ल्यू., <u>एडवेंचर्स</u> आफ अप्पा साहब, पृ. 5, जबलपुर जि.ग. 1969, पृ. 88-89
2. सिंन्हा एच.एन., <u>ना0रे0रि0</u>, 3, 10-11, पृ. 10-12 जबलपुर जि.गजे. 1969, पृ. 89
3. नरसिंहपुर जि.गजे., 1971, पृ. 54
4. काले या.मा, ना.भो.इ.पृ. 295

ई॰ में ब्रिटिश सेना मण्डला को अपना निशाना बनाया । यह एक सुदृढ किला अपने तीन तरफ से नर्मदा एवं एक तरफ से खाईयों से सुरक्षित था । 18 अप्रेल 1818 ई॰ को जनरल मार्शल अपनी सेना सहित मण्डला पहुँचा उसने शहर को चारों ओर से घेर लिया 26 अप्रेल को मण्डला पर तोपों द्वारा आक्रमण आरम्भ किया गया । फलस्वरूप शहर में भगदड़ मच गयी । शहर की सुरक्षा हेतु बनाई गयी तटबन्दी का प्रमुख आनंद सिंह इस युद्ध में मारा गया । मण्डला में मराठा सैनिकों को बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ा । किला के अन्दर के लोगों ने मुख्य द्वार बन्द कर लिया । फलत: बाहर स्थित सेना के सैकड़ों लोग आसानी से मार दिये गये । 27 अप्रेल 1818 ई॰ को ब्रिटिशसेना ने मण्डला किला पर पूर्णत: अधिकार कर लिया । इस युद्ध में अंग्रेजों को बहुत सा गोला बारूद एवं 26 तोपे प्राप्त हुई ।[1] मुख्य किलेदार राय हजारी एवं गंगासिंह भागने का प्रयास करते हुए पकड़ लिए गये, अप्पा साहब भोंसला का गुप्त पत्र (किला को समर्पित न करने का आदेश स्वरूप) जिसे दिखाकर उन्होंने अपनी सफाई देते हुए क्षमा याचना की । अत: उनकी विवशता को समझते हुए उन्हें छोड़ दिया गया ।

चौरागढ़ का किला अभी भी सुरक्षित था किन्तु मार्च 1818 ई॰ से कर्नल मैकमोरीन की सेना ने उसे घेर रखा था । उसने कई बार चौरागढ के किलेदार खाण्डेराव को समर्पण करने का आदेश दिया किन्तु उसका पालन नहीं किया गया और मैकमोरीन जिसके सैनिकों की संख्या कुछ कम थी, उचित अवसर एवं और सेवा के आने की प्रतीक्षा कर रहा था । मई में उसे ब्रिगेडियर वाटसन की सेना के आने का समाचार प्राप्त हुआ । यह सूचना खाण्डेराव को भी

---

1. काले या॰मा॰, ना॰भो॰ई॰, पृ॰ 296-97
सिन्हा, एच॰एन॰ ना॰रे॰रि॰,4,पृ॰ 14

दी गयी । अतः 12 मई 1818 ई. की रात्रि में खाण्डेक्र राव हर्रई के राजा चेनशाह के साथ किला खाली करके भाग गया । 13 मई 1818 ई. को अँग्रेजों ने चौरागढ़ पर भी अधिकार कर लिया ।[1]

इस घटना से पूर्व मार्च 1818 ई. में जबकि नागपुर में अप्पा साहब भोंसला को बन्दी बनाने के साथ ही भोंसलावंश का इतिहास एक नये मोड़ पर जाकर स्थिर हो गया था ठीक उसी समय जनरल मार्शल ने धमोनी पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया था ।[2]

चौरागढ़ पर अधिकार करने के साथ ही सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला क्षेत्र पर अँग्रेजों की सार्वभौम सत्ता स्थापित हो गयी ।

इस क्षेत्र में प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार ने अस्थायी सरकार की नियुक्ति कर जबलपुर में एक कमिश्नरी की स्थापना की गयी । इसके दो वर्ष बाद ही 1820 ई. में सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला क्षेत्र एवं पेशवा के प्रदेश का कुछ भाग लेकर एक नवीन प्रान्त की रचना की गयी, जिसे गवर्नर जनरल के प्रतिनिधि के अधीन रखा गया ।[3]

इस प्रकार रघुजी भोंसला द्वितीय की मृत्यु के पश्चात भोंसला दरबार की आपसी फूट एवं अव्यवस्था के फलस्वरूप आगामी दो वर्ष के अन्दर ही सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला प्रदेश पर ब्रिटिश सरकार की सत्ता की स्थापना के साथ ही भोंसला शासन का अन्त हो गया ।

---

1. नरसिंहपुर जि.गज़े. पृ. 54-55
   काले या.मा., ना.भो.इ.पृ. 298
   सिन्हा एच.एन., ना.रे.रि., 3,38-40, पृ. 61-63
2. मेड्न जे.डब्ल्यू.एडवेंचर्स आफ अप्पा साहब, पृ. 6 जेंकिंस रिपोर्ट पृ.72
3. श्री शुक्ल, इ.ख.पृ. 130
   मिश्र द्वा.प्र., म.प्र.में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास, 31

भोंसलों की सत्ता का यह वृतान्त यहीं समाप्त नहीं होता है । शेष है अप्पा साहब के पलायन के पश्चात नागपुर दरबार की स्थिति । इसलिए क्षणिक दृष्टिपात आवश्यक है ।

नागपुर में अप्पा साहब के पश्चात 26 जून 1818 ई॰ को रघुजी भोंसला द्वितीय के अल्प व्यस्क नाती को अंग्रेजों ने अपने संरक्षण में गद्दी प्रदान की, जिसने रघुजी तृतीय का नाम धारण किया । बांकाबाई को उसकी संरक्षिका एवं गुजाबादादा को कार्यालयीन देखभाल का उत्तरदायित्व सौंपा गया है ।

सम्भवत: इस बीच अप्पा साहब ने अपनी भूमिगत स्थिति में ही स्थानीय शासकों से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया किन्तु उसे सफलता प्राप्त नहीं हो सकी । कालान्तर में उसके उत्तर काशी की ओर जाने की सूचना मिली । जहां कुछ दिन मंडी केर राजा के यहां व्यतीत र करने के बाद वह टेहरी गढ़वाल इत्यादि पर्वतीय क्षेत्रों में भ्रमण करता रहा ।[1]

अन्ततोगत्वा उसने महाराजा जोधपुर के यहां आश्रय प्राप्त किया । महाराजा जोधपुर ने उसका हार्दिक स्वागत किया ।[2] 1829 ई॰ में जोधपुर में अप्पा साहब के आश्रय की सूचना प्राप्त कर अंग्रेजों ने महाराजा से अप्पा साहब को सौंपने की मांग की, किन्तु महाराजा ने अप्पा साहब को उन्हें सौंपने से इन्कार करके अपनी सहृदयता का परिचय दिया ।

काले ने लिखा है कि महाराजा जोधपुर ने अप्पा साहब को अपने पास नजरबन्द कर रखा था किन्तु यह उचित प्रतीत नहीं होता है । उनके सन्दर्भ में महाराजा द्वारा कही गई निम्न

1· काले या·मा·, ना·भो·ई·पृ, 312

2· मिश्र द्वा·प्र·, म·प्र· में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास पृ· 8 21

पंक्तियाँ उनके हार्दिक सौहार्द का प्रमाण प्रस्तुत करती है :

आये हो शरण जान मानक महेश मोंको
मानता हूँ धन्य धन्य ऐसे अवसर में ।
लोक हित याही काज बाजत हैं क्षत्री हम
पाते अब सफल करेंगे भुजवर में ।
नागपुर नाथ जिन आपको अनाथ जान्यों
सवरे निमित्त कर दीनों सिर धर में ।
राखिहों सजल यों सुरेश सों बचाय कर
राख्यों हिय गिरि पुत्र सिन्धु ज्यों उदर में ।[1]

महाराजा जोधपुर के आश्रय में ही 15 जुलाई 1840 ई॰ को अप्पा साहब भोंसला की मृत्यु हो गयी ।

गढ़ा मण्डला राज्य में भोंसला शासन के अवसान का उल्लेख पिछले पृष्ठों पर किया गया है । अन्त में यही कहा जा सकता है कि अप्पा साहब भोंसला की मृत्यु के साथ ही भोंसला राजवंश के इतिहास में अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वाले महत्वाकांक्षी राजा का सत्तारूपी सूर्यअस्त हो गया और अंग्रेज निर्विघ्न नागपुर बरार एवं गढ़ा मण्डला की सत्ता के मालिक हो गये ।

=:: 0 : 0 : 0 ::=
==0==

1॰ मिश्र डा॰प्र॰, म॰प्र॰ में स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास, पृ॰ 21

अध्याय 8

अध्याय 8 प्रशासन

1780 ई. में सागर के बिसाजी चान्दोत्कर द्वारा मण्डला पर अधिकार करने के साथ ही गोंड़ों की सत्ता रूपी सूर्य सदैव के लिए अस्त हो गया था। उसके पश्चात् यद्यपि लगभग 38 वर्ष तक इस प्रदेश पर मराठों का अधिकार था, किन्तु इतने कम समय में ही गढ़ा मण्डला प्रदेश में दो प्रमुख राजवंशों अर्थात् पूना के पेशवा एवं नागपुर के भोंसला राजाओं की सत्ता को देखा और सहन किया, साथ ही अनेक राजाओं के उतार-चढ़ाव का भी कटु अनुभव किया था। शायद इसीलिए इतिहासकारों ने गढ़ा मण्डला में मराठा शासन काल को अस्थिरता का काल कहा है। तत्कालीन गढ़ा मण्डला प्रदेश में प्रशासन तंत्र कैसा था और उनमें कौन से परिवर्तन किये गये थे, इस संदर्भ में इतिहास के साक्ष्य लगभग मौन हैं। बहुत कम ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिनमें प्रशासनिक इकाईयों का विवरण मिलता हो।

अस्तु, मराठा शासन काल में गढ़ा मण्डला का प्रशासनिक इतिहास लगभग अन्धकारमय ही पाया जाता है।

प्रशासन तंत्र

पेशवा के प्रतिनिधि सागर के बालाजी गोविन्द खेर ने 1780 ई.[1]

---

1. शेजवलकर : ना.ब., II, पृ. 125.

में बिसाजी गोविन्द चान्दोरकर को भेजकर गढ़ा मण्डला पर अपना अधिकार कर लिया और मोरा जी विश्वनाथ को व्यवस्था बनाने के लिए वहां नियुक्त किया था । किन्तु शीघ्र ही मराठों के विरुद्ध गोंड़ों के विद्रोह में बिसाजी गोविन्द चान्दोरकर अपने भाई सहित मारा गया और तब 1784 ई. में मोरो विश्वनाथ डिंगनकर को सागर की ओर से विधिवत् गढ़ा मण्डला का सूबेदार नियुक्त किया गया । लगभग 15 वर्षों तक मोरो विश्वनाथ गढ़ा मण्डला का सूबेदार रहा । 1797 ई. में उसकी मृत्यु हो गयी उसके पश्चात् उसका पुत्र विश्वासराव डिंगनकर गढ़ा मण्डला का सूबेदार नियुक्त किया गया जिसने 1799 ई. तक गढ़ा मण्डला की सूबेदारी की । यह निर्विवाद है कि सूबेदार को प्रान्त के नागरिक एवं प्रशासनिक समस्त अधिकार प्रदान किये गये थे तथा वह स्वयं निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र था । दिवानी एवं फौजदारी मामलों का फैसला सूबेदार ही करता था । परन्तु जैसा कि लिखा गया है कि मोरो विश्वनाथ के समय से ही नागपुर में भोंसलों ने गढ़ा मण्डला को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया था उसके पश्चात् सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला आक्रमण और सुरक्षा के चक्रव्यूह में उलझ गया ।

ऐसा प्रतीत होता है कि पेशवा शासन के 17 वर्ष पूर्णतः प्रशासनिक अव्यवस्था का काल रहा होगा फलतः तत्कालीन सूबेदारों ने मात्र अपनी सुरक्षा करने में ही समय व्यतीत किया होगा । पेशवा शासन काल में इस क्षेत्र में नये पदों के निर्माण का उल्लेख नहीं मिलता है ।

1796 ई. में चौरागढ़[1] की सनद और 1797 ई. में गढ़ा मण्डला[2]

---

1. ग्रान्ट डफ : हिस्ट्री आफ दि मराठाज़, II, 1878, पृ. 290.
2. वही, पृ. 310 और 314.

के शेष प्रान्त को हस्तगत करने की अनुमति प्राप्त कर लगभग दो वर्ष के अन्तराल में नागपुर के रघुजी भोंसला द्वितीय ने सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला प्राप्त कर अपना अधिकार कर लिया और नाना घाटो को वहां का सूबेदार नियुक्त किया जिसने अपना मुख्यालय जबलपुर[1] बनाया था यहीं से गढ़ा मण्डला राज्य का संचालन करता था।

यद्यपि भोंसला के शासन काल में भी प्रशासन संबंधी विवरणों का अभाव पाया जाता है तथापि प्राप्त संक्षिप्त सूत्रों के आधार पर प्रशासन तंत्र के निम्न विवरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं -

केन्द्रीय शासन

यद्यपि गढ़ा मण्डला में प्रत्यक्ष रूप से किसी केन्द्रीय शासन की व्यवस्था नहीं थी तथापि यह निर्विवाद है कि गढ़ा मण्डला प्रान्त 1799 ई. से भोंसला राजाओं के अधीन था। ऐसी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता है कि उस पर केन्द्रीय सत्ता का अंकुश नहीं रहा होगा। निश्चित ही शासन संचालन में विशेष आदेश केन्द्रीय शासन द्वारा जारी किये जाते थे।

प्रशासन की सार्वभौम सत्ता भोंसला राजा के अधीन थी। वह राज्य का सर्वोपरि व्यक्ति था परन्तु उसे प्रशासन में सहयोग देने के लिए एक मंत्री परिषद की व्यवस्था भी थी जिसमें सर्वोपरि दिवान होता था, यह राज्य के प्रत्येक विभाग का प्रतिनिधित्व करता था। दिवान के अतिरिक्त फड़नवीस - वित्त विभाग का सचिव होता था।

---

1. कोलब्रुक : दि अर्ली यूरोपियन ट्रेवेलर्स इन दि नागपुर टेरिटोरिज, 1930, पृ. 215-16.

बरार पाण्ड्येय - यह राज्य की भूमि के प्रति उत्तरदायी होता था ।
चिटनबीस - राज्य में चिटनबीस सामान्य सचिव का कार्य करते थे ।
इसी तरह मुंशी विदेशी मामलों में सचिव का कार्य करते थे । सिक्नबीस राज मुद्रा की रख-रखाव करता था । उक्त सभी अधिकारी सामान्यत: एक ही परिवार के होते थे ।[1]

सरदफ्तर प्रमुख सैनिक अधिकारी होता था । इसके साथ मीर बक्शी को वेतन भुगतान का उत्तरदायित्व सौंपा गया था । इनके अतिरिक्त प्रान्तों में प्रमुख सूबेदार होता था । सूबेदार यह राजा की तरह प्रान्त में सेना का प्रमुख होता था तथा दिवानी के समस्त अधिकार उसे प्राप्त थे ।

प्रान्तीय शासन

रघुनाथ राव बाजी घाटगे उर्फ नाना घाटगे को रघुजी भोंसला द्वितीय की तरफ से गढ़ा मण्डला का सूबेदार नियुक्त करके उसे उस प्रान्त का सम्पूर्ण अधिकार दिया गया । नाना घाटगे ने जबलपुर को अपना मुख्यालय बनाया था और वहीं से सम्पूर्ण प्रान्त का शासन संचालन करता था । सूबेदार भोंसला राजा के राजस्व मांग की पूर्ति करने के पश्चात् अपनी योजनाएं बनाने एवं उसे क्रियान्वित करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र था ।[2]

---

1. शील, योगेन्द्र : हिस्ट्री आफ दि सी.पी. एण्ड बरार, 1917, पृ. 120

2. विल्स, सी.यू. : ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 200.

परगना और ग्राम प्रशासन :

सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला क्षेत्र को परगनों में विभाजित किया गया था और उन परगनों को ग्रामों में । परगना या ग्रामों की कोई निश्चित सीमा या आकार नहीं होती थी । वे अपनी भौगोलिक स्थिति के अनुसार पृथक-पृथक होते थे ।[1]

रबिन्द्र मिश्र संग्रह के कुछ अप्रकाशित दस्तावेजों में महालों का उल्लेख किया गया है किन्तु इनसे यह स्पष्ट नहीं होता है कि क्या परगना को ही महाल कहते थे या महाल कोई अन्य इकाई थी । उसी पत्र[2] में गढ़ा मण्डला प्रान्त में कुछ निम्न 21 महालों का विवरण प्राप्त होता है -

संस्थान गढ़ा मण्डला, नर्मदा के दक्षिणी क्षेत्र में - चौरागढ़, छुमा, बच्या, बढ़िया एवं हवेली कुल 5 तथा नर्मदा के उत्तर में - गढ़ा, मफौली, कटंगी, पंचल, बोरखल कनूर, गोसलपुर, सरौली, निवास, बेदरीवाज, बिल्हेरी, पाटन, सिहोरा, पनागर, बच्या, हवेली, रामगढ़ इत्यादि ।

परगना अधिकारी या कमाविशदार :

गोड़ शासन काल में प्रत्येक परगना प्रमुख एक जमींदार होता था जिसे देशमुख या देश पान्डेय कहा जाता था परन्तु मराठों ने इसमें परिवर्तन कर दिया । उन्होंने जमींदार को हटाकर उनके स्थान पर परगना प्रबन्धक की

---

1. जेंकिंस रिपोर्ट, पृ. 80

2. रविन्द्रनाथ मिश्र संग्रह : फाइल नं. 6, लि. B, देवास जूनीयर ब्रान्च, कुलकर्णी द्वितीय सेट, इंस्टालमेन्ट नं. 6, डाक्यूमेंट नं. 6

नियुक्ति की जिसे प्रारम्भ में हुजूर कहा गया किन्तु बाद में उसे कमाविशदार का नाम दिया गया ।[1] वह शासन के हिसाब का लेखा जोखा रखता था, सम्भवत: वह पहले मात्र मोहर्रिर कहलाता था ।

इस तरह प्रत्येक परगना एक कमाविशदार के अधीन होता था । जिसे 200) से 500) रूपये तक वार्षिक वेतन दिया जाता था ।[2] कमाविशदार अपने अपने क्षेत्र में विभिन्न कर्तव्य पूर्ण करते थे । इसका कर्तव्य किसानों के हितों का ध्यान देना पड़ता था । खेती के सुधार के उपाय करना उसका प्रमुख कर्तव्य था । उसे अपने परगना में नये उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देना और दिवानी तथा फौजदारी मामलों को निपटाना पड़ता था । कर का निर्धारण वही करता था इसलिए परगना में पुलिस बल पर भी उसी का नियंत्रण होता था । इसके साथ ही धार्मिक और सामाजिक मामले भी उसी के द्वारा तय किये जाते थे ।[3]

प्रत्येक परगना में कमाविशदार के सहयोग के लिए एक बरार पान्डेय और एक फड़नबीस रहा करते थे । बरार पान्डे को 100) से 400) रूपये तक वार्षिक वेतन दिया जाता था । इसके अतिरिक्त उसके अधीनस्थ प्रत्येक गांव से 2) रूपये मिलते थे । वह कृषि का लेखा जोखा रखता था ।

फड़नबीस सभी रसीदों एवं करों के भुगतान का लेखा जोखा रखता था । फड़नबीस को 100) से 250) रूपये तक वार्षिक वेतन दिया जाता था । उसे भी बरार पान्डे की तरह अधीनस्थ प्रत्येक गांव से 1) रू. मिलता था ।[4]

---

1. जैंकिन्स रिपोर्ट्स, पृ. 84
2. वही.
3. सेन, एस.एन. : एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम आफ दि मराठाज़, 1923, पृ. 224
4. जैंकिन्स रिपोर्ट्स, पृ. 84, 94.

ग्राम अधिकारी पटेल :

परगना के पश्चात् प्रत्येक गांव में बहुधा पटेल ग्राम अधिकारी होता था । वह शासन का प्रतिनिधि एवं कर वसूली के लिए जवाबदार होता था । साथ ही उस पर गांव के आन्तरिक प्रबन्ध की भी जवाबदारी होती थी । सामान्यत: जब तक वह अपना उत्तरदायित्व ईमानदारी से निभाता था तब तक वह अपने पद से नहीं हटाया जाता था । वह वंशानुगत नहीं होता था तथा उसका पद शासन की मर्जी पर निर्भर करता था । परन्तु उसका पद बेचा भी नहीं जाता था ।[1] यद्यपि एक वर्ष बाद ही उसे पद मुक्त करने का प्रावधान था किन्तु सामान्यत: पटेल वर्षों तक अपने पद पर बिना किसी परेशानी के बना रहता था । उसे पारिश्रमिक के रूप में शासकीय आय से 1/4 हिस्सा प्राप्त था ।[2] ग्राम पटेल शासन एवं किसानों के मध्य की कड़ी होता था ।

पंड्या :

ग्राम पटेलों के सहयोग के लिए पंड्या होता था वह गांव के एकाउन्टेंट का काम करता था । उसका पद भी पैतृक नहीं होता था । पंड्या को पटेल नियुक्त करते थे । बहुधा कुछ मामलों में पंड्या को कर मुक्त खेती की भूमि दी जाती थी अन्यथा 15) से 90) रूपये तक वार्षिक वेतन दिया जाता था ।[3]

---

1. जैंकिंस रिपोर्ट, पृ. 84
2. वही, पृ. 90
3. वही, पृ. 90

जोशी :

जोशी ज्योतिषी का छोटा रूप होता था। वह गांव की पंडिताई का कार्य करता था।

कोटवार :

यह गांव का चौकीदार होता था उस पर पूरे गांव के निगरानी की जिम्मेदारी होती थी।

कोटवारों के अतिरिक्त भूसक, गरपगारी, कारपेन्टर एवं हवलदार इत्यादि कर्मचारी होते थे जो गांव में ग्राम पटेल को सहयोग प्रदान करते थे।

राजस्व व्यवस्था :

1801 ई. में कोलब्रुक ने इसी क्षेत्र का भ्रमण किया था और तब उसने जबलपुर के समृद्धि शहर की प्रशंसा की थी।[1] जिससे यह प्रतीत होता है कि कम से कम गोंड़ शासन काल में गढ़ा मण्डला के राजाओं की राजस्व संबंधी नीति उदार थी।

परन्तु मराठों के सन्दर्भ में सार्वजनिक रूप से यह कहा गया है कि वे केवल रूपया लूटना ही अपना कर्त्तव्य समझते थे। भोंसला शासन के समय में जनता को करों का अत्यधिक भार सहना पड़ा। ऐसा प्रतीत होता है कि कर की कोई

---

1. दि अर्ली यूरोपियन ट्रेवेलर्स इन दि नागपुर टैरिटरीज़, पृ. 215-26.

सीमा नहीं थी और न ही कोई निर्धारित कर था । स्थानीय परगना अधिकारी अथवा कमाविशदार और उसके अधीनस्थ पटेल की इच्छा पर निर्भर करता था कि वह कितना कर ले ।

जेंकिन्स रिपोर्ट[1] के अनुसार यद्यपि मोंसला शासन काल से निम्नलिखित करों का विवरण मिलता है :-

(1) शहर की चुंगी कर :

यह कर व्यापारियों को शहर में सामग्री ले जाने पर देना पड़ता था ।

(2) हुक्म हासिल :

यह कर नगर के निवासियों को देना पड़ता था जिसके अन्तर्गत यातायात, आयात एवं निर्यातक माल शामिल थे ।

(3) गुड़ किराना :

केवल निर्यात कर था जो अनाज इत्यादि के रूप में लिया जाता था परन्तु रघुजी मोंसला द्वितीय ने उसे नकद रूप में लेने का आदेश दिया था ।

(4) पैसरू एवं निकासू :

यह यातायात कर के रूप में लिया जाता था ।

(5) नुकास :

यह मवेशियों की बिक्री पर लिया जाता था ।

---

1. दि अर्ली यूरोपियन ट्रेवेलर्स इन दि नागपुर टेरिटरीज़, पृ. 121-25.

(6) कहुन दक्का :

यह शादी विवाह में बंड बाजे शान शौकत इत्यादि की अनुमति के लिए लिया जाता था यह डेढ़ आना से लेकर 3) रूपया 4 आना तक स्थान एवं पार्टी के हिसाब से लिया जाता था ।

(7) गुर चौलई :

यह घोड़ों एवं गुलामों की बिक्री पर सामान्यत: 25 प्रतिशत के हिसाब से लिया जाता था ।

(8) पकदम :

यह कर विधवा महिलाओं के पुर्नविवाह पर लिया जाता था जो उस जाति के अनुसार होता था ।

(9) कल्लावार पट्टी :

यह कर व्याज का धन्धा करने वाले सर्राफों से लिया जाता था ।

(10) मेहर दलाली :

यह एक जाति विशेष के दलालों पर लगाया जाता था ।

(11) तम्बाखू कोठी एवं नाश कोठी :

इसके अन्तर्गत तम्बाखू एवं गांजा जैसी मादक पदार्थों पर लिए जाने वाला कर सम्मिलित था ।

(12) ननोतीपुरी :

यह कर हाट-बाजार के दिन व्याज का धन्धा करने वालों से लिया जाता था ।

(13) चूना भट्टी :

यह कर चूना पत्थर की खदान पर उसकी सीमानुसार लिया जाता था ।

(14) गुलाल हंडी :

यह कर होली के त्यौहार पर गुलाल पर लिया जाता था ।

(15) मच्छी तालाब :

यह टैक्स मछली मारने पर लिया जाता था ।

(16) बैलों के कसाई :

यह कसाईयों से गोस्त की दुकान के अनुसार लिया जाता था ।

(17) बेगाद कौठी :

यह कर पोला उत्सव के अवसर पर पशुओं की सींगों में लगाये गये आभूषाणों पर लिया जाता था ।

(18) फूदी लकड़गंज :

यह कर फुटकर लकड़ी बेचने वालों की दुकान से लिया जाता था ।

(19) पंढ़री :

यह कर निवासी मकानों पर लिया जाता था ।

(20) मंडवा थाल :

यह स्थायी मकान जो विवाह के उपयोग में लाये जाते थे तथा पंडरी कर नहीं देते थे उनसे लिया जाता था ।

(21) घर कौस्टी :

यह कर कौस्टियों के मकानों पर लिया जाता था जो लोग पंडरी नहीं देते थे ।

(22) बैठक दुकान :

यह कर छोटी अस्थायी दुकानों से लिया जाता था ।

(23) तेलफुटी :

यह तेल की दुकानों से लिया जाने वाला कर था ।

(24) तम्बाखू फुटी :

फुटकर तम्बाखू की दुकानों से लिया जाता था ।

इतना ही नहीं समाज में विधवाओं, लड़कियों एवं महिलाओं को बेचने की प्रथा थी और जो लोग ऐसा करते थे तो उन्हें खरीदी मूल्य का 1/4 भाग राज्य को देना पड़ता था ।[1]

(25) जुर्माना :

यह एक अनिर्धारित, अनिश्चित एवं सामान्य कर था । स्थानीय

---

1. सिन्हा, एच.एन. : ना.रे.रि., 4, पृ. 27.

अधिकारी द्वारा उसके अधीनस्थ कर्मचारियों या जिसका भी कोई कार्य गलत समझा जाये उसे जुर्माना देना पड़ता था । जुर्माने की कोई सीमा नहीं होती थी और न ही गलत कार्य का कोई लिखित मशविदा ही था । यह सब स्थानीय सूबेदार या कमावेशदार की इच्छाओं पर निर्भर करता था । अधिकतर सम्पन्न व्यक्तियों पर कुछ भी आरोप लगाकर उन्हें जुर्माना देने के लिए बाध्य कर दिया जाता था और जब तक वे व्यक्ति जुर्माना देना स्वीकार नहीं करते थे तब तक उन्हें हथकड़ी एवं बेड़ियों में जकड़ दिया जाता था । ऐसे ही कुछ उदाहरण[1] श्रीनगर के सूबेदार सादिक अली खां के समय में मिलते हैं ।

एक कानून गो की स्थिति अच्छी होने के साथ उसे रिश्वतखोरी का आरोप लगाकर 1000) रूपया का जुर्माना किया गया ।

भगवंत चौधरी नामक व्यक्ति पर मकान बनवाने के लिए 3000) रूपये जुर्माना किया गया ।

तथा मोहरोन पुरी गोसाई पर 6000) रूपया जुर्माना किया गया था । वह तालाब और मंदिर बनवा रहा था ।

यहां यदि हम कानून गो एवं भगवंत चौधरी की बात छोड़ दें क्योंकि सम्भव है कि कानून गो रिश्वत लेता रहा हो और भगवंत चौधरी बिना अनुमति के मकान बनवा रहा हो तब भी मोहरोनपुरी गोसाई पर लगाया गया जुर्माना निंदनीय है क्योंकि वह सार्वजनिक कल्याण के लिए कार्य कर रहा था । निश्चित ही इससे तत्कालीन राजस्व प्रणाली की कठोरता का परिचय प्राप्त होता है ।

इस प्रकार उपर्युक्त करों से गढ़ा मण्डला क्षेत्र की दयनीय स्थिति स्पष्ट हो जाती है जबकि प्रत्येक व्यक्ति करों के भार से पीड़ित था उसे अपने

---

1. नरसिंहपुर जिला गजेटियर : 1972, पृ. 52-53.

आवास, खाने वाले अनाज, मांस, मदिरा पशुोत्सव, त्यौहार, तीर्थ इत्यादि सभी पर कर देना पड़ता था । करों के भुगतान से कोई मुक्त नहीं हो सकता था यहां तक कि बिना कर दिये कोई पूजा नहीं कर सकता था, न खाना खा सकता था, न कपड़े पहन सकता था, किसी कपड़े पर छाप नहीं लगाया जा सकता था और न ही कोई मुद्रा भुनाई जा सकती थी ।[1]

भू-राजस्व एवं किसानों की स्थिति :

पूर्व में लिखा जा चुका है कि राजस्व पटेलों के द्वारा इकट्ठा किया जाता था जो शासन का प्रतिनिधि होता था । शासन पटेल से ही सौदा करता था उसका किसानों से प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं था । पटेल ही अपनी ओर से किसानों से मिलकर अपना स्वयं का प्रबन्ध करता था । इस तरह किसान पूर्णत: पटेल पर आश्रित रहते थे ।[2] फलत: पटेल इच्छानुसार अधिकतम कर वसूल करता था विशेष तौर से अपना हिस्सा बढ़ाने के लिए ।

किसानों को अपनी जायदाद रखने का अधिकार नहीं था तथा उनकी मिल्कियत का अधिकार भी सरकार से मान्य नहीं था । चूंकि भूमि को नीलाम करने की परम्परा थी । अत: पटेलों के द्वारा कोई भी किसान अपनी भूमि से वंचित किया जा सकता था यदि कोई अन्य किसान उससे अधिक रकम देता है । कई बार प्रशासन को नियमित रूप से कर अदा करने पर भी और कई पीढ़ियों तक उस खेत को जोतने पर किसान अपना अधिकार उस भूमि पर नहीं जता सकता था । सामान्यत: किसानों को एक वर्ष के लिए भूमि पटेलों द्वारा दी

---

1. जबलपुर गजेटियर , पृ. 87

2. वर्ड, आर.एम. : नोट्स आन दि सागर एण्ड नर्मदा टेरिटरीज़, 1834, पृ. 6.

जाती थी किन्तु प्रतिवर्ष उसका नवीनीकरण किया जाता था ।

लगान प्रत्येक तुली के लिए निश्चित थी जो कि भूमि के नाप-जोख के लिए निश्चित था । अनाज के बीज कितने खण्डी हों और कितनी भूमि पर बोई जाये ? गेहूं एवं चना प्रमुख अनाज माने जाते थे जिनकी पैदावार से भूमि की नाप की जाती थी । अलग-अलग समय में भिन्न प्रकार के माप निश्चित थे । सागर शासक के समय, एक तुली, सात खण्डी के बराबर होती थी और एक खण्डी अनाज ढाई एकड़ भूमि पर बोने के लिए पर्याप्त था ।[1] इसलिए एक तुली अनाज के लिए साढ़े सत्रह एकड़ भूमि का माप था, जिसकी लगान 30) रूपया प्रति वर्ष के लिए निर्धारित था ।

भोंसला शासन के अन्तर्गत एक तुली 5 खण्डी के बराबर मानी जाती थी जिसके लिए 12 एकड़ भूमि पर्याप्त होता था । और तब उसका लगान 25) रूपया वार्षिक लिया जाता था ।[2] सम्भवत: तुली का नया नाप 1811 ई. के पश्चात् लागू किया गया होगा जबकि भोंसला के द्वारा जबलपुर एवं पास के क्षेत्रों में भूमि की नाप जोख की गयी होगी ।

1811 ई. में भूमि की नाप जोख प्रारम्भ की गयी जो अंशत: पूरी हुई । मात्र रबी की फसलों के क्षेत्र में एवं खेतीहर क्षेत्र में ही यह नाप जोख की गयी थी । बाद में यह भूमि ` नपती ` कहलाने लगी एवं बिना नपी भूमि ` कुरथा ` कहलाती थी ।[3]

---

1. एक खण्डी = 20 कुरा, और एक कुरा - लगभग 5 से साढ़े तीन सियर के बराबर होता था तथा एक सियर 93 कि.ग्राम के बराबर होता था.
2. लैण्ड रेवन्यू सेटलमेंट रिपोर्ट आफ जबलपुर डिस्ट्रिक्ट, पृ. 27.
3. वही, पृ. 26

प्रारम्भ में भूमि पट्टे पर ही खेती करने के लिए दी गयी थी परन्तु तब उसका कोई निर्धारित माप नहीं होता था और उस पट्टे की समाप्ति पर ग्राम के सामान्य दर पर ही परगना का निर्धारण किया जाता था ।

किसी गांव से सरकार के राजस्व की मांग पिछले वर्ष के खेतिहर भूमि पर आधारित होती थी तथापि इसका कोई विशेष नियम नहीं था ।[1] क्योंकि अतिरिक्त लेवी के रूप में पट्टी लगाकर उसे बढ़ाया जा सकता था और लेवी कर सम्पूर्ण परगने पर लगाई जाती थी तथा कुछ समय बाद यही अतिरिक्त कर निर्धारण का स्थायी हिस्सा होता था - इस क्षेत्र में रघुजी द्वितीय ने अपने पूर्व शासकों से 130 प्रतिशत अधिक गुना कर वसूला था ।[2]

भू-राजस्व का वर्ष जून में प्रारम्भ होता था । अगस्त में आय और व्यय का विवरण प्रत्येक परगने के कमाविशदार को चालू वर्ष के लिए राजधानी से दिया जाता था । कमाविशदार पटेलों को सूचित करता था । भूमि का लगान दो किश्तों में वसूल किया जाता था । जिसका 3/4 हिस्सा सितम्बर-अक्टूबर और नवम्बर में तीन बराबर हिस्सों में एकत्र किया जाता था तथा शेष 1/4 हिस्सा फरवरी और मार्च में दो किश्तों में वसूल किया जाता था । पट्टियों को दिसम्बर में लगाया जाता था एवं राज्य के मांग का शेष 1/4 भाग के साथ वसूल किया जाता था । साहूकारों के हुण्डी के रूप में या फिर नकद के रूप में पटेल अपनी एकत्र राशि कमाविशदार के कार्यालय में जमा करते थे ।[3]

---

1. <u>जैंकिंस रिपोर्ट</u>, पृ. 87
2. वही, पृ. 89.
3. वही, पृ. 91-93.

रिचर्ड जैंकिंस के विवरणों से गढ़ा मण्डला में वंशानुगत जमींदारों की अधिकता प्रमाणित होती है। यह एक ऐसा वर्ग था जो अपना राजस्व शासन को बिना किसी दखल के जमा किया करता था परन्तु धीरे-धीरे जमींदारों के अधिकार ताल्लुकेदारों को दे दिये गये और जमींदारों को नये पट्टा या कार्य का टाइटल दिया गया, जिन्हें ऊबारी अधिकार कहते हैं। ऊबारी भोंसला शासकों द्वारा दिया गया जिसमें गांव के जमींदारों को गांव की समृद्धि की व्यवस्था करने एवं राजस्व जमा करने का निर्देश दिया गया था। इसके साथ ही किसानों की भलाई या नुकसान के कुछ अन्य नियम होते थे।

ताल्लुकेदारों को कुछ ताल्लुका निर्धारित कर दिये गये थे जो कुछ गांव मिलाकर बनता था जिनसे वह अपना धन तथा यथासम्भव अपने प्रतिनिधियों द्वारा उगाहते थे।

हमें भोंसला शासन के अनेक ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिनसे यह विदित होता है कि गढ़ा मण्डला में राजस्व की वसूली अत्यधिक अत्याचार के साथ की जाती थी। कालान्तर में गढ़ा मण्डला के पूर्वी हिस्से में कर वसूली असफल हो गयी थी। पटेल लोग अपनी पदवियों से प्रभावित हो गये थे क्योंकि उन्हें सरकार की ओर से सम्मान सूचक वस्त्र दिये जाते थे। ताकि किसी भी तरह से कर वसूल किया जा सके। इससे भोंसला शासन दिन-प्रति-दिन अलोकप्रिय होता गया। कालान्तर में लोगों से यह सुना जाता था कि ` कैसन घोंसली मचाये हो ` यहां घोसले का अभिप्राय भोंसला शासन से है।

इससे कर निर्धारण में नागपुर सरकार की निरंकुशता स्पष्टतया दृष्टिगोचर होती है। वास्तव में किसानों की दशा अत्यन्त दयनीय थी।

व्यापार एवं वाणिज्य :

गढ़ा मण्डला राज्य में व्यापार एवं वाणिज्य की स्थिति के संबंध में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। प्राय: अनाज, तेल, बीज और देशी वस्तुओं के अतिरिक्त कुछ मात्रा में लाख के निर्यात का उल्लेख अवश्य ही मिलता है किन्तु नमक दक्षिण-पश्चिमी राज्यों से आयात करना पड़ता था।[1]

शक्कर, मिर्च, गरममशाला एवं रेशम जैसी वस्तुएं मिर्जापुर एवं उत्तरी भारत से प्राप्त की जाती थी।

ऐसा प्रतीत होता है कि पदार्थों एवं पशुओं के अतिरिक्त व्यक्तियों का भी क्रय-विक्रय किया जाता था जिसे सामाजिक मान्यता प्राप्त थी। अधिकांशत: गरीब लोग अपनी लड़कियों एवं महिलाओं को दूसरों के हाथों बेचते थे जिससे प्राप्त राशि का 1/4 भाग सरकार को कर के रूप में दिया जाता था।[2]

जबलपुर से एक मार्ग नागपुर और दूसरा रीवा तथा मिर्जापुर को जाता था। प्रारम्भ में यही मार्ग व्यापारियों द्वारा प्रमुख रूप से उपयोग में लाया जाता था किन्तु कालान्तर में जबलपुर मार्ग पर पिण्डारियों एवं लुटेरों ने अपना अड्डा बना लिया जिससे व्यापारियों की सुरक्षा समाप्त हो गयी। अत: जबलपुर मार्ग का उपयोग कम कर दिया गया।

---

1. सील, योगेन्द्र : हिस्ट्री आफ दि सी.पी. एण्ड बरार, पृ. 122

2. वही, पृ. 126. सिन्हा, एच.एन. : ना.रे.री, 4, पृ. 27

3. जैंकिंस रिपोर्ट, पृ. 48

सामान लाने ले जाने में प्राय: बैलगाड़ियों का उपयोग किया जाता था जिनमें बैलों के साथ ही भैंसों का प्रयोग भी होता था ।[1]

बैंक प्रणाली :

मराठा शासन काल में गढ़ा मण्डला में हमें किसी बैंक की स्थापना का उल्लेख नहीं मिलता है । कोलब्रुक ने अपने यात्रा विवरण में जबलपुर में एक टकसाल का अवश्य ही उल्लेख किया है जिसमें बुन्देलखण्ड में प्रचलित बालाशाही नामक निम्न श्रेणी का टका ढाला जाता था ।[2]

प्रारम्भ में वित्त व्यवस्था सामान्य रूप से मंदिरों द्वारा की जाती थी जो एक तरह से बैंक का ही कार्य करते थे । वहां कोई लिखित गारन्टी नहीं ली जाती थी मात्र व्यक्ति की आवश्यकतानुसार उसकी पूर्ति कर दी जाती थी और उधार लेने वाला व्यक्ति निर्धारित ब्याज सहित समय-समय पर पैसा वापस करता था । मराठा शासन काल में यह कार्य जमींदार एवं बनिये भी करने लगे तब मंदिरों से पैसा उधार लेना लोगों ने बंद कर दिया । कालान्तर में साहूकार ही इस क्षेत्र में प्रभावशाली हो गये और मनमाना ब्याज की दर पर उधार देने लगे । ब्याज की दरें स्थान एवं व्यक्ति के अनुसार भिन्न-भिन्न होती थीं । सामान्यत: 25 प्रतिशत ब्याज पर उधार दिया जाता था और वह राशि रकम देते समय ही 25 प्रतिशत की दर से ब्याज के रूप में काट ली जाती थी । ऐसी स्थिति में उधार लेने वाले के हाथ में मात्र 75 प्रतिशत राशि ही होती थी ।

---

1. जेंकिंस रिपोर्ट, पृ. 50

2. दि अर्ली यूरोपियन ट्रेवेलर्स इन दि नागपुर टेरिटरीज़, पृ. 79.

उधार लेने की आवश्यकता बहुधा गरीब वर्ग को पड़ती थी । साहूकारों के अतिरिक्त पटेलों द्वारा भी अग्रिम राशि दी जाती थी किन्तु वे भी 25 प्रतिशत व्याज अग्रिम लेना नहीं भूलते थे । वास्तव में राज्य की आर्थिक स्थिति बहुत ही दयनीय थी और सर्वत्र भ्रष्टाचार तथा अव्यवस्था का राज था ।

सैनिक व्यवस्था :

यदि हम मराठों की पृष्ठभूमि को देखें तो यह पूर्णत: स्पष्ट होता है कि मराठों की जाति का गठन ही सैनिक सेवा से बनी है । सम्भवत: वे कुम्भी की वर्तमान जनसंख्या से उद्भूत हुए जो शस्त्र धारण कर शिवाजी के युद्ध प्रयाण के अनुगामी बने थे ।

गढ़ा मण्डला में प्रान्त सूबेदार ही प्रमुख सेना नायक था । उसके अधीन प्रान्त की रक्षा करने के लिए सेना रहती थी । इसके अतिरिक्त प्रत्येक परगनों सेनानायकों के अधीन एक-एक सैनिक टुकड़ियाँ रखी गयी थी । जिनमें पैदल रिसाला और घुड़सवार तथा कुछ बन्दूकें होती थीं । तथापि आवश्यकता पड़ने पर केन्द्र (नागपुर) से सैनिक सहायता प्राप्त की जाती थी । जैसा कि पिंडारियों के दमन के समय सादिक अली खाँ, अमृतराव पान्डुरंग, सखाराम बक्शी आदि के सैनिकों का उल्लेख किया गया है । प्रान्त में मण्डला, जबलपुर, पनागर, श्रीनगर, हवेली, बिलहरी, धामोनी, तेजगढ़, चौरागढ़, गाडरवारा, लाजी, देवरी इत्यादि प्रमुख सैनिक केन्द्र थे ।

मराठा शासन के प्रारंभिक 17 वर्ष के मध्य गढ़ा मण्डला क्षेत्र की सैनिक व्यवस्था सागर के सूबेदार के हाथ में थी । परन्तु 1799 ई. में इस

क्षेत्र पर नागपुर के भोंसला का अधिकार होते ही परिस्थितियां परिवर्तित हो गयी । फलत: सम्पूर्ण क्षेत्र की सुरक्षा का उत्तरदायित्व रघुजी भोंसला द्वितीय के हाथों में हस्तान्तरित हो गया । जिसकी सेना में विट्ठल बल्लाल, सादिक अली खां, अमृतराव पान्डुरंग, बेनीसिंह, रघुनाथराव घाटगे, हैदर अली बक्शी, सर्जेराव घाटगे एवं सखाराम बक्शी इत्यादि प्रमुख सैना नायक थे ।

बिल्स ने लिखा है कि मराठा प्रशासन के अन्तर्गत रघुजी भोंसला द्वितीय की सैनिक व्यवस्था अपने चरम बिन्दु पर पहुंच गयी थी । उसके पास 25 हजार पैदल सैनिक (जिनमें 11 हजार नियमित सैनिक) तथा 4 हजार मुस्लिम एवं 18 हजार तथा 90 तोपें युद्ध क्षेत्र में कार्यरत थी ।[1] उसकी सेना में प्राय: राजपूत एवं मुसलमान थे तथापि कुछ ब्राह्मण एवं अन्य जाति के लोग भी सैना में कार्य करते थे ।[2]

सेना नायक अपनी एक टुकड़ी के साथ ही सेना में प्रवेश पाता था और तब उसे एक राजीनामा लिखकर देना पड़ता था जिसमें उसे 12 माह तक सेना में रहना अनिवार्य था परन्तु उसे मात्र 11 या 10 माह का वेतन यथा सुलभ दिया जाता था । साथ ही यह शर्त होती थी कि वह युद्ध के समय न तो बगावत कर सकता था और न ही वेतन की मांग । युद्ध में किसी प्रकार का अवकाश भी नहीं दिया जाता था ।[3]

---

1. ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 187
2. सिन्हा, आर.एम. : दि लास्ट फेज, पृ. 45
3. ब्रिटिश रिलेशन्स, पृ. 191-92

इसके बावजूद भी सेना की स्थिति संतोषजनक नहीं थी । सैनिकों को महिनों से वेतन नहीं दिया जाता था । फलत: कई बार प्रशासन को सैनिकों के बगावत का सामना करना पड़ता था । जैसा कि अध्याय 6 में चौरागढ़ एवं सखाराम के सैनिकों का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है ।

न्याय व्यवस्था :

प्रान्तों में न्याय व्यवस्था का कोई लिखित प्रारूप या परिभाषा नहीं थी । यद्यपि केन्द्र में राजकीय न्यायालय की व्यवस्था थी किन्तु प्रान्तों में कमाविशदार एवं पटेल ही न्याय करते थे । कमाविशदार अपनी इच्छानुसार अपने अधीनस्थ कर्मचारियों का सहयोग लेता था । कमाविशदार या तो स्वयं निर्णय लेते थे या आवश्यकतानुसार पंचायत बुलाते थे । पटेलों को दिवानी मामलों में निर्णय देने का अधिकार नहीं था किन्तु ऐसे प्रकरणों में वह ग्राम के सम्मानित व्यक्तियों की एक पंचायत जुटा सकता था ।[1]

ग्राम में पटेल तथा जनता द्वारा संयुक्त रूप से चुना गया एक महाजन भी होता था जो पटेल एवं ग्रामवासियों के आपसी झगड़ों को निपटाता था । कुछ जातियों के प्रमुख सेठिया भी अपनी जातिगत विवादों को निपटाते थे ।

यद्यपि ग्रामीण पंचायतों के निर्णय न तो लेखबद्ध होता था और न ही सुव्यवस्थित, परन्तु अधिकारियों द्वारा किये गये निर्णयों की लेखबद्धता का उल्लेख मिलता है । किसी भी अधिकारी के निर्णय के विरुद्ध राजा के समक्ष अपील की जा सकती थी ।[2]

---

1. श्री शुक्ल : विविध खण्ड, पृ. 83

2. वही, पृ. 84

दण्ड स्वरूप अपराध के अनुसार कोड़े लगाना, जूता मारना अथवा जुर्माना लगाना सामान्य बात थी किन्तु हत्या, डकैती इत्यादि संगीन अपराध पर अंगुली काट देना, अंग-भंग करना, नाक कान काट देना तथा मृत्यु दण्ड का प्रावधान भी था ।

इस प्रकार न्याय प्रणाली का कोई आधारभूत सिद्धांत नहीं था । स्थानीय अधिकारी या न्यायकर्ता की इच्छाओं पर निर्भर करता था कि वह किस प्रकार का दण्ड दे ?

यद्यपि भोंसला शासन के न्याय प्रणाली में पंचायतों को कुछ सीमा तक स्थान प्राप्त था तथापि न्याय प्रणाली अत्यन्त व्यय साध्य प्रक्रिया थी ।

सरलता से किसी को न्याय मिलना सम्भव नहीं था अक्सर जीतने वाले से ` शुकराना ` तथा हारने वाले को ` जुर्माना ` अर्थ स्वरूप लिया जाता था । अत: विवशत: लोगों को राजसत्ता का आश्रय लेना पड़ता था ।

इस प्रकार गढ़ा मण्डला क्षेत्र में मराठा शासन काल में न्याय प्रणाली यद्यपि सरल थी किन्तु न्याय प्राप्त करने की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल थी । साधारण व्यक्ति को न्याय प्राप्त करना अत्यधिक कठिन था । फलत: जीवन-यापन की समस्या को देखते हुए उसे अनेक शोषणों को शिरोधार्य करना पड़ता था ।

जनसंख्या गणना :

मराठा शासन के अन्तर्गत जनसंख्या की रूपरेखा तैयार की जाती थी । जनगणना को मर्दुम-सुमारी एवं उसकी रूपरेखा को खानासुमारी कहा

जाता था । प्राय: प्रत्येक परगना में जाति एवं व्यवसाय हर कुटुम्ब के स्वामी का लिखा जाता था तथा विशिष्ट बातें शासन के अधिकारियों से पता चलती थी जबकि वे शासन की पंढरी वसूल करने का कार्य करते थे । इसमें गांव पटेल की प्रमुख भूमिका होती थी । जैंकिंस [1] ने 1819 ई. में जनगणना का आदेश दिया था ।

=:: o : o : o ::=

---

1. जैंकिंस रिपोर्ट, पृ. 10

अध्याय 9

अध्याय 9 समाज और संस्कृति

सामाजिक गठन :

किसी भी राज्य की उन्नति एवं समृद्धि का अनुमान उसकी सामाजिक संरचना एवं संस्कृति से ही लगाया जाता है। जैसा कि गुप्त काल एवं मुगल काल में स्वर्ण युग का उदाहरण दिया जाता है। वास्तव में तब भी शासन के मूल्यांकन का आधार तत्कालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियां ही थीं न कि राजनीतिक युद्ध।

किन्तु गढ़ा मण्डला में मराठा शासन के अन्तर्गत समाज की स्थिति कैसी थी यह कहना बहुत कठिन है। क्योंकि गढ़ा मण्डला का इतिहास लिखने वाले विद्वानों ने मराठा कालीन समाज एवं संस्कृति के पहलू को छूने का प्रयास नहीं किया है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि समकालीन ग्रन्थों में इस सन्दर्भ में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है और शायद लोगों ने यही सोचकर छोड़ दिया होगा कि इस क्षेत्र में वर्तमान में जो पिछड़ा स्वरूप है वह अपने अतीत में और भी अधिक पिछड़ा रहा होगा। तथापि यह निर्विवाद है कि आज के समाज का गठन उसकी नींव पर ही हुआ होगा जिसकी आधार-शिला न केवल आज वरन् अतीत के परिप्रेक्ष्य में ही रखी गयी थी।

गढ़ा मण्डला में भी समाज का गठन अन्य राज्यों से भिन्न नहीं था । समाज में दात्रिय ब्राह्मण वैश्य एवं शुद्र की अपनी अपनी भूमिकायें थी ।

पटेल गांव प्रमुख होता था । बहुधा पटेल सम्पन्न व्यक्ति को बनाया जाता था । अत: उसे न केवल शासकीय वरन् सामाजिक मान्यता भी प्राप्त थी । समाज में ब्राह्मणों का प्रमुख स्थान था । समाज के सभी कर्मकाण्डों एवं सामाजिक मान्यताओं को क्रियान्वित करना उनका प्रमुख कार्य था । ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जबकि मराठा शासन के प्रारम्भिक चरण में पंडितों को भूमि इत्यादि दान में दी जाती थी । पंच महाल दोत्र एवं देवरी में घोंढ़ दत्तात्रेय को लगान मुक्त जमीन पेशवा द्वारा दी गयी थी ।[1]

समाज में ब्राह्मण दात्रिय एवं वैश्य के अतिरिक्त शुद्रों एवं विशेष कर इस सम्पूर्ण दोत्र में आदिवासियों का अपना अलग समूह एवं सामाजिक मान्यताएं थी । उनके अपने पहान, मेहतो एवं पुजारी हुआ करते थे जो उनके सामाजिक मान्यताओं, अन्ध-विश्वासों, रूढ़ियों एवं कर्मकाण्डों को क्रियान्वित किया करते थे ।

सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज, परम्परायें एवं प्रथाओं पर आधारित था जो काल स्थान एवं परिस्थितियों पर निर्भर करता था । किसी दोत्र विशेष के लोगों का जीवन उस दोत्र की भौगोलिक परिस्थितियों एवं जलवायु पर निर्भर करता था ऐसी स्थिति में यह कहना कठिन है कि सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला दोत्र में एक जैसी ही सामाजिक जीवन एवं मान्यतायें थीं ।

---

1. सागर जि. गजे., पृ. 508

यदि शहरों को छोड़ दिया जाये तब लोग बहुधा समुदाय में रहना पसन्द करते थे। समुदाय जो समाज का एक अंग था सम्भवत: सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से बनाया गया था। संयुक्त परिवार प्रथा, परिवार की प्रमुख विशेषता थी।

जाति :

समाज में प्रत्येक जाति के लोगों का वर्चस्व था। क्षत्रिय, ब्राह्मण, कुर्मी, अहीर, लोहार, ढीमर, कंजर, कुम्हार, बढ़ई इत्यादि सभी जाति के लोग पाये जाते थे। पनागर आदि जैनियों का प्रमुख केन्द्र था किन्तु जातिगत मान्यतायें अत्यधिक जटिल थी जिसमें छुआछूत का प्रभाव अधिक था। यह प्रभाव न केवल गाँवों में वरन् शहर भी इससे अछूते नहीं थे। इतना ही नहीं इस सम्पूर्ण क्षेत्र में बाहुल्यता में पाये जाने वाली जाति विशेष के लोग आदिवासियों में भी अपने ही समाज में ऊँच-नीच एवं छुआछूत की परम्परा थी।

हिन्दू परिवारों के साथ ही मुसलमान भी इस क्षेत्र में पाये जाते थे और वर्तमान की तरह उनकी अपनी मान्यतायें थीं।

धार्मिक क्रियायें :

लगभग सभी तीज त्यौहार धूमधाम के साथ मनाया जाता था। होली दिवाली के अवसरों पर शासन की तरफ से कर लिया जाता था। तब भी लोगों की भावनायें कुंठित नहीं होती थी। कर के सन्दर्भ में पिछले अध्याय में स्पष्ट किया जा चुका है।

देवी-देवता :

देवी-देवतावों की मान्यताएं पूर्वत ही थीं । 1830 ई. में एनुगुला वीरा स्वामी ने इस क्षेत्र से होता हुआ काशी गया था । वह अपनी यात्रा में इस क्षेत्र का वर्णन करते हुए लिखा है कि प्रदेश में भगवान श्रीराम का विशेष महत्व था ।[1] श्रीराम के साथ ही कृष्ण, ब्रह्मा विष्णु एवं महेश की आराधना की जाती थी । देवताओं के अतिरिक्त दुर्गा देवी का विशेष महत्व था । वीरा स्वामी ने अपने वृतान्तों ने ` विन्ध वासिनी ` देवी का उल्लेख किया है । मुसलमान लोग मस्जिद में नमाज अदा करते थे और अपने त्यौहारों पर जलसों का प्रयोग करते थे एवं ताजिये निकालते थे । इनके अतिरिक्त गांव के डीह की पूजा की जाती थी जिन्हें प्रसन्न करने के लिए बलि देने की परम्परा भी सामाजिक मान्यतावों का एक अंग थी ।

प्रथा एवं परम्परायें :

परम्परावों एवं प्रथावों की स्थिति अत्याधिक विचित्र थी । कहीं-कहीं देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए मानव बलि की प्रथा भी थी । जिसे अपने शासन काल में रघुनाथ राव ने निषेध घोषित किया था । फलत: उसे अलोकप्रियता का सामना करना पड़ा था ।[2]

इसके अतिरिक्त अनेक स्थानों पर अपने पतियों के साथ स्त्रियों के

---

1. सतपथी, पी. : एनुगुला वीरा स्वामी जर्नल, पृ. 55-63

2. सागर जि. गजे., पृ. 61

सती होने का उल्लेख भी मिलता है ।

समाज में गरीब लोगों द्वारा अपनी स्त्रियों एवं लड़कियों को बेचने की परम्परा भी प्रचलित थी । विधवाओं एवं वेश्याओं को भी बेचने की प्रथा थी और उनकी विक्रय राशि का 1/4 भाग कर के रूप में लिया जाता था ।[1]

जैंकिंस लिखता है कि उस काल में सामाजिक परम्परायें इतनी मिश्रित हो गयी थी कि उनमें गोंड़, हिन्दू एवं मुसलमान सभी की विशेषताएं परिलक्षित होती थी ।

इसके साथ ही अंध विश्वास एवं रूढ़ियों का भी वर्चस्व था । जादू-टोने पर भी विश्वास किया जाता था और यह सब न केवल आदिवासियों तक ही सीमित था वरन् समाज के सम्भ्रान्त परिवार भी इससे अछूते नहीं थे । यहाँ तक कि भोंसला राजदरबार भी इसका शिकार हो चुका था । जैसा कि चिमणाबापू, रघुजी भोंसला द्वितीय एवं परसोजी भोंसला की मृत्यु के समय मांत्रिकों के प्रयोग का उल्लेख किया गया है ।

बाहर से आये लोग :

यदि वास्तविकता देखी जाय तो निश्चित ही यह मिलेगा कि गढ़ा मण्डला प्रान्त के मूल निवासी गोंड़ एवं आदिवासी लोग ही हैं । बाद में लोग अन्य प्रान्तों से विस्थापित होकर यहाँ आये और येन-केन प्रकारेण यहीं बस

---

1. सील, योगेन्द्र : हिस्ट्री आफ दि सी.पी. एण्ड बरार, पृ. 126

गये । जिनमें कुर्मी, पंडित इत्यादि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं । परन्तु कौन कब आया यह स्पष्ट नहीं है ।

इस क्षेत्र में मराठा शासन के दौरान ऐसे विवरण मिलते हैं जिनसे मराठा परिवारों के आने का उल्लेख मिलता है । प्रारंभिक चरण में जब बालाजी गोविन्द खेर ने बुन्देलखण्ड को अपना मुख्यालय बनाया तब विसाजी गोविन्द चान्दोरकर को सागर का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त किया गया था । उसने 21 वर्षों तक सागर का विधिवत प्रबन्ध करते हुए गढ़ा मण्डला प्रान्त को जीत कर सागर में मिला लिया था । तब अनेक विद्वान सैन्य अधिकारी, पुजारी, वैद्य, गायक एवं कवि सूबा सागर में आकर बसे थे और वहीं से धीरे धीरे गढ़ा मण्डला प्रान्त में भी बसते चले गये । आज भी जबलपुर, नरसिंहपुर एवं उसके आस-पास के क्षेत्रों में मराठी भाषी परिवार पाये जाते हैं ।

बाहर से आये लोगों में महाजनी डिंगनकर, लघाटे, सप्रे, मोघे, श्रीखण्डे, फड़नबीस, रिंगे और दूसरे महाराष्ट्रीयन परिवार इस क्षेत्र में बस गये ।[1] फलत: धीरे धीरे उनकी सभ्यता एवं संस्कृति का प्रभाव भी इस क्षेत्र पर पड़ा था ।

शिक्षा एवं संस्कृति :

शिक्षा के सन्दर्भ में यह क्षेत्र अत्यधिक पिछड़ा हुआ था । न केवल मराठा शासन काल में वरन् उसके पूर्व गोंड़ शासन में भी व्यवस्थित शिक्षा पद्धति का कोई उल्लेख नहीं मिलता है । मराठा शासन काल में पेशवा एवं भोंसला की सेनाएं सदैव युद्धरत रहीं और दोनों ही शासकों के मध्य क्षेत्र

---

1. बन्धारे, भा.रा. : बुन्देलखण्ड अन्डर दि मराठाज़, पार्ट 2, पृ. 69

परिवर्तन के कारण किसी प्रकार की शिक्षा पद्धति का अस्तित्व सम्भव नहीं था । तब सम्भवत: शिक्षा पंडितों के हाथों में केन्द्रित थी और शायद सभी को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार भी नहीं था । केवल भूस्वामियों एवं उच्च कुल के लोगों तथा ब्राह्मणों को ही शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्रदान किया जाता था वह भी गुरुओं एवं मौलवियों के हाथों में भी । इसके अतिरिक्त गांवों में एक कायस्थ एवं कुछ अन्य प्रमुख व्यक्ति शिक्षा देने का कार्य करते थे । तब तक शिक्षा की आश्रम पद्धति का अन्त हो चुका था ।

इस तरह यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि शिक्षा में यह प्रदेश पिछड़ा हुआ था । इस क्षेत्र पर अंग्रेजों के अधिकार के पश्चात् ही शिक्षा में कुछ सुधार सम्भव हो सका ।

भाषायें एवं बोलियां :

सम्पूर्ण गढ़ा मण्डला क्षेत्र में भाषाओं में भिन्नता पायी जाती थी । हिन्दी यद्यपि मुख्य भाषा थी परन्तु उसमें स्थानीयता का समावेश था ।[1] हिन्दी के साथ ही मराठी एवं फारसी भाषायें भी पायी जाती थी । राज्य की सीमान्तर बोलियां भी प्रचलित थी । जैसे - बघेली, बुन्देलखण्डी, गोंडी, छत्तीसगढ़ी, निमाणी इत्यादि । इस तरह सम्पूर्ण प्रान्त में एक भाषा या बोली का वर्चस्व न होकर उनमें अन्य भाषाओं के मिश्रण का पुट पाया जाता था ।

---

1. अखबार दरबार रघुजी भोंसला, लाट नं. 12 (अप्रकाशित)

रहन-सहन :

ऐसा प्रतीत होता है कि सादा एवं सरल जीवन व्यतीत करना ही लोगों का मुख्य उद्देश्य था। सम्भवत: उच्च वर्ग के लोग कुर्ता धोती एवं साफे का प्रयोग करते थे। इस क्षेत्र के अधिकारी भी अधिकांशत: सादे वेश-भूषा में पाये जाते थे। किन्तु विवाह एवं त्यौहार इत्यादि के अवसर पर भड़कीले कपड़ों का प्रयोग किया जाता था जिनमें कढ़ाई एवं जरी इत्यादि का काम किया गया होता था। ग्रामीण मजदूर वर्ग के लोग बहुधा मात्र आधे शरीर पर ही कपड़े पहनते थे। वह भी एक धोती कमर के नीचे तक। महिलाओं में साड़ी मुख्य रूप से पहनी जाती थी।

साहित्य :

यद्यपि इतिहासविदों ने गढ़ा मण्डला की साहित्यिक गतिविधियों को भी नकारा है। यह उचित नहीं है। अनेक ऐसे दृष्टान्त मिलते हैं जिनसे गढ़ा मण्डला क्षेत्र में समग्र साहित्य के विकास की कहानी हमें मिलती है।

मराठा शासन के प्रारंभिक चरण में ही हमें संस्कृत की कुछ कृतियों की रचना का विवरण मिलता है। संस्कृत के दिग्गज रूपनाथ झा न केवल एक विद्वान कवि थे वरन् एक महान विचारक भी थे। उन्होंने अपने ग्रन्थ `रामविजय महाकाव्य` और `गढेशनृप वर्णनम्` की रचना की थी।[1] सम्भवत: रामविजय महाकाव्य की रचना 1800 ई. के लगभग हुई थी।

---

1. मिश्र, सुरेश : गढ़ा के गोंड राज्य, पृ. 185

हिन्दी साहित्य जगत में कवि पद्माकर का नाम सर्वोपरि आता है । वह मराठा शासन के अमूल्य रत्न माने जाते थे । सागर में रघुनाथ राव विद्वानों का आश्रय दाता था । अत: गढ़ा मण्डला में मराठा शासन के प्रथम चरण में ही साहित्यिक गतिविधियों का वर्णन मिलता है । कवि पद्माकर के अतिरिक्त कुमार मणि, कृष्ण भट्ट और कलानीधि जैसे प्रसिद्ध साहित्यकार इस प्रदेश की महान विभूतियाँ थी ।[1]

इनमें पद्माकर जो कि रीति कालीन सुप्रसिद्ध कवि माने जाते हैं, का का जन्म 1810 ई. में सागर में हुआ और अपने युवा काल के काव्य रचना के समय वे अनेक राजाओं के यहाँ घूमघूम कर उनकी प्रशंसा के गीत लिखा करते थे । कालान्तर में वे रघुनाथराव के दरबार की शोभा बढ़ाने लगे थे । रघुनाथ राव ने पद्माकर की एक कविता से प्रसन्न होकर उसे 1 लाख रूपये का पुरस्कार दिया था ।[2]

इसके अतिरिक्त नरसिंहपुर के मौनी महाराज का उल्लेख हमें मिलता है, उन्होंने वीर रस एवं शांत रस की कवितायें लिखी थी । लगभग 1807 ई. में उनका निधन हुआ ।

दूसरी तरफ गढ़ा मण्डला के उत्तरकालीन मराठा शासकों में परसौंजी भोंसला विद्वानों एवं कवियों का आश्रयदाता था ।

संगीत एवं चित्र कला :

संगीत यद्यपि मंदिरों एवं मठों में पाया जाता था किन्तु इस काल में

---

1. श्री शुक्ल, वि. सं., पृ. 24

2. सागर जि. गजे., पृ. 61

उसे वहां से हटकर राजदरबार में सम्मान सूचक स्थान मिला । जबलपुर का गढ़ा स्थान पुष्टि मार्गियों का प्रमुख केन्द्र था, जो एक अच्छे गायक थे । इसी काल में श्री सुन्दरलाल जी मिश्र जिनका अधिकांश समय जबलपुर में व्यतीत होता था वे ध्रुपद के सुन्दर गायक थे । इसी तरह सागर के हीरालाल जी हार्मोनियम बजाने में निपुण माने जाते । पंडित सुन्दरलाल के पुत्र बिहारीलाल जी जबलपुर के महान संगीतज्ञ थे ।[1]

नागपुर में स्वयं रघुजी भोंसला द्वितीय संगीत का पारखी एवं संगीतज्ञों का आश्रयदाता था । स्वयं अच्छे स्वर में भजन करता था ।[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि मराठा शासकों को जितना अपनी प्रजा या प्रशासन से लगाव था उससे कहीं अधिक वे संगीत एवं कला में रुचि लेते थे । मराठा शासक बहुधा कला पारखी थे । संगीत के साथ ही उन्हें चित्र कला में भी विशेष रूची थी । सागर के सूबेदारों एवं नागपुर के भोंसलों के वाड़ों में अनेक चित्र लगाये गये थे परन्तु इन चित्रों में गढ़ा मण्डला क्षेत्र में किनका निर्माण किया गया था तथा उसकी शैली क्या थी यह स्पष्ट नहीं है । इनमें से 1860 ई. में अनेक चित्र अग्नि में जलकर नष्ट हो गये थे ।

भवन निर्माण :

भवन निर्माण के संबंध में भी गढ़ा मण्डला क्षेत्र अछूता नहीं था । यद्यपि नवीन भवनों के निर्माण की जानकारी बहुत कम मिलती है तथा इस

---

1. श्री शुक्ल, वि.सं., पृ. 201-02

2. वही, पृ. 202

क्षेत्र में अनेकों प्राचीन भवनों के संरक्षण एवं अनुरक्षण के अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं। बालाजी गोविन्द पंत ने सागर शहर की नींव रखकर एक तालाब बनवाया। इसके साथ ही उसने सागर में एक किले का निर्माण करवाया था। तदनन्तर विसाजी गोविन्द चान्दोरकर ने गढ़ा मण्डला जीतने से पूर्व सागर में किलेनुमा महल का निर्माण कराया था। तथा उसके साथ अनेक महल एवं तालाबों के निर्माण का वर्णन मिलता है। उसने 1762 ई. में सागर के महल की नींव रखी थी और सम्पूर्ण निर्माण कार्य 1780 ई. में पूर्ण किया गया था।[1] इसके साथ ही उसने महल के अहाते में महालक्ष्मी मंदिर का निर्माण किया गया जो विसाजी चान्दोरकर की आराध्य देवी थी।

इसके अतिरिक्त विनायका में मराठा सूबेदार विनायकराव ने एक किले का निर्माण करवाया था सम्भवत: उसी के नाम पर इस स्थान का नाम विनायका रखा गया।

समझा जाता है कि 18 वीं शताब्दी के अंतिम चरण में एक नवीन चेतना का संचार हुआ था। फलत: मराठा शासकों ने कला एवं धर्म को पुन: राजकीय प्रश्रय प्रदान किया। अत: खण्डहरों के रूप में बचे प्राचीन इमारतों का जीर्णोद्धार इस काल में अधिक किया गया। मराठा शासकों द्वारा रहली में पंढरी नाथ के मंदिर का निर्माण किया गया। 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में। इसके गर्भ गृह में काले पत्थर पर भगवान विठोबा की आकर्षक प्रतिमा है तथा इसकी सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि मंदिर के शिखर से सूर्य की

---

1. सूबेदार दफ्तर (अप्रकाशित)

प्रथम रश्मियां परावर्तित होकर विठोबा की प्रतिमा को प्रकाशित करती हैं।[1]

इसी तरह किशनगंज को किसी कृष्ण राव के द्वारा बसाने का उल्लेख मिलता है।[2] दमोह में दिवान जी का तालाब मराठा सूबेदार बालाजी दिवान द्वारा बनवाया गया था यहाँ उसकी स्त्री सती हुई थी। यहीं एक हजारी तालाब मराठों द्वारा ही बनवाया गया था।[3]

श्रीनगर में मराठों द्वारा तालाब, कुओं एवं बगीचे बनवाये गये थे।[4] भोंसला शासक द्वारा मारकन्डेय आश्रम के एक मंदिर के जीर्णोद्धार का उल्लेख मिलता है।[5]

इस प्रकार गढ़ा मण्डला में मराठा कालीन शासन के अन्तर्गत किसी न किसी रूप में भवन निर्माण कला को प्रोत्साहन प्रदान किया गया।

=:: 0 : 0 : 0 ::=

---

1. रायकवार, जी.एल. : रहली का सूर्य मंदिर, पृ. 37-38
2. दमोह जि. गजे., पृ. 71
3. हीरालाल : दमोह दीपक, पृ. 85
4. नरसिंहपुर जि. गजे., पृ. 455
5. अग्रवाल, रा.मा. : गढ़ा मण्डला के गोंड़ राजा, पृ. 223

परिशिष्ट

परिशिष्ट घटना तिथि क्रम

22 जनवरी, 1041 ई.	:	त्रिपुरी के राजा गांगेयदेव की मृत्यु (फ्लीट के अनुसार)
लगभग 1052 ई.	:	कर्ण का द्वितीय राज्याभिषेक
लगभग 1212 ई.	:	विजयसिंह के पराजय द्वारा बघेलखण्ड का कुछ प्रदेश छीना जाना
लगभग 1246-60 ई.	:	नासिरुद्दीन महमूद तथा उसके समानान्तर जयवर्धन II का अधिकार
लगभग 1287 ई.	:	प्रतिहार सामंत वाघदेव प्रशासक
लगभग 1309 ई.	:	खिल्जी सत्ता स्थापित
लगभग 1310 ई.	:	यादव राजा रामचन्द्र का आक्रमण
लगभग 1440 ई.	:	खर्जी का सिंहासना रोहण
लगभग 1460 ई.	:	गोरक्षदास का सिंहासना रोहण
लगभग 1480 ई.	:	संगीनदास का सिंहासना रोहण
लगभग 1500 ई.	:	अर्जुनदास का सिंहासना रोहण
लगभग 1510 ई.	:	बाम्हणदास का सिंहासना रोहण
लगभग 1543 ई.	:	संग्रामशाह की मृत्यु एवं दलपतिशाह का सिंहासना रोहण

लगभग 1550 ई.	:	दलपति शाह की मृत्यु
लगभग 1556-62 ई.	:	गढ़ा मण्डला पर बाजबहादुर का आक्रमण
लगभग 1564 ई.	:	गढ़ा मण्डला पर आसफ खाँ का आक्रमण
		चन्द्रशाह एवं मधुकरशाह, मुगल मंसबदार के अधीन शासक
लगभग 1586-87 ई.	:	प्रेमशाह सिंहासनारूढ़ हुआ
19 जून, 1617 ई.	:	प्रेमशाह ने माण्डू में जहाँगीर से मुलाकात की और उसे नजराना भेंट किया
1634 ई.	:	ओरछा के राजा जुझारसिंह का गढ़ा मण्डला पर आक्रमण
1635 ई.	:	हृदयशाह सिंहासनारूढ़
1651 ई.	:	जुझार सिंह के भाई पहाड़ सिंह का जागीरदार के रूप में चौरागढ़ आगमन एवं हृदयशाह का पलायन
1662 ई.	:	पहाड़ सिंह वापस दिल्ली बुलाया गया
1672 ई.	:	छत्रशाह सिंहासनारूढ़ हुआ
1684 ई.	:	छत्रशाह की मृत्यु
फरवरी, 1684 ई.	:	केशरीशाह राजा बना
		हरीसिंह का विद्रोह
1687 ई.	:	हरीसिंह की हत्या
		पहाड़ सिंह राजा एवं पलायन
		नरेन्द्र शाह सत्तारूढ़
1699 ई.	:	नरेन्द्रशाह द्वारा विद्रोह का दमन
1731 ई.	:	नरेन्द्रशाह की मृत्यु
		महाराजशाह सत्तारूढ़

1741 ई.	:	पेशवा का आक्रमण महाराजशाह की मृत्यु एवं शिवराजशाह का सिंहासना रोहण
1749 ई.	:	शिवराजशाह की मृत्यु दुर्जनशाह सिंहासना रूढ़ एवं उसकी हत्या
सितम्बर, 1749 ई.	:	निजामशाह सिंहासना रूढ़
1776 ई.	:	निजामशाह की मृत्यु एवं महिपालसिंह सिंहासना रूढ़, नरहरीशाह सिंहासना रूढ़
1780 ई.	:	बिसाजी चान्दोरकर का गढ़ा मण्डला पर अधिकार एवं गंगावीर गोंसाई, नरहरीशाह कैद एवं सुमेरशाह सिंहासना रूढ़
1782 ई.	:	नरहरीशाह पुन: सिंहासनारूढ़ एवं सुमेर शाह कैद, तेजगढ़ का युद्ध, गोंड़ों की पराजय, नरहरीशाह कैद
23 अगस्त, 1782 ई.	:	बिसाजी चान्दोरकर की मृत्यु
1783 ई.	:	नर्मदा के दक्षिण के 16 महाल की सनद् पेशवा द्वारा भोंसला को दी गयी
मई-जून, 1784 ई.	:	गढ़ा मण्डला पर मराठों का पूर्णत: अधिकार मोरो विश्वनाथ डिंगनकर सूबेदार नियुक्त
1785 ई.	:	मूधोजी भोंसला को गढ़ा मण्डला की सनद प्रदान की गयी
7 दिसम्बर, 1787 ई.	:	बिम्बाजी भोंसला की मृत्यु
19 मई, 1728 ई.	:	मुधोजी भोंसला की मृत्यु रघुजी भोंसला द्वितीय सिंहासना रूढ़

24 अप्रैल, 1789 ई.	:	गढ़ा मण्डला की नवीन सनद पेशवा ने भोंसला को प्रदान की
16 अगस्त, 1789 ई.	:	चिमणा बापू की मृत्यु
मार्च, 1795 ई.	:	खर्डा का युद्ध
16 अगस्त, 1795 ई.	:	रघुजी भोंसला ने गढ़ा मण्डला की नवीन सनद प्राप्त की
27 अक्टूबर, 1795 ई.	:	पेशवा माधवराव की मृत्यु
दिसम्बर, 1795 ई.	:	बाजीराव द्वितीय पेशवा
मार्च, 1797 ई.	:	नाना फड़नवीस द्वारा गढ़ा मण्डला की नवीन संधि
15 जुलाई, 1797 ई.	:	पेशवा बाजीराव द्वारा विधिवत संधिमान्य
17 जुलाई, 1797 ई.	:	रघुजी भोंसला का पूना से प्रस्थान
अक्टूबर-नवम्बर, 1799 ई.	:	गढ़ा मण्डला के सूबेदार मोरो विश्वनाथ की मृत्यु, उसका पुत्र विश्वास राव गढ़ा मण्डला का सूबेदार नियुक्त
दिसम्बर, 1798 ई.	:	कटंगी के निकट विश्वास राव डिंगनकर एवं भोंसला की सेना का युद्ध, विश्वासराव पराजित गढ़ा पर भोंसला का अधिकार
फरवरी, 1799 ई.	:	चौरागढ़ पर भोंसला का अधिकार
20 नवम्बर, 1799 ई.	:	मण्डला पर भोंसला का अधिकार
नवम्बर, 1799 ई.	:	पिण्डारी अमीर खा का सागर पर आक्रमण

दिसम्बर, 1799 ई.	:	तेजगढ़ एवं धामोनी पर भोंसला का अधिकार रघुनाथ राव बाजी घाटी गढ़ा मण्डला में भोंसला का सूबेदार नियुक्त
दिसम्बर, 1800 ई.	:	गढ़ा मण्डला में मर्दानसिंह बुन्देला का उपद्रव
दिसम्बर-जनवरी, 1803-4 ई.	:	अमीर खां का सागर पर पुन: आक्रमण
12 अक्टूबर, 1809 ई.	:	अमीर खां का जबलपुर पर आक्रमण
17 नवम्बर, 1809 ई.	:	जबेरा में अमीर खां की पराजय
नवम्बर, 1811 ई.	:	करीम खां का उपद्रव उदाजी नायक बन्दी
1811 ई.	:	रघुजी भोंसला द्वितीय के समक्ष सैनिकों का धरना व्यंको जी भोंसला की मृत्यु
फरवरी, 1812 ई.	:	करीम खां के कैद से उदाजी नायक का पलायन
1 मार्च, 1816 ई.	:	अप्पा साहब की मां मैनाबाई का निधन
22 मार्च, 1816 ई.	:	रघुजी भोंसला द्वितीय की मृत्यु
[illegible]	:	परसोजी भोंसला सिंहासनारूढ़
11 अप्रैल, 1816 ई.	:	धर्मा जी भोंसला बन्दी
14 अप्रैल, 1816 ई.	:	अप्पा साहब भोंसला, परसोजी भोंसला का संरक्षक घोषित
5 मई, 1816 ई.	:	धर्मा जी भोंसला की हत्या
27 मई, 1816 ई.	:	गुप्त रूप से नागपुर की सहायक संधि गढ़ा मण्डला के अवसान का श्रीगणेश
जून, 1816 ई.	:	उक्त संधि विधिवत घोषित

1 फरवरी, 1817 ई.	:	परसौजी भौंसला की मृत्यु
21 अप्रैल, 1817 ई.	:	अप्पा साहब भौंसला का राज्याभिषेक
5 नवम्बर, 1817 ई.	:	पूना में अंग्रेज रेसीडेंट के निवास पर मराठा सेना का आक्रमण
24 नवम्बर, 1817 ई.	:	पूना द्वारा अप्पा साहब को सेना साहब सूबा का सम्मान प्रदान
26 नवम्बर, 1817 ई.	:	नागपुर में मराठा सेना का रेसीडेन्ट की सेना पर आक्रमण
27 नवम्बर, 1817 ई.	:	मराठा सेना की पराजय
19 दिसम्बर, 1817 ई.	:	जबलपुर पर ब्रिटिश सेना का अधिकार
30 दिसम्बर, 1817 ई.	:	ब्रिटिश सेना द्वारा नागपुर पर अधिकार मनभट कैद
5 जनवरी, 1818 ई.	:	श्रीनगर पर ब्रिटिश सेना का अधिकार
6 जनवरी, 1818 ई.	:	अप्पा साहब भौंसला द्वारा कठोर संधि पत्र पर हस्ताक्षर
जनवरी, 1818 ई.	:	बिलहरी पर अंग्रेजों का अधिकार
मार्च, 1818 ई.	:	धामोनी पर अंग्रेजों का अधिकार
15 मार्च, 1818 ई.	:	अप्पा साहब भौंसला गिरफ्तार
मार्च, 1818 ई.	:	ब्रिटिश सेना द्वारा चौरागढ़ का घेरा
18 अप्रैल, 1818 ई.	:	ब्रिटिश सेना द्वारा मण्डला पर आक्रमण
27 अप्रैल, 1818 ई.	:	मण्डला पर अंग्रेजों का अधिकार
3 मई, 1818 ई.	:	के. ब्राउन द्वारा अप्पा साहब को लेकर गुप्त रूप से इलाहाबाद के लिए प्रस्थान.

12 मई, 1818 ई. (12 मई की रात्रि में 3 बजे)	:	रायचूर शिविर से अप्पा साहब भोंसला का पलायन
13 मई, 1818 ई.	:	अंग्रेजों का चौरागढ़ पर अधिकार गढ़ा मण्डला राज्य का अवसान
26 जून, 1818 ई.	:	अंग्रेजों के संरक्षण में रघुजी भोंसला तृतीय का राज्याभिषेक
1820 ई.	:	गढ़ा मण्डला को नवनिर्मित ` सागर नर्मदा प्रदेश ` में मिलाया जाना
15 जुलाई, 1840 ई.	:	अप्पा साहब भोंसला की मृत्यु

=:: o : o : o ::=

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(अ) अप्रकाशित साधन :

फारसी :

1. अखबार राजा रघुजी भोंसला, लाट नं. 5
2. परचा अखबार, होशंगाबाद, लाट नं. 9
3. परचा अखबार, राजा रघुजी भोंसला, लाट नं. 12
4. परचा अखबार, ड्योढ़ी राजा भोंसला, लाट नं. 13
5. परचा अखबार दरबार राजा अप्पा साहब भोंसला, लाट नं. 32
6. परचा अखबार देवरही राजा जालिम सिंह, लाट नं. 75
7. परचा अखबार, होशंगाबाद, लाट नं. 81
8. औरंगाबादकर बखर

मराठी मोढी लिपि :

1. देवास जूनियर ब्रान्च संग्रह, कुलकर्णी द्वितीय सेट, इन्स्टालमेंट नं. 6, डाकूमेन्ट नं. 6
2. रविन्द्र मिश्र संग्रह, फाइल नं. 6 लाट नं. 6
3. सूबेदार दफ्तर.

प्रकाशित ग्रन्थ :

(ब) समकालीन ग्रन्थ :

संस्कृत :

ओझा, रूपनाथ : गढ़ेशनृप वर्णनम्, (सं.) जी. व्ही. मावे, नागपुर युनिवर्सिटी जर्नल, क्रमांक 6, 1940, पृ. 181-201

दीक्षित, लक्ष्मी प्रसाद : गजेन्द्र मोक्ष, ज.ए.सो. बं., उन्नीस, क्रं. 2, 1953, पृ. 142-43

मावे, जी. व्ही. (सं.) : गढ़ेशनृप वर्णनम् संग्रह श्लोक:, एनल्स आफ दि भंडारकर ओरियन्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, 28, 1947, पृ. 247-280

हिन्दी :

जायसी, मलिक मुहम्मद : पद्मावत, व्याख्या, वासुदेव अग्रवाल, सं. 2018 (द्वितीय संस्करण)

रामदास जी (सं.) : दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता, वेंकटेश्वर प्रेस, कल्याण

वाजपेयी, वीर : प्रेम दीपिका, 1898, जबलपुर

मराठी :

ओक, वामनदाजी : नागपुरकर भोंसल्यांच्या संबन्धाचे कागद पत्र, श. सं. 1811

काळे, यादव माधव : नागपुरकर भोंसल्यांचा इतिहास, 1979, द्वितीय आवृत्ति

कोलारकर, श.गो.(सं.) : रघुजी भोंसले दूसरे यांची पत्रे, 1794 से 1810 ई., 1986

-------- : (इंडिया आफिस लन्दन में रघुजी भोंसला द्वितीय के संग्रहित पत्रों का एक संकलन)

-------- : भवानी पंडिताची बखर, 1980

गुप्ते, काशीराव राजेश्वर : नागपुरकर भोंसल्याची बखर, 1936 (द्वितीय संस्करण)

डोंगरे, के.बी. (सं.) : चन्द्रचूड रिकार्ड्स, 1934

राजवाडे (सं.) : मराठ्यांचा इतिहासांची साधने पत्रे यादी वगैरह

लघाटे, आर.के. : गोविन्द पंत बुन्देलांची कैफियत

शेजवलकर (सं.) : नागपुर अफेयर्स, भाग 1, 1954

-------- : नागपुर अफेयर्स, भाग 2, 1959 (मेणवली दफ्तर पुणे का संकलन)

सरदेसाई, गो.स.(सं.) : सेलेक्शन फ्राम दि पेशवा दफ्तर, वा. 13

-------- : सेलेक्शन फ्राम दि पेशवा दफ्तर, वा. 14

-------- : सेलेक्शन फ्राम दि पेशवा दफ्तर, वा. 20

-------- : सेलेक्शन फ्राम दि पेशवा दफ्तर, वा. 22

-------- : सेलेक्शन फ्राम दि पेशवा दफ्तर, वा. 30

फारसी :

अबुल फजल : अकबर नामा, अनु. एच. बेवरिज.

अबुल फजल : आइन-इ-अकबरी, अनु. ब्लाचमेन और जैरेट, रा.ए.सो.ब., 1927

इलियट और डाउसन : हिस्ट्री आफ इंडिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स, 8, 1967

जहांगीर : जहांगीरनामा, अनु. बृजरत्नदास

-------- : जहांगीरनामा, अनु. मुंशी देवी प्रसाद

बदायूनी, अ.कादिर : मुन्तखब-उत-तवारिख, अनु. लो. 2, 1884

मुस्तैद खान, मु. साकी : मासिर-ए-आलमगीरी, अनु. यदुनाथ सरकार, 1947

लाहोरी, अ. हमीद : बादशाहनामा, बिब्लि इण्डि., 1867

शाह नवाज खान : मासिर-उल-उमरा, बिब्लि इण्डि. 1, जिल्द 1, 1941, जिल्द 2, 1952

तेलगू :

पिल्लई, श्रीनिवास : एनुगुला वीरास्वामीज जर्नल (काशी यात्रा), सं. पी. सतपती एवं बी. पुरूषोत्तम

अंग्रेजी :

एचिसन्, पी.यू. : ए कोलेक्शन आफ ट्रीटीज एंगेजमेंट एण्ड सनद्स, वाल्यूम 1, 1909

काले, यादव माधव : पूना रेसीडेन्सी कोरस्पान्डेंस, वा. 5, 1938 (नागपुर अफियर्स 1781-1820)

कोलब्रुक : अर्ली यूरोपियन ट्रेवेयर्ल्स इन दि नागपुर टेरिटरीज, 1930

चौकसे, आर.डी. : कैलेन्डर आफ पर्शियन कारेस्पान्डेंस, वाल्यूम 5, 1776-80, कलकत्ता, 1930

-------- : कैलेन्डर आफ पर्शियन कारेस्पान्डेंस, वाल्यूम 8, 1788-89, दिल्ली, 1953

जेंकिंस, रिचर्ड : रिपोर्ट आन दि टेरिटरीज आफ दि राजा आफ नागपुर, 1927

-------- : ए स्केच आफ दि हिस्ट्री आफ दि भोंसला फेमिली टेकेन फ्राम एन ओल्ड फैमिल डोमेस्टिक आफ दि पैलेस, 1811

फारेस्ट, जी.डब्ल्यू.(सं.) : सेलेक्शंस फ्राम दि स्टेट पेपर्स आफ दि गवर्नर जनरल आफ इंडिया, जिल्द 2, (वारेन हेस्टिंग्स), 1910

मेहन, जे.डब्लू.(सं.) : एडवेंचर्स आफ अप्पा साहब (1818 से 1840 ई.), 1939

सिन्हा, एच.एन.(सं.) : सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स, वाल्यूम 1, 1950

-------- : सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स, वाल्यूम 2, 1951-52.

-------- : सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स, वाल्यूम 3, 1953

-------- : सेलेक्शन्स फ्राम दि नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्ड्स, वाल्यूम 4, 1954

सिन्हा एण्ड अवस्थी : एलफिंस्टन कारेस्पान्डेंस, (1804-1808), 1961

(ख) आधुनिक ग्रन्थ :

हिन्दी :

अग्रवाल, राम भरोसे : गढ़ा मण्डला के गोंड राजा, 1961

केलकर, चिन्तामणि : मराठे और अंग्रेज, 1963

गुप्त, भगवानदास : महाराजा छत्रसाल बुन्देला, 1958

तिवारी, गोरेलाल : बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, सं. 1990

दिवाकर, कृष्ण : भोंसला दरबार के हिन्दी कवि सं. 2026

दुबे, सत्यनारायण : प्राचीन भारत का इतिहास

दीक्षित, एम.जी. : मध्यप्रदेश के पुरातत्व की रूपरेखा

पाठक, गणेशदत्त : गढ़ा मण्डला का पुरातन इतिहास, 1905

प्रमिला कुमार : मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन

वियाणी ब्रिजलाल (सं.) : श्री रविशंकर शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ, 1955

मिराशि, वामन विष्णु : कल्चुरी नरेश और उनका काल सं. 2022

✓मिश्र, सुरेश : गढ़ा के गोंड राज्य का उत्थान और पतन, 1986

मिश्र, द्वारका प्रसाद : मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, 1956

रायकवार, जी.एल. : रेहली का सूर्य मंदिर, 1984

लाल : खिल्जी वंश का इतिहास

~~शर्मा, एल.पी. : आधुनिक भारत, 1978-79~~ Purely a text Book meant for U.G.

शास्त्री, मिश्रीलाल : महाप्रभु प्राणनाथ, 1970

शुक्ल, प्रयागदत्त : मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले, सं. 1978

सरदेसाई, गोविन्द सखाराम	:	मराठों का नवीन इतिहास, भाग 2, 1707-1772 ई., द्वितीय संस्करण, 1964
--------	:	मराठों का नवीन इतिहास, भाग 3, 1772-1848, द्वितीय संस्करण, 1972
सिंह, जीतन	:	रीवा राज्य दर्पण
हीरालाल, रायबहादुर	:	मध्यप्रदेश का इतिहास, सं. 1996
--------	:	सागर सरोज, 1922
--------	:	मण्डला मयूख, 1928
--------	:	दमोह दीपक, 1917
--------	:	जबलपुर ज्योति,
श्रीवास्तव, भगवानदास एवं खरे, भगवानदास	:	बुन्देलों का इतिहास, 1982
श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल	:	मुगलकालीन भारत

मराठी :

बन्धारे, भा.रा.	:	संशोधन शिंपले, 1983
काले, यादव माधव	:	नागपुर प्रान्ताचा इतिहास, 1934
देशपान्डे, यशवंत खुशाल	:	विदर्भातील ऐतिहासिक लेख संग्रह, खण्ड 1, 1959
सरदेसाई, गोविन्द सखाराम	:	मराठी रियासत, 1740-49, सं. 1944
मिराशि, वामन विष्णु	:	संशोधन मुक्तावली, भाग 3, 1958

अँग्रेजी :

बन्धारे, बी.आर.	:	बुन्देलखण्ड अण्डर दि मराठाज़, 1984

अय्यर, टी.पी. : रामायण एण्ड लंका
क्रीजे, जी.बी. : एशियाज लैण्ड एण्ड पीपुल्स, 1951
कोलब्रुक : लाइफ आफ कोलब्रुक
ग्राट, डफ : हिस्ट्री आफ मराठाज़, वा. 2,
-------- : हिस्ट्री आफ मराठाज़, वा. 3,
चट्टोपाध्याय, एस. : अर्ली हिस्ट्री आफ नार्थ इंडिया
टेलर ग्रीफथ (सं.) : ज्याग्रफी इन दि ट्वन्तीयथ सेन्चुरी, 1960
डेविस, जी.सी. : एन हिस्टोरिकल एटलस आफ इंडियन पेनिंसुला
पाठक, वी.एस. : हिस्ट्री आफ दि शैव कल्ट्स इन नार्दन इंडिया
पीटर, हैलन : माइक्रो कास्मास आर ए लिटिल डिस्क्रीप्शन्स आफ दि ग्रेटवर्ल्ड, 1921
फ्लीट : कार्पस इन्स्क्रीप्शंस इंडिकेरम्
फैल : एशियाटिक रिसर्चेस
बनर्जी, अनिलचन्द्र : पेशवा माधव राव प्रथम, 1943
बर्ड, आर.एम. : नोट्स आन दि सागर एण्ड नर्मदा टेरिटरीज, 1834
बर्टन, आर.जी. : दि मराठा एण्ड पिन्डारी वार, 1975
मजूमदार, आर.सी. : दि मराठा सुप्रीमैसी, वा. 3, 1977
मालकम् : मेमायर आफ दि सेन्ट्रल इंडिया
मजूमदार, आर.सी. : दि एज आफ इम्पीरियल कन्नौज,
-------- : ऐनशियंट इंडिया
मुकर्जी, आर.के. : गुप्ता एम्पायर
रघुवीर सिंह : मालवा इन ट्रांजीशन, 1936
राय, बी.सी. : उड़ीसा अण्डर मराठाज, 1751-1803, 1960

वर्मा, शांति प्रसाद	:	ए स्टडी इन मराठा डिप्लोमेसी, 1956
लायड, एल.डब्ल्यू.	:	दि कान्टिनेन्ट आफ इंडिया, 1933
ला, बी.सी.	:	हिस्टालिकल ज्याग्राफी आफ एनशियंट इंडिया
वाड	:	ट्रीटिज एंगेजमेंट एण्ड सनद्स
विल्स, सी.यू.	:	दि राजगोंड महाराज आफ दि सतपुरा हिल्स, 1923
--------	:	ब्रिटिश रिलेशन्स विद दि नागपुर स्टेट इन दि एटिन्थ सेन्चुरी, 1926
सरकार, यदुनाथ	:	हिस्ट्री आफ औरंगजेब.
स्लीमैन, डब्ल्यू.एच.	:	रैम्बल्स एण्ड रिकालेक्शन्स आफ एन इंडियन आफिसीयल, 1844
--------	:	हिस्ट्री आफ गढ़ा मण्डला, 1837
सील, योगेन्द्र	:	हिस्ट्री आफ दि सी.पी.एण्ड बरार, 1917
सिन्हा, एच.एन.	:	राइज आफ दि पेशवाज, 1954
सिन्हा, आर.एम.	:	भोंसला आफ नागपुर : दि लास्टफेज, 1967
सेन, एस.एन.	:	एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम आफ दि मराठाज, 192
हीरालाल, राय बहादुर	:	डिस्क्रीप्टीव लिस्ट आफ दि इंस्क्रिप्शन्स इन दि सी.पी. एण्ड बरार, 1916
हेग, वुल्जे	:	केम्ब्रीज हिस्ट्री आफ इंडिया, जि. 3

संदर्भ ग्रन्थ :

एनसाइक्लोपिडिया आफ ब्रिटेनिका

सर्वे आफ इंडिया के मान चित्र.

पत्रिकाएं :

1. आर्कियालाजिकल सर्वे रिपोर्ट्स
2. इंडियन एण्टिक्वरी
3. एपिग्रापिका इंडिका
4. एनुअल रिपोर्ट आफ दि आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इंडिया
5. जर्नल आफ दि अमेरीकन ओरियन्टल सोसायटी, 7, 1860
6. जर्नल आफ दि एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल
7. जर्नल आफ दि न्युमिस्मेटिक सोसायटी आफ इंडिया
8. जर्नल आफ दि भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट
9. जर्नल आफ दि मध्यप्रदेश इतिहास परिषद, 1973-74
10. नागपुर युनिवर्सिटी जर्नल
11. भारत इतिहास संशोधक मण्डल, पुणे
12. विदर्भ ऐतिहासिक संशोधन मण्डल वार्षिकी, 1982, नागपुर
13. धर्मयुग 30 जनवरी, 1983, लेख डा. कैलाश नारद
14. धर्मयुग 6 फरवरी, 1983, लेख डा. कैलाश नारद
15. धर्मयुग 13 फरवरी, 1983, लेख डा. कैलाश नारद
16. धर्मयुग 20 फरवरी, 1983, लेख डा. कैलाश नारद
17. धर्मयुग 27 फरवरी, 1983, लेख डा. कैलाश नारद

गजेटियर एवं अन्य :

1. इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया, 1908
2. गजेटियर आफ दि सेन्ट्रल प्राविंसेस आफ इंडिया, ग्रान्ट डफ, 1870

3. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, मण्डला, 1912
4. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जबलपुर, 1969
5. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, नरसिंहपुर, 1972
6. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, सागर, 1970
7. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, दमोह, 1980
8. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, बिलासपुर, 1910
9. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, बालाघाट, 1907
10. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, होशंगाबाद
11. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, नागपुर
12. लेण्ड रेवन्यू सेटलमेंट रिपोर्ट आफ दि जबलपुर डिस्ट्रिक्ट, 1912
13. लेण्ड रेवन्यू सेटलमेंट रिपोर्ट आफ दि मण्डला डिस्ट्रिक्ट
14. लेण्ड रेवन्यू सेटलमेंट रिपोर्ट आफ दि नरसिंहपुर डिस्ट्रिक्ट

==:: o : o : o ::==



* रघुजी भोंसला प्रथम *



* चिमणा बापू भोसला *



* रघुजी भोंसला द्वितीय *



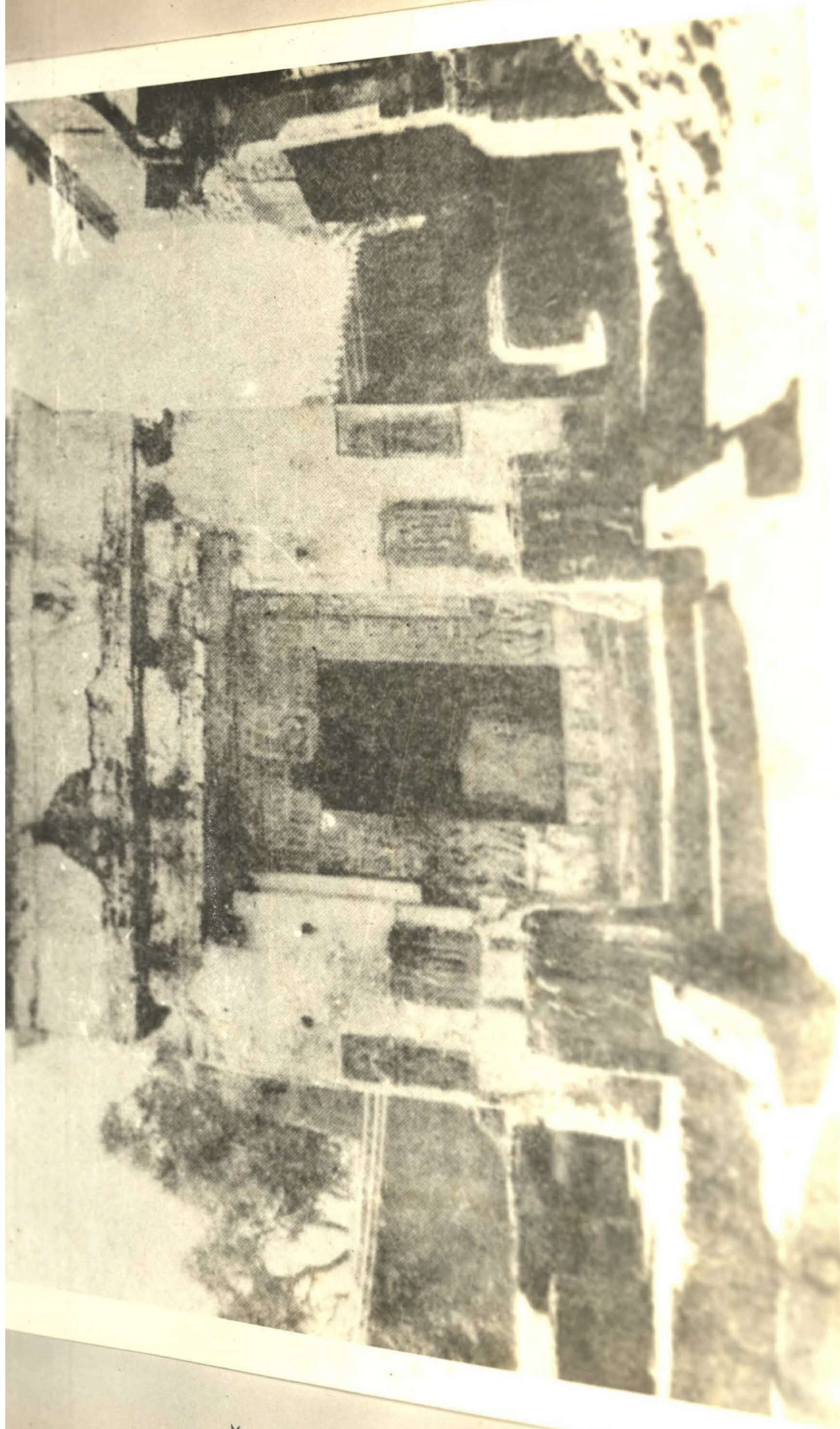
* अप्पा साहब भोंसला *



* विनायक राव चान्दोरकर *



* कवि पद्माकर *



* मुख्य द्वार रेहली सूर्य मंदिर



Navagrahas from Sun Temple, Rehli (now preserved in Saugar University Museum)



* महालक्ष्मी - सागर *
(विसाजी चान्दोरकर की ईष्टदेवी)